अपराधी कौन ?

(मौलिक सामाजिक उपन्यास)

लेखक

इन्द्र विद्यावाचस्पति

प्रकाशक

राजपाल एण्ड सन्ज़

काश्मीरी गेट

दिल्ली

अनुक्रम

१
बीजारोप

यारो ! आज संगमलाल के बाग पर चढ़ाई होगी । उस बाग का माली बड़ी मूँजी है । उस दिन जब हम उसके बाग में घुसे थे तब उसने बहुत गालियां दीं और लाठी से सिर फोड़ देने की धमकी दी । आज उसे मजा चखाया जाय ।

ठीक है । ठीक है । आज वहीं धावा हो ।

प्रस्ताव करने वाले का नाम उम्मेदसिंह था और अनुमोदन करने वालों के नाम थे बशीर, तिर्खू और गेंदा । उम्मेदसिंह की आयु लगभग बारह वर्ष की होगी, शेष तीनों लगभग उसी की उम्र के थे । यह चाण्डाल-चौकड़ी एक वृक्ष की छाया में बैठकर युद्ध की तैयारियां कर रही थी ।

बशीर बोला—भाई कल तो बड़ा ही मजा आया । जब हमने उस बनिये की दूकान पर जाकर जलेबी के थाल को उलटा दिया, तब वह संटी लेकर हम लोगों को मारने भागा । इतने में लाला की धोती की लांग खुल गई । जितने में वह लांग बांधता उतने में हम लोग हाथ और मुँह में जलेबियां भरकर भाग निकले । बस, लाला जी आँखें फाड़ते और गालियां बकते ही रह गये ।

तिर्खू ने कहा—'क्या कहते हो यार, उस वक्त उस लाला का पेट देखने ही के लायक था । मानो आटे की बोरी ऊपर नीचे झूल रही हो ।

उम्मेदसिंह ने गप्पों के सिलसिले को काटते हुए कहा—अब समय

खोना व्यर्थ है। सब अपने-अपने घर चलें, और कोई घण्टे भर में संगम-लाल के बाग के पिछवाड़े की ओर जो पीपल का पेड़ है उसके नीचे इकट्ठे हों। दोपहर के समय माली और मालिन दोनों ही चारपाइयों पर लेटकर खुर्राटे भरने लगते हैं। वही वक्त अमरूदों के पेड़ पर छापा मारने का है।

उम्मेदसिंह उस शैतान पार्टी का नेता था। वह सूझ और हिम्मत में अपने साथियों से बढ़ा-चढ़ा था। सबने उसकी सलाह को स्वीकार किया और अपने-अपने घरों की ओर रवाना हो गये। उम्मेदसिंह ने भी अपने घर की ओर कदम बढ़ाया। इस इतिहास का प्रारम्भ भारत की राजधानी दिल्ली की उस बस्ती से होता है, जिसका नाम सब्जीमंडी है। इन दिनों दिल्ली के बड़े-बड़े बाजार अपनी-अपनी विशेषताओं के लिये प्रसिद्ध थे। चांदनीचौक चौड़ाई के लिये, चावड़ी बाजार वेश्याओं के लिये, खारीबावली मिर्चों की धांस के लिये और सब्जीमंडी मच्छरों और बदबू के लिये मशहूर थे। ऐसी सब्जीमंडी की बस्ती के बहुत ही गन्दे हिस्से में एक छोटा-सा झोंपड़ा था, जिसमें उम्मेद सिंह और उसकी माँ रात में सोया करते और दिन में चूल्हा जलाकर रोटी बनाते थे।

छः वर्ष हुए, उम्मेदसिंह का बाप इन्फ्लुएन्जा की बीमारी से मर गया। वह एक मिल में काम करता था मेहनती आदमी था। दिन में दस घण्टे परिश्रम करके रुपया डेढ़ रुपया कमा लेता था। उसका नाम जवाहर-सिंह था। वह जात का चौहान राजपूत था। उम्मेदसिंह की माता का नाम अनारो था। जवाहरसिंह जो कुछ कमाकर लाता था वह अपनी औरत के हाथ पर रख देता था। दोनों की अच्छी निभती थी। हां, कभी-कभी, सातवें आठवें दिन झगड़ा हो जाता था, क्योंकि जिस दिन मिल की छुट्टी होती थी उससे पहली रात मजदूरों की तबाही का द्वार खुलता था। उस रात मजदूरों की पार्टियां शराब चढ़ाती थीं और जुआं खेलती थीं। जवाहरसिंह उन मजलिसों से अलग नहीं रह सकता था।

कुछ-न-कुछ खो ही आता था। अनारो बेचारी उस रात दुःख की घड़ियां बिताती थी। कभी-कभी लड़ती-झगड़ती भी, परन्तु क्या करती, बेचारी लाचार थी। स्वयं जितना मितव्यय कर सकती थी, करती थी। परिणाम यह था कि उनके गृहस्थ की गाड़ी किसी न किसी तरह चली जाती थी, यद्यपि बचता कुछ भी नहीं था। जो पैसा अनारो के प्रयत्न से बचता था, वह जवाहर की बोतल के साथ बह जाता था।

एक प्रातःकाल जवाहर देर तक चारपाई पर से न उठा। पहली रात उसने मजदूरों की मण्डली में शराब पीकर व्यतीत की थी। सुबह तीन बजे घर पर आया, और चारपाई पर पड़ गया। रात ठण्डी थी। हवा लग गई। सुबह उठा तो ज़ोर का ज्वर चढ़ा हुआ था और गला रुंधा हुआ था। दोपहर बाद मिल के डाक्टर ने आकर देखा तो बतलाया कि इन्फ्लुएन्जा हो गया है। टूटी हुई झोंपड़ी, थोड़ा कपड़ा और पथ्य की कमी, भला इन्फ्लुएजा का इलाज क्या होता? तीसरे दिन निमोनिया के चिह्न प्रकट हो गये और आठवें दिन प्राणों ने शरीर का साथ छोड़ दिया। बेचारी अनारो छः वर्ष के लड़के के साथ इस भयानक संसार में अकेली रह गई।

पहले तो अनारो को चारों ओर अन्धेरा दिखाई देने लगा। वह बहुत रोई, परन्तु कब तक रोती। अपना और बच्चे का पेट केवल आंसुओं से न भर सकी। जब बच्चा भूख से पीड़ित होकर 'मां भूख लगी है, रोटी दे' की रट लगाता तो बेचारी अनारो अपना दुख भूल जाती। कई दिनों तक रोज़गार की तलाश में घूमने के पीछे एक पड़ौसी ने सलाह दी कि सबसे अच्छी बात यह होगी कि जिस मिल में जवाहरसिंह काम करता था, उसी के पास जाकर नौकरी माँगो, सेक्रेटरी दयावान् आदमी है, शायद कोई काम दे दे। अनारो को यह सलाह पसन्द आई। वह उम्मेद की उँगली पकड़कर सेक्रेटरी के पास हाजिर हुई, और आँखों में आँसू भरकर कोई रोज़गार मांगा। सेक्रेटरी का दिल अच्छा था। जब तक मिल की गांठ पर आंच न पहुँचती हो, तब तक वह दया को नहीं छोड़ता

था। उसने अनारो को मिल में काम दिला दिया।

तब से अनारो प्रतिदिन काम पर जाती थी। कुछ दिन तक तो वह उम्मेद को साथ ले जाती रही, परन्तु यह बड़ा चंचल और शरारती लड़का था। बहुत दिक किया करता था। जब वह आठ वर्ष का हो गया तो अनारो उसे सुबह का कलेवा देकर कारखाने चली जाती, और पड़ोसिन से कह जाती कि जरा देखते रहना, उम्मेद इधर उधर न भाग जाय। बारह बजे कारखाना एक घण्टे के लिये बन्द होता था, उस समय अनारो घर आती और सुबह की बनाई हुई रोटियां खुद खाती और उम्मेद को भी खिलाती। वह एक बजे फिर मिल में चली जाती और शाम तक वहीं रहती। इतने समय तक उसकी राय में उम्मेद पड़ौसी के बच्चों के साथ खेला करता था। परन्तु उम्मेद क्या करता था ? वह मां के चले जाने पर घर का दरवाजा बन्द करके बाहर निकलता और बच्चों से खेलने में लग जाता, था। जब तक छोटा था, तब तक तो घर के पास ही खेला करता परन्तु आयु के साथ ही उसकी दुनिया भी बढ़ती गई ! आहिस्ता-आहिस्ता वह अपनी पार्टी के साथ दूर-दूर के दौरे लगाने लगा। कभी बौंटे पर तो कभी जीतगढ़ पर। कभी रोशनारा बाग में तो कभी बर्फखाने के सामने वाली झील के किनारे। सारांश यह कि शैतान बच्चों की वह पार्टी चारों ओर चक्कर लगाती और शरारतें करती थी। उम्मेद अपनी मण्डली के सब बच्चों में मजबूत और चलाक था, इसलिए उसे मण्डली का अगुआ बनने में देर न लगी। अनारो अपने बच्चे को मनुष्य-समाज के बनाये हुए किसी स्कूल में न भेज सकी, परन्तु कुदरत ने उसके लिए अपने स्कूल के द्वार खोल दिये। वातावरण ने उम्मेद को अपने ढांचे में ढालना आरम्भ कर दिया। चार वर्ष तक उम्मेदसिंह की स्वाभाविक शक्तियों पर गन्दे वातावरण की प्रतिक्रिया का जो परिणाम हुआ, उसकी झांकी हम अभी दिखा चुके हैं। वह एक ऐसी आवारा, शरारती, चण्डाल चौकड़ी का अगुआ बन गया, जिसने सारी सब्जीमण्डी पर धाक जमा रखी थी।

(२)

संगमलाल के बाग के अमरूद बहुत प्रसिद्ध थे। वह मीठे भी थे और नर्म भी। दिल्ली फीके फलों के लिए विख्यात है। बाजार में यदि कोई स्वादु फल बिकता हो तो समझ लो कि वह किसी बाहर की मण्डी से आया है। खास दिल्ली अत्यन्त नीरस है। उसे बाहर वाले ही रसदार बताते हैं। परन्तु संगमलाल के बाग में अमरूदों की पौध बाहर से लाकर लगाई गई थी। इस साल उस बाग का ठेका लिया था नत्थन माली ने। उसकी स्त्री और चार बच्चे बड़ी मेहनत से बाग की रखवाली करते थे। उनके जीवन का तो वही आधार था। अगर कभी बन्दर बाग पर टूट पड़ते और कुछ फलों को बिगाड़ जाते तो नत्थन के लिए तो मानो भूकम्प आ जाता। उसकी आशाओं का महल टूट जाता, क्योंकि इस वर्ष अमरूदों की अच्छी फसल को देखकर उसने लड़की की शादी करने का निश्चय कर लिया था।

मार्च का महीना था। दिन के दो बज चुके थे। माली खाना खाकर अपने झोंपड़े के सामने नीम के पेड़ के नीचे ऊँघ रहा था। मालिन भी घर के काम-काज से निपट कर आराम कर रही थी, परन्तु इस डर से कि कहीं छोटे बच्चे धूप में न भाग जायँ, लेटे ही लेटे पहरेदार का भी काम कर रही थी। ऊँघ के बीच-बीच में ललकारती जाती थी।

इतने में बाग के पश्चिमोत्तर कोने से ऐसी आवाज आई, मानो कोई आदमी अनार के पेड़ों पर तान कर ग़ुलेल मार रहा हो। उस बाग़ का बड़ा दरवाज़ा पश्चिम की ओर था जो बड़ी सड़क पर खुलता था। माली की झोंपड़ी उत्तर-पूर्व के कोने में थी और अमरूदों के पेड़ दक्षिण-पूर्व के कोने में। पश्चिमोत्तर कोने पर गुलेल की आवाज़ सुनकर घर के सब से चौकन्ने प्राणी 'मालिन' की ऊँघ टूट गई और उसने चिल्लाकर कहा—अरे देखो तो अमरूद के पेड़ पर कोई ग़ुलेल चला रहा है।

माली गहरी नींद में था। उसके कानों में पड़कर मालिन की आवाज़ ने ज़रा-सी खुजली तो की पर नींद न टूटी। करवट पलट कर फिर योग-समाधि में लीन हो गया। मालिन तेज़ थी, वह स्त्री ही क्या जो तेज़ न हो? वह पूरे जोर से चिल्लाई, 'अरे कब तक सोते रहोगे। मुँहजलों ने अनारों का सारा बाग उजाड़ दिया और तुम सो रहे हो। इस ललकार ने उसके कानों के द्वार मानो बलात् खोल दिये। वह आँखें मलता हुआ उठा और इधर-उधर ताकने लगा। मालिन ने फिर सचेत किया—अरे इधर-उधर क्या ताकते हो। अनारों की फसल को चोर उजाड़ गये। जाकर तो देखो। अब माली को पूरा होश आया। वह अमरूदों की क्यारियों की ओर भागा। उसके पीछे-पीछे अनार उजाड़ने वाले मुँहझौंसे के मुँह पर आग डालने की धमकी देती हुई मालिन चली, और मालिन के पीछे छोटे लल्ले को गोद में लेकर बड़ी लड़की रधिया भागी और रधिया के पीछे मां-मां चिल्लाता हुआ मुन्नू भागा। सब से छोटी चुन्नो बेचारी चारपाई पर पड़ी सो रही थी। अनारों की चिन्ता में उसे सब लोग भूल ही गये। इस प्रकार वह चतुरंगिणी सेना अपनी राजधानी को छोड़कर अनारों की रक्षा के लिए रवाना हुई।

उम्मेदसिंह बड़ा चतुर सेनापति था। उसने तिर्खू को अनारों की ओर इसीलिए भेजा था कि वह माली की उस चतुरंगिणी सेना का मुँह अपनी ओर मोड़ ले। तिर्खू ने ज्यों ही अपना कार्य सिद्ध होता देखा, त्यों ही बाग की दीवार पर कूद गया और दक्षिण-पूर्व कोने की ओर भागा। मैदान साफ पाकर उम्मेदसिंह और उसके सिपाहियों ने अमरूदों की क्यारी पर ज़ोरदार आक्रमण कर दिया। माली गिरे हुए अनारों को बीनने लगा तो मालिन ने गुलेल चलाने वालों के सातों पुरखाओं को कोसने का काम आरम्भ किया। जब चोर के सातों पुरखा समाप्त हो गये और क्रोध अभी शान्त न हुआ तो मालिन ने माली को आड़े हाथों लिया, 'न तुम सोते और न चोर अनारों पर टूटता। मैं तो

कह-कह कर थक गई, पर तुम्हारा आलस्य जाता ही नहीं, रोज़ दोपहर को सो जाते हो।' बेचारा माली कुछ तो नींद टूटने से दुःखी था, उस पर अनारों का नुकसान हो गया और अब ऊपर से श्रीमती मालिन ने बाणों की बौछार जारी कर दी। चारों ओर से आहत होकर बेचारा नत्थन घबरा गया और सिवा इसके कुछ कर नहीं सका कि रणक्षेत्र से पीठ दिखा कर भागे। टूटे हुए अनारों को झोली में लेकर वह अपनी झोंपड़ी की ओर चल दिया। मालिन भी विरोधी को भागता देखकर कुछ सन्तुष्ट हुई और रधिया की गोद से लल्लू को छीनकर माली के पीछे पीछे चल दी।

इतनी देर में अमरूदों का सफाया हो चुका था। शैतान-पार्टी ने चार थैलों में अमरूद भरे और दीवार पर से फांदने लगे। तिखू और गेंदा बाड़े से बाहर कूद चुके थे, बशीर दीवार पर खड़ा होकर थैला बाहर फेंक रहा था और उम्मेद अन्दर से थैला पकड़ा रहा था। अचानक बशीर के हाथ से थैला छूट गया। वह उसे बाहर फेंकना चाहता था, पर वह दीवार से अन्दर की ओर फिसल गया और बड़ी आवाज के साथ पत्तों पर गिरा। इस समय माली अपने झोंपड़े तक आ चुका था। उसने जो धमाके की आवाज सुनी, तो वह पकड़ो! पकड़ो! चिल्लाता हुआ उधर ही को दौड़ा।

उम्मेद ने जब माली के आने की आहट सुनी तो चौथे थैले को हाथ में लेकर दीवार पर चढ़ गया। माली ने दीवार पर बशीर और उम्मेद को देखा तो उन्हें पकड़ने के लिए ज़ोर से भागा, इतने में बशीर बाहर कूद गया और उम्मेद दीवार पर खड़ा रह गया। माली उसे अकेला देखकर उसकी ओर लपका, तो उम्मेद ने दोनों हाथों से ऊपर उठाकर अमरूदों का थैला उसके सिर पर पटक दिया। माली बेचारे के सिर पर मानो तोप का गोला पड़ा। वह थैले की चोट से आहत होकर 'हाय! मार दिया' की आवाज़ करता हुआ जमीन पर गिर पड़ा। समय पाकर उम्मेद बाड़े से बाहर कूद गया।

दुश्मन को घायल करके चारों साथियों ने लूट का माल बटोरा और चार बराबर-बराबर हिस्सों में बाँट लिया। यह उनका नित्य का नियम था। वह जो कुछ चोरी या लूट में पाते, उसे बराबर-बराबर बाँट लेते। उम्मेद बँटवारे में कभी अन्याय नहीं होने देता। आज भी सब ने बराबर-बराबर हिस्से बाँट लिए और अमरूदों की एक-एक गठरी बगल में दबाकर घर की ओर रवाना हो गये।

(३)

अनारो कपड़ा मिल के रीलखाने में काम करती थी। दिन चढ़े कारखाने में जाती और सूरज डूबने के समय वापिस चली आती। दोपहर के समय जब एक घण्टे की छुट्टी होती थी, तब झोंपड़ी में जाकर खाना खा जाती थी। इधर कई दिनों से उसकी सेहत खराब थी। शहर में खाँसी-बुखार का ज़ोर हो रहा था। अनारो को भी रोग ने आ दबाया। कारखाने से छुट्टी लेकर वह आजकल घर ही में पड़ी रहती थी। जिस समय उम्मेदसिंह अमरूद की गठरी बगल में दबाये घर पहुँचा उस समय उसकी बीमार माता चारपाई पर पड़ी खाँस रही थी। उम्मेद ने बहुत आहिस्ता से दरवाजा खोला कि आहट न हो, परन्तु पुराना दरवाजा हल्के से धक्के से भी चिल्ला उठा। आवाज़ सुन कर अनारो ने द्वार की ओर देखा। उम्मेद चाहता था कि चुपचाप अमरूदों की गठरी को झोंपड़ी के कोने में ऐसे ढककर रख दे कि मां को मालूम न हो, परन्तु अनारो ने अन्दर घुसते ही उसे देख लिया और अधमुई आवाज में पूछा—बेटा, यह क्या लाया है।

उम्मेद ने देखा कि पकड़ा गया। पहले दिल में आया कि कोई झूठी बात कहकर मां को तसल्ली दे दे, परन्तु वह था हिम्मती। भय ने अभी उसके हृदय पर राज्य नहीं जमाया था। उसने उत्तर दिया—मां, कुछ अमरूद हैं।

इतने अमरूद कहाँ से आ गये बेटा—अनारो ने क्षीण स्वर में पूछा। कई दिनों की बीमारी ने अनारो की जमा-पूँजी सुखा दी थी।

उसे यह भी चिन्ता लगी रहती थी कि उम्मेद को खाने के लिए क्या देगी ? इतने अमरूदों को देखकर उसके चित्त में कुछ ढारस हुआ।

उम्मेद ने उत्तर दिया—मां, हम पांच-चार साथी मिलकर एक बाग में घुस गये थे, वहां से ये अमरूद तोड़ लाये हैं।

मां ने पूछा—तो क्या चोरी करके लाये हो ? अनारो के हृदय में चोरों के लिये बड़ी घृणा थी।

माँ के स्वर में चोरी के लिये जो घृणा का भाव भरा हुआ था, उम्मेदसिंह ने उसे भांप लिया। उसके चित्त में भी चोरी के लिये घृणा-सी पैदा हो गई। उसने सोचा तो यह भी प्रतीत होने लगा कि चोरी तो उसने नहीं की।

उसने कहा—माँ, हम लोगों ने चोरी नहीं की, बल्कि ज़बरदस्ती से माली के देखते-देखते अमरूद तोड़ लाये हैं। उम्मेद जानता था कि उसका कथन आधा सत्य और आधा असत्य है, पर चोरी के कलंक से बचने के लिये जो उचित समझा, कह दिया।

अनारो ने बचपन में सुन रखा था कि चोर बुरे आदमी होते हैं, पर डाकू बहादुर होते हैं। उसके दिल में कुछ सान्त्वना हुई कि उम्मेद ने चोरी नहीं की, बल्कि सीनाजोरी की है, परन्तु फिर भी माँ का दिल था—क्या सीनाजोरी में ख़तरा नहीं है ? मार भी पड़ सकती है, पकड़ा भी जा सकता है, चोट लगना भी सम्भव है। अनारो बेचारी का दिल घबरा गया। वह कमज़ोर दशा में भी चारपाई पर उठ बैठी और रुक-रुककर इस प्रकार प्रलाप करने लगी—

हाय ! आप तो मर गये और मुझे इस आफ़त में पड़ी छोड़ गये। मैं ही निगोड़ी हूँ, जो साथ ही न मर गई। मुसीबत में पड़ी हूँ—दिन-रात हड्डियाँ थकाकर अपना और इस शैतान का पेट पालती हूँ और यह काम-काज में लगना तो अलग रहा, आवारा घूमता है और शैतानियाँ करता है। किसी दिन पेड़ पर से गिरकर मर जायगा, या पुलिस पकड़ ले जायगी। इस क्लेश से तो मैं मर जाती, तो अच्छा हो जाता। हाय,

अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ?

उम्मेद शैतान तो था, पर अपनी माँ से बहुत प्यार करता था। उसके लिये मां के अतिरिक्त अपना और कौन था ? उसकी अपनी दुनिया माँ तक परिमित थी। माँ को रोते देख उसका दिल उमड़ आया। वह अमरूदों की गठरी को तो पहले ही पटक चुका था। चारपाई के पास आकर उसने मां के कन्धे पर हाथ रखा और चारपाई की बाहों पर बैठकर कहने लगा—'माँ, अच्छा कसूर हुआ, माफ कर। अब रोकर अपनी बीमारी को मत बढ़ा ! लेट जा।

अनारो बीमारी से पहले ही कमज़ोर हो रही थी, उठने और बोलने ने उसे बिलकुल थका दिया। खांसी ने भी जोर पकड़ा। इस कारण जब उम्मेद ने हाथ का हल्का-सा सहारा देकर उसे लिटाने की चेष्टा की तो वह बेसुध सी होकर चारपाई पर गिर गई और बेहोश हो गई।

मां को बेहोश देखकर उम्मेद बहुत घबरा गया। उसे कुछ न सूझा कि क्या करें। पड़ोस में कुम्हार रहते थे। एक बुढ़िया कुम्हारिन अपने परिचितों में स्यानी और समझदार समझी जाती थी। वह छोटे-मोटे घरेलू इलाज कर लेती थी। म्मेद उसकी तलाश करने के लिये भागा। सौभाग्य से वह घर पर मिल गई। उसने अनारो को देखकर बतलाया कि उसे कमजोरी से बेहोशी आगई है। बुढ़िया के यत्न से थोड़ी देर में अनारो को होश आ गई।

मां को होश में देखकर उम्मेद की जान में जान आई। इससे पूर्व अपने बचपन की मस्ती में कभी उसने यह न सोचा था कि मां कभी बीमार भी होगी और बीमार होकर बेहोश भी हो जायगी। बच्चों का तो बहुत सुलभ स्वर्ग होता है। मां की बेहोशी से उसके स्वर्ग के भवन को धक्का-सा लगा। वह विचलित होकर मां के पास बैठ गया। उसे यही चिन्ता थी कि कहीं मां फिर बेहोश न हो जाय। उसने यह भी सुन रखा था कि लोग जब मर जाते हैं, तब चलना, फिरना या बोलना बन्द कर देते हैं। मां को बेहोशी की दशा में देखकर उसके दिल में

यह भाव उठने लगा कि क्या मौत ऐसी ही होती है। अगर मां मर गई तो ? फिर मुझसे कौन बोलेगा ? और रोटी कौन खिलाया करेगा ?

सुक्खी कुम्हारिन के प्रयत्न से अनारो अच्छी तरह होश में आ चुकी थी। उसने जब उम्मेद को उदास और घबराया हुआ देखा तो बहुत दुःखी हुई और हाथ के इशारे से उम्मेद को पास बुलाकर उसके सिर पर प्यार का हाथ फेरने और दिलासा देने लगी। सहानुभति मिलने से उम्मेद का भी दिल भर आया। उसकी आँखों से आँसू झरने लगे। न जाने मां-बेटा इसी प्रकार एक-दूसरे को सान्त्वना देते हुए कितनी देर तक रोते रहे।

(४)

धीरे-धीरे सांझ की छाया भूतल को अपने आंचल से ढकने लगी। अनारो को ध्यान आया कि उम्मेद को भूख लगी होगी। उसके खाने का समय पास आ रहा था। घर में अन्न का एक दाना भी नहीं है। पास में एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। बेचारे मजदूरों के पास बचता ही क्या है, जो कुछ बचा होगा वह बीमारी में खाया गया। अनारो को अपनी भूख की तो चिन्ता न थी, परन्तु उम्मेद—बस वही तो उसका सब आशाओं का सहारा था। अनारो ने अटकल से कहा—

बेटा, देख तो उस कोने में कुछ बचा-बचाया आटा हो तो रोटी बना ले ?

उम्मेद बोला—नहीं मां, मुझे तो कुछ भूख नहीं है, तू बता, तेरे लिये क्या लाऊँ ?

उम्मेद दिन में ही उस कोने को देख चुका था। उसमें खाने का कोई भी चीज़ शेष नहीं थी। मिट्टी के दो खाली बर्तन पड़े थे।

अनारो के दिल को धक्का लगा। उम्मेद समझ गया। सान्त्वना देते हुये कहने लगा—माँ, मेरी चिन्ता मत कर! मैं आमरूद खाकर पेट भर लूंगा। वह बहुत तो धरे हैं। अनारो के दिल में एक बार तो

आया कि उम्मेद से चोरी के अमरूदों को बाहर फेंक देने के लिए कह दे, परन्तु फिर ध्यान आया कि यदि अमरूद बाहर फेंक दिये तो बच्चे को भूखे सोना पड़ेगा। गरीबी का अभिशाप और मां की ममता—बेचारी चुप हो रही।

उम्मेद चारपाई के पास पहुँचा, और खाने योग्य अमरूदों को चुनने लगा। उसने दो अच्छे-अच्छे अमरूद चुने और मां के पास आकर एक अमरूद उसके हाथ में देते हुये कहने लगा—माँ, ले यह अमरूद, खब पका हुआ है, यह तू खाले, यह दूसरा मैं खा लूँगा। मां बच्चे की भोली सहानुभूति पर मुस्कराई। उसने कहा—बेटा, तू दोनों ही अमरूद खा ले। मुझे तो अमरूद से नुक्सान होगा। बीमार अमरूद नहीं खाया करते।

तब क्या मां भूखी ही रहेगी। यह तो न होगा कि मां भूखी रहे और उम्मेद खाने लगे। उसने दोनों अमरूद नीचे रख दिये और कहा—मां, अच्छा जाने दे। तू नहीं खाती तो मैं भी नहीं खाता। जब तू खायेगी, तभी मैं खाऊँगा। अब अनारो के लिये बड़ी विकट समस्या पैदा हुई। उसके दिल में चोरी से घृणा थी। चोरी के माल को अपने काम में लाना उसे बुरा मालूम होता था, पर बच्चे की भूख भी उस से देखी नहीं जाती थी। उसने दो-तीन बार उम्मेद से कहा कि तू खाले, मुझे भूख नहीं है, परन्तु लड़का भावुक भी था और हठी भी, किसी तरह न माना। तब अनारो ने कहा—अच्छा उम्मेद, जब तू मानता ही नहीं तो एक काम कर। इन अमरूदों में से कुछ अमरूद ले जा कर पड़ौसी के घर में बेच दे तो शायद पैसा-दो पैसा मिल जायें। उन पैसों से पास की दूकान से दूध ले आना। थोड़ा-सा मैं पी लूंगी, बाकी तू पी लेना।" इस प्रकार पेट की ज्वाला और बच्चे की ममता ने अनारो को अधर्म के साथ सुलहनामा करने के लिए बाधित किया।

उम्मेद की किस्मत अच्छी थी। अमरूद बड़ी आसानी से बिक गये। संगमलाल के बाग के अमरूद तो प्रसिद्ध ही थे। बड़े मीठे और

नर्म थे। इलाहाबादी अमरूदों से टक्कर लेते थे। कुम्हारों के घरों से आगे न जाना पड़ा। चार पैसे वसूल हो गये। उम्मेद बड़ा प्रसन्न हुआ। आज उसने जीवन में पहली बार कमाई की। चार पैसे लेकर भागा और हलवाई के यहां से दूध खरीद लाया। मां दरवाजे की ओर टकटकी लगाये लेटी हुई थी। उम्मेद को कुल्हड़ में दूध लिये आता देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। उसे ऐसा प्रतीत होने लगा मानो उसका बेटा कमाऊ हो गया। मां ने थोड़ा-सा दूध पी लिया। उम्मेद ने दो-तीन अमरूद खाकर ऊपर से दूध के घूंट ले लिये और मां-बेटा दोनों सन्तुष्ट होकर रात को सो गये।

(५)

अनारो इस घटना के पीछे कई सप्ताह तक बीमार रही। उम्मेद अब अपने को मां की सेहत का जिम्मेदार समझने लग गया था। मां काम पर नहीं जा सकती थी। उसकी और अपनी उदर-पूर्ति का बोझ उम्मेद पर पड़ा। उम्मेद ने अभी तक केवल एक ही काम सीखा था—वह चांडाल चौकड़ी के साथ मिलकर छोटे-छोटे डाके या चोरी के मामले कर सकता था और उन्हीं से कुछ कमा भी सकता था। पहले वह केवल एक शौक की चीज़ थी, अब जीवन का आवश्यक भाग बन गया। वह दिन के चार-पांच घण्टे, और कभी-कभी दिन में शिकार न मिलनें पर रात को कुछ समय भी इसी रोज़गार में खर्च करता। जिस रोज़ कुछ हाथ न लगता, फाका मस्ती रहती। अनारो स्वयं भूखी रह सकती थी, परन्तु बेटे की भूख उससे वर्दाश्त नहीं होती थी। वह सोचती, अगर उम्मेद का बाप असमय में हम लोगों को न छोड़ जाता तो आज बेचारे को चोरी क्यों करनी पड़ती। फिर हम इतनें गरीब क्यों हैं? वह जो दिन भर कोठी में पड़े रहते हैं, जो मिल के सेठ जी हैं, उनके पास इतनी दौलत है, ऐसा अच्छा मकान है। पर हम जो, दिन भर मेहनत करते हैं, हमारे पास कुछ भी नहीं है। जिस दिन न कमायें उसी दिन भूखे सोना पड़े। ऐसी हालत में बेचारा बच्चा क्या करे?

चोरी के बिना गुज़ारा कैसे हो ?

कभी-कभी आत्मा से शब्द उठता था कि चोरी करना बुरा है, कभी-कभी यह भी डरती थी कि कहीं उम्मेद पकड़ा न जाय, और चाहती थी कि उसे चोरी करने से रोक दे, परन्तु जब अपनी निर्धनता, बेटे की भूख और घोर निराशा के दृश्य हृदय के पर्दे पर चित्रों की तरह घूमने लगते तब अनारो की आत्मा चुप हो जाती।

उम्मेद की हिम्मत रोज़ बढ़ती जाती थी। अब उसे मां से छिपाने की आवश्यकता नहीं रही। जो कुछ लाता, मां के पास रख देता। मां भी उसे लाचारी का फल समझ कर सम्भाल लेती। अनारो और उम्मेद दोनों ही चोरी के माल के साझीदार बनने लगे।

उम्मेद अपनी कला में दिन दूनी, रात चौगुनी उन्नति कर रहा था। उसमें हिम्मत भी थी, और प्रतिभा भी। चोरी और सीना जोरी के सारे औज़ार आहिस्ता-अहिस्ता उसके शास्त्रागार में इकट्ठे हो गये, और उसके साथियों का गिरोह भी बढ़ने लगा।

उम्मेद इस गिरोह का लीडर था। वही आक्रमण की स्कीम तैयार करता था और अन्त में बँटवारा भी उसी द्वारा होता था। कभी किसी खोमचे वालों का खोमचा गिरा दिया, और गिरे हुए माल को लूट लिया। कभी किसी बाग में पहुँच गये और फल या सब्जी तोड़ लाये। कभी किसी के सूने घर में घुस गये तो जो कुछ हाथ लगा, ले भागे। बस, यही उस पार्टी के कारनामे थे, जिनके कारण इलाके में एक धूम सी मच गई थी। जब कभी पार्टी का कोई आदमी दुश्मनों के हाथ आ जाता तो पिटाई भी हो जाती थी, परन्तु बच्चा समझ कर लोग इकट्ठे हो जाते थे और बीच-बचाव कर देते थे। उम्मेद बहुत तेज़ भागता था और सावधान भी बहुत था। वह प्रायः अछूता ही बच जाता था।

अनारो लगभग तीन महीने तक चारपाई पर से न उठ सकी। खांसी ने शरीर में ऐसा घर किया कि छोड़ने का नाम न लेती थी। बीच-बीच में बुखार भी आ जाता था। गर्मियों के दिन इसी तरह व्यतीत हो गये।

बरसात आई तो चारों ओर पानी और कीचड़ का राज्य हो गया तब खांसी का बीमार कैसे राजी हो ? बरसात गई तो भारतवर्ष का अनादि शत्रु मलेरिया आ धमका। इस प्रकार निर्धनता और मौसम की चोटें सहती हुई अनारो किसी प्रकार अपने शरीर को सम्भालने की चेष्टा करती रही। अन्त में मलेरिया का मौसम व्यतीत होने पर प्रकृति ने रोगी को कुछ सहारा देना आरम्भ किया और दिवाली के पश्चात् अनारो स्वस्थ होने लगी।

२
सिंचन

शैतान पार्टी की शरारतें प्रतिदिन बढ़ती जा रही थीं। उनकी हिम्मत में भी वृद्धि हो रही थी। उम्मेद का साहस देखकर उसके साथी भी निडर हो गये थे, और हर रोज़ कोई न कोई नई शरारत खड़ी करते रहते थे।

एक दिन की बात है कि दिन के दस बजे का समय होगा। चारों शरारती लड़के किसी शिकार की तलाश में फूस की सराय के पास सड़क पर से गुज़र रहे थे। वहां कुछ कुम्हारों की दूकानें हैं। उनके सामने की सड़क पर प्रायः झल्ली वाले कूंजड़े फल और सब्जी से भरी झल्लियों को रखकर सुस्ताया करते हैं। उस दिन एक बूढ़ा कूंजड़ा कुम्हार की दूकान के सामने झल्ली रख कर बैठ गया, और आँखें बन्द करके आराम करने लगा। लड़कों ने शीघ्र ही अपनी व्यूह-रचना कर ली और बूढ़े की झल्ली की नारंगियों को लूटने का ढंग बना लिया।

बूढ़े से कुछ दूरी पर तिर्खू और गेंदा आपस में लड़ने लगे। गेंदा ने तिर्खू को बहिन की गाली दी, तिर्खू के मुँह पर चाँटा रसीद किया तो तिर्खू ने उसकी बगल में मुक्का मारा। दोनों के चिल्लाने और मारपीट करने से झल्ली वाले का ध्यान उधर खिच गया और राह जाते दो-एक आदमी भी खड़े हो गये। मनुष्य के अन्दर पशुता का थोड़ा-सा अंश सदा छिपा रहता है। तभी तो वह बटेरों, मेंढों और भैंसों की लड़ाई को पसन्द

करता है। दूसरों को लड़ते देखकर उसके खून में जो गर्मी पैदा होती है, उसे वह शराब के नशे की तरह अनुभव करता है। यदि दो आदमी आपस में लड़ रहे हों तो दर्शकों की एक बड़ी भीड़ चारों ओर इकट्ठी हो जायगी—अरे बस जाने दो, लड़ो मत भाई—कहने वाले तो बहुत से होंगे, परन्तु लड़ाई छुड़ाने को शायद ही कोई आगे बढ़ेगा, क्योंकि प्रायः सभी दर्शक दिल से चाह रहे होंगे कि यह बिना दाम का तमाशा जारी रहे। तिर्खू और गेंदा की लड़ाई को देखने के लिए जो भीड़ इकट्ठी हुई थी, उसमें भी अधिकांश उन्हीं लोगों का था, जो बिना दाम दिये तमाशा देखना पसन्द करते थे।

तिर्खू ने गेंदा को पकड़ लिया, गेंदा कपड़ा छुड़ा कर भागा तिर्खू उसके पीछे भागा। गेंदा भागता हुआ उस बूढ़े की झल्ली से टकरा गया, झल्ली उलट गई, और नारंगियाँ नीचे गिर गई। गेंदा टकरा कर गिर पड़ा, और तिर्खू भी गेंदा से ठोकर खाकर वहीं पर लोट गया। यह सब कांड दो-चार सेकेन्ड में ही हो गया। बेचारे बूढ़े की ऊंघ टूटी तो उसने अपनी झल्ली और नारंगी और लड़कों को भूमि पर पड़े हुए देखा।

उम्मेद और बशीर भीड़ में खड़े हुए झल्ली को उलटने की प्रतीक्षा कर रहे थे। गड़बड़ से लाभ उठाकर वह मौके पर पहुँच गये, और 'क्या हुआ, क्या हुआ' के आन्दोलन में सम्मिलित हो गये। बेचारा बूढ़ा पहले तो एकदम-किंकर्तव्य विमूढ़-सा हो गया, वह झल्ली भर नारंगियां ही तो उसकी दिन भर की दूकान थी, वही पेट की ज्वाला को बुझाने का साधन था, उसे गिरा हुआ देखकर वह सन्नाटे में आ गया, परन्तु शीघ्र ही अपने को सम्भाल कर उसने झल्ली उठा ली। मुँह से झल्ली उलटने वालों को गाली देता जाता था, और नारंगियां उठा-उठा कर झल्ली में डालता जाता था। नारंगियां उठाने के काम में बेचारे बूढ़े को लोगों ने अकेला न रहने दिया। और लोग भी इस काम में सम्मिलित हो गये। उचित अवसर पाकर उम्मेद और बशीर भी नारंगियां चुनने लगे। दो नारंगियां झल्ली में डाल देते और दो पास खड़े हुए गेंदा या तिर्खू के हाथ

में पकड़ा देते और वह अपनी लम्बी-लम्बी जेबों में डाल लेते थे।

रोशन कुम्हार की दूकान पर उस समय भीड़ लग रही थी। रोशन को यह चिन्ता सता रही थी कि कहीं धक्कमधक्का में उसके वर्तन न फूट जायें। वशीर की जेबें जब नारंगियों से भर गईं, तो उसे एक नया ढंग सूझा। उसने कुम्हार की दूकान से मिट्टी की एक मटकी उठा ली और उसमें नारंगियां भरने लगा। रोशन ने उसे मटकी उठाते देख लिया। वह एकदम वशीर से मटकी छीनने को झपटा। वशीर ने रोशन को उठते देख लिया। वह मटकी फेंककर भागा। मटकी गिर कर टूट गई। रोशन 'चोर-चोर' चिल्लाता हुआ पीछे भागा। फिर क्या था? चोर-चोर का शोर मच गया। वशीर के पीछे एक दर्जन भर आदमी चोर-चोर चिल्लाते हुए भागने लगे। वशीर भागने में फुर्तीला था। आसानी से हाथ न आया और तीसहजारी के मैदान तक भागता चला गया। मैदान के पास तिराहे पर एक सिपाही खड़ा रहता है। उसने जो चोर-चोर की आवाज़ सुनी तो आगे बढ़कर रास्ता रोक लिया। वशीर अब दोनों ओर से घिर गया। पीछे से रोशन भागा चला आ रहा था, आगे से सिपाही ने रास्ता रोक लिया। वह ज़रा-सा ठिठक गया। इसी में शिकार शिका-शिकारियों के चंगुल में आ गया और सिपाही ने बशीर का हाथ पकड़ लिया।

रोशन के साथ ही साथ उम्मेद भी भागा जा रहा था। वह अपने साथी को अकेला कैसे छोड़ देता। उसने जब बशीर का हाथ सिपाही के हाथ में देखा, तो कूदकर सिपाही को धक्का दिया। था तो बच्चा ही परन्तु खूब मजबूत था। उस धक्के से सिपाही के पांव उखड़ गये और वह गिरता-गिरता बचा। मौका पाकर बशीर सिपाही के हाथ को जोर का झटका देकर और अपना हाथ छुड़ा कर बन्दूक से छुटी हुई गोली के वेग से तीसहजारी के मैदान की ओर भाग गया। वशीर तो भाग गया, पर उम्मेद दुश्मनों से घिर गया। सिपाही के क्रोध का ठिकाना न था। उसे धक्का लगा और शिकार हाथ से भाग गया। रोशन और सिपाही

दोनों ने उम्मेद को पकड़ लिया और लगे उसे बुरी तरह पीटने। हाथ और पाँव दोनों से बेचारे की घडन्त शुरू हो गई। दो हट्टे-कट्टे आदमी पीटने वाले और एक बेचारा बारह बरस का लड़का पिटने वाला, कहाँ तक बर्दास्त करता। थोड़ी देर में बेहोश होकर गिर गया। इस तरह जो कांड गेंदा और तिर्खू से आरम्भ हुआ था, वह बशीर के सिर पर से टलता हुआ उम्मेद पर समाप्त हुआ।

इस मारपीट के चारों ओर काफी भीड़ इकट्ठी हो गई थी। सिपाही ने देखा कि लड़का बेसुध हो गया है, तब घबराया और तांगे पर बेहोश उम्मेद को डालकर सब्जीमण्डी के थाने में ले गया। अपने साथ वह रोशन कुम्हार को भी लेता गया।

उम्मेद के शरीर पर कई जगह चोटें आई थीं। जब सिपाही का धक्का खाकर वह गिरा, तब उसका सिर पक्की सड़क पर जोर से टकराया, जिससे सिर में खून भी जारी हो गया था। रास्ते में उसे होश आ गई। थाने के द्वार के अन्दर जब तांगे ने प्रवेश किया, उस समय उम्मेद खुली हुई परन्तु चकराई हुई आँखों से चारों ओर देख रहा था। मार का और सिर की चोट का उस पर गहरा असर था। उसे दरवाजा और दीवारें और तांगे में बैठे हुए आदमी धुँधली छाया के समान प्रतीत हो रहे थे।

तांगा सहन में जाकर खड़ा हो गया। उम्मेद को सिपाही ने हाथ से पकड़ कर उठाना चाहा, परन्तु निर्बलता के कारण वह न उठ सका। सिपाही ने इसे सम्राट् के एक प्रतिनिधि का घोर अपमान समझ कर उम्मेद की दो-तीन माँ-बहिन की स्थूल गालियों की प्रस्तावना के बाद जोर का झटका दिया, जिस से बेचारे को जो थोड़ी-बहुत चेतना आई थी, वह फिर जाती रही और कानून की दृष्टि में घोर अपराधी बालक चक्कर खाकर भूमि पर गिर पड़ा। सिर में से अब भी खून की बूँदे टपा-टप गिर रही थी।

दो सिपाहियों ने घसीट कर उम्मेद को एक खाट पर डाल दिया।

जो सिपाही उम्मेद को लाया था, उसका नाम याकूब था। याकूब ने अब देर करना उचित न समझा और शीघ्र ही दरोगा साहब को खबर दी। याकूब ने जो रपट लिखाई, उसका सारांश निम्नलिखित था। लड़का जो घायल पड़ा है सब्जीमण्डी की ओर से भागा आ रहा था। उसके पीछे चोर-चोर चिल्लाते हुये बहुत से लोग आ रहे थे। मैंने इसे दूर से देखा। बेतहाशा जोर से भाग रहा था। भागते-भागते इसके पांव में ठोकर लग गई और यह गिर पड़ा, जिससे इसके सिर में चोट आ गई। इतने में पीछे से भागते हुए लोग आ गये, जिनमें यह आदमी भी था, जो अपना नाम रोशन और पेशा कुम्हार बतलाता है। इसने मुझ से कहा कि इस लड़के ने मेरी दूकान के सामने एक बूढ़े की नारंगियों की झल्ली उलट दी थी और दूकान से एक हंडिया लेकर भागा था। मैंने देखा तो इसकी जेब में उस वक्त भी नारंगियां भरी हुई थीं। तब मैं इसे तांगे में डाल कर थाने में ले आया हूँ। रोशन कुम्हार भी मेरे साथ ही आया है, वह अलग बयान देगा।

रोशन कुम्हार का भी बयान हुआ। सिपाही ने रास्ते में ही उसे खूब सिखा-पढ़ा दिया था। बशीर, गेन्दा और तिर्खू कहानी में से बिल्कुल निकाल दिये गये, क्योंकि वह हाथ से निकल चुके थे। जो आसामी हाथ में था, उसी के गले में रस्सी ठीक बंध सकती थी। रोशन ने भी सिपाही के अनुकरण में झल्ली उलटने, हंडिया लेकर भागने और ठोकर खाकर गिरने आदि के सब गुनाहों की माला उम्मेद के गले में ही पहिना दी। जब तक यह सब कार्यवाही होती रही, तब तक उम्मेद बेहोशी की हालत में खाट पर पड़ा रहा। हिन्दुस्तान में कानून के सब काम जाप्ते से होते हैं। उनमें जल्दबाजी का कोई काम नहीं। पहले इस्तग़ासे का बयान होता है, तब कहीं जाकर अभियुक्त का बयान लिया जाता है। यह उम्मेद का कसूर था कि वह अभियुक्ति बना। जब तक रिपोर्ट दर्ज न हो जाय, तब तक उसकी बारी नहीं आ सकती थी। जब रिपोर्ट पूरी हो गई, तब अफ़सर को ख्याल आया कि अपराधी को भी बुलाना चाहिये।

हुक्म हुआ कि लड़के को हाजिर करो !

लड़के को देखा तो बेहोश पड़ा था। आवाज पर हाजिर न हुआ, यह भी कोई छोटा कसूर नहीं था। थानेदार साहब ने अपनी नाराजगी दो-तीन बहुत भारी-भारी पुलिस की पेटेन्ट गालियों द्वारा प्रकाशित करते हुए आज्ञा दी बदमाश को मुँह में पानी डालकर और हवा करके होश में लाया जाय। थोड़ी देर पीछे लड़के ने आहिस्ता-आहिस्ता आंखें खोलनी आरम्भ कीं। दर्द और निर्बलता ने उसके होश गुम कर दिये थे। वह वर्तमान की सब घटनाओं को भूल-सा गया था। अधूरी आँख खुलने पर उसने जो पहले शब्द कहे, वह वही थे, जो प्रायः दुःख में मनुष्य कहा करता है। उसने धीमे, कृश स्वर में कहा—'हाय मेरी मां ! और फिर आंखें बन्द करलीं।

(२)

उधर बशीर जो सिपाही से छूट कर भागा, तो तीसहजारी के मैदान से गुजर कर पहाड़ी की झाड़ियों में दम लिया और यह देखने के लिये कि कोई पीछा तो नहीं कर रहा, कुछ देर तक जीतगढ़ के पास झाड़ियों से छिपे हुए एक पत्थर के पीछे दुबका रहा। परन्तु पीछा करने वाले लोग उम्मेद को पकड़ कर सन्तुष्ट हो गये थे, इसलिये किसी ने पीछा नहीं किया। बशीर ने जब मैदान साफ देखा तो सब्जीमन्डी जाकर उम्मेद की मां को उम्मेद के पकड़े जाने की खबर दी। वह बेचारी अभी बहुत निर्बल थी। लम्बी बीमारी का असर उसके शरीर पर विद्यमान था। चूल्हे के पास बैठकर आटा गूंध रही थी कि अकस्मात् बशीर ने आकर दुःखदायी समाचार सुनाया। उम्मेद के चोट लगी है और वह पुलिस के कब्जे में है, यह सुनकर बेचारी अनारो एक बार तो बिल्कुल सन्न-सी रह गई। आटे पर हाथ जहां का तहां रखा रह गया, जमीन मानो घूमने लगी और आंखें पथरा गईं। दो-तीन मिनट तक तो यही दशा रही, जब धक्के का जोर हल्का हुआ तो 'हाय मेरा बेटा !' कह कर एक चीख मार उठी। बशीर ने जब अपने दोस्त की माता को इस दशा में देखा, तो

तसल्ली देने के लिये पास चला आया और हाथ से पकड़ कर सम्भालने की चेष्टा करते हुए कहने लगा—

"अम्मा, घबराओ मत !" मैंने भागते-भागते दूर से देखा था कि उम्मेद को सिपाही मार रहा था और उम्मेद गिर गया, परन्तु मेरा विचार है कि उसे अधिक चोट नहीं आई होगी। अब रोने या हिम्मत हारने का मौका नहीं है। मैं अभी जाकर ख़बर लाता हूँ कि उम्मेद को सिपाही पकड़ कर कहां ले गये हैं ? तब तक तुम मेरे साथ चलने के लिये तैयार हो।" बशीर की उम्र अभी १४ वर्ष की ही थी, परन्तु घर से बाहिर आवारगी के जीवन ने उसे उम्र से अधिक चालाक और चलता-पुर्ज़ा बना दिया था। अनारो को उसकी बात से बहुत सहारा हुआ और वह आंखों के आंसू पोंछती हुई उठी।

जब से उसे मालूम हुआ था कि उम्मेद चोरी करके या लूटमार से चीजें बटोरकर घर लाता है, तब से उसके दिल में यह डर बना रहता था कि वह कहीं पकड़ा न जाय। अगर उसे अपने चारों ओर दरिद्रता, भूख और बीमारी के राक्षस मुँह बाये न दिखाई दे रहे होते तो वह कभी उम्मेद को चोरी के रास्ते पर न जाने देती, परन्तु वह अपने-आपको लाचार पा रही थी। उसके दिल में जो एक धर्म या सदाचार की भावना का बांध लगा हुआ था, उसे गरीबी के प्रवाह ने तोड़ डाला था। वह सोचने लगी थी कि फिर हम गरीब क्यों हैं ? बेचारा उम्मेद और क्या करे ? क्या हम भूखों मर जायें ?' ऐसा सोचकर वह अपनी धार्मिक भावना को शांत कर देती थी। हां, यह डर उसे कभी-कभी कँपा देता था कि किसी दिन उम्मेद पकड़ा न जाय। यह डर आज पूरा हो गया। अनारो का एक मात्र सहारा, उसके जीवन का केन्द्र, जिसके जीवन की खातिर उसने हिन्दू-स्त्री की धार्मिक भावना का भी बलिदान कर दिया था, आज पकड़ा गया।

अनारो उठकर अपनी लठिया तलाश करने लगी। जब से वह अधिक रोगी हुई थी, तब से वह लठिया का सहारा लेकर ही चलती थी। बैठे

की गिरफ्तारी के समाचार ने तो मानो बीस वर्ष उसके मस्तक पर से गुजार दिये। वह अपने को बिल्कुल बूढ़ा अनुभव करने लगी। लठिया संभालकर वह झोंपड़ी के दरवाजे पर बैठ गई और बशीर के आने की प्रतीक्षा करने लगी।

बशीर को यह पता लगाने में देर न लगी कि उम्मेद कहां है। उसे डर था कि कहीं सिपाही या कुम्हार पहिचान न ले, इसलिये पहला काम तो उसने यह किया कि कोट उतार दिया और टोपी बदल डाली। लाल तुर्की की जगह एक सफेद मैली-सी टोपी सिर पर डाल ली और मुँह पर मिट्टी मलकर फकीरों की-सी शक्ल बना ली। नई शक्ल में उसे सब्जीमन्डी के थाने में किसी ने न पहिचाना। हाथ में लोहे का प्याला लिए जब वह थाने के अन्दर पहुँचा तो उसने खाट पर पड़े हुए उम्मेद को देख लिया। इतने में पहरे पर खड़े हुए सिपाही की नजर उस पर पड़ गई। सिपाही ने फकीर को मां-बहिन की गालियों से ललकारते हुए जो धकेलना शुरू किया तो सड़क पर जाकर छोड़ा। बशीर अपना काम पूरा कर चुका था, सिपाही को अशीष देता हुआ अनारो की झोंपड़ी की ओर रवाना हो गया।

(३)

अनारो द्वार पर बैठी प्रतीक्षा कर रही थी। पहले तो बशीर की सूरत देखकर घबरा गई। जब एक मैले-कुचैले कपड़े पहने, धूलि-धूसरित भिखारी को अपनी ओर बढ़ते देखा तो डरकर चीख मारने को तैयार हुई। परन्तु जब अपने पुत्र के मित्र बशीर की आवाज सुनी तो पहिचान गई और झोंपड़ी का दरवाजा बन्द करके उसके साथ चल पड़ी। रास्ते में दोनों में निम्नलिखित बातें होने लगीं।

अनारो ने पूछा—बेटा, तैंने उम्मेद को कहां पाया ?

बशीर—अम्मा, मैंने उसे थाने में देखा।

अनारो—वह कैसी हालत में था। उसके अधिक चोट तो नहीं लगी ?

वशीर—यह तो तुम खुद देख लेना। मालूम होता है कि उसके सिर में चोट आई है। उसे सिपाहियों ने चारपाई पर डाल रखा है।

सिर पर चोट का नाम सुनकर अनारो का शरीर कांप गया। वह कांपते हुए पैरों से जल्दी-जल्दी चलने लगी। वशीर उसकी लाठी को पकड़ कर रास्ते की ठोकरों से बचाता जाता था।

अनारो ने फिर पूछा—जब तैंने उम्मेद को देखा तो क्या उसकी आंखें खुली हुई थीं ?

वशीर ने उत्तर दिया—उस समय उम्मेद की आँखें पूरी तरह खुली हुई तो नहीं थीं, पर वह कभी-कभी आँखें खोल कर फिर बन्द कर लेता था। मैं तो केवल मिनट भर ही उसे देख पाया, फिर पुलिस वालों ने मुझे बाहर धकेल दिया।

अब वह दोनों पुलिस थाने के पास आ गये थे। वशीर रुक गया। वह दूसरी बार उसी वेष में थाने में नहीं जाना चाहता था। उसने दरवाजे के बाहर से ही अनारो को बता दिया कि उम्मेद किस जगह पड़ा है। अनारो बेचारी कभी पुलिस थाने में नहीं गई थी। वह उस श्रेणी में से थी, जिसके लिए पुलिस का सिपाही भगवान् से अधिक बलवान् और यमराज से अधिक भयंकर है। वह श्रेणी भारत की प्रजा में बहुत अधिक—अब भी शायद पचहत्तर प्रतिशत है। डरपोकपन और गुलामी का चोली-दामन का साथ है। बेचारी अनारो भी सिपाही की पगड़ी को विधाता का सिग्नल समझती थी। दरवाजे के पास ही खड़े हुए सिपाही को देखकर पहले तो उसके पाँव लड़खड़ा गये, परन्तु फिर उम्मेद को देखने की अभिलाषा ने दिल को सहारा दिया और अनारो थाने के दरवाजे के अन्दर घुस गई।

(४)

अपनी गली में कुत्ता भी शेर होता है, और हिन्दुस्तानी पुलिस का सिपाही तो इंग्लैंड के बादशाह और भारत के सम्राट् का प्रतिनिधि था। वह, और फिर थाने के अन्दर—उसे तो नृसिंहावतार ही समझना

चाहिए। एक मैले-कूचैले कपड़ों वाली अधमरी-सी औरत को इस प्रकार बेधड़क थाने में घुसता देखकर सिपाही को बड़ा तैश आ गया। न सलाम न बन्दगी। मानो इसकी (खाला का घर हो) सिपाही ने दूर से ही डांट कर कहा—

अरी बुढ़िया, कहाँ चली आ रही है। वहीं रुक जा।

अनारो रुक गई और बोली—भैया, मैं उम्मेद को देखने आई हूँ। सुना है, उसके चोट आ गई है।

सिपाही ने लापरवाही से कहा—कौन तेरा उम्मेद। क्या वही लौंडा तेरा बेटा है, जो चोरी के जुर्म में गिरफ्तार होकर आया है।

अनारो ने उत्सुकता से पूछा—हाँ, हाँ, वह कहाँ है। चोरी वोरी का तो मुझे पता नहीं, पर हाँ उसी को सिपाही पकड़ कर लाया है।

सिपाही ने आस-पास देखा कि कोई नहीं है। दबी जबान से बोला—अरी कुछ अन्टी में भी है कि मुफ्त ही में बच्चे को देखने आई है। अनारो बेचारी ने समझा कि शायद थाने में बच्चे को देखने की सरकारी फीस लगती होगी। अन्टी में टटोल कर देखा तो दो पैसे पड़े हुए थे। बोली—भय्या, दो पैसे तो मेरे पास हैं। क्या इन से काम चल जायगा।

एक तो दो पैसे, और फिर अनारो जोर से बोल उठी। सिपाही शान से अकड़कर क्रोध के स्वर में बोला—बदमाश, मुझे पैसे दिखाती है। यहाँ क्या तेरा दामाद है जो पैसे लिकाल रही है। भाग जा यहाँ से। यह वाक्य उस सिपाही ने जिस का नाम दयासिंह था, इतने जोर से कहे कि दफ्तर तक आवाज पहुँची और दारोग़ा तथा अन्य सिपाहियों का भी उधर ध्यान खिंच गया। उस समय उम्मेद होश में आ चुका था, और दारोग़ा के सामने पेश किया जा रहा था। उसके सिर पर पट्टी बांध दी गई थी, और दो सिपाहियों ने दोनों ओर से सम्भाल रखा था। उसने मुड़ कर देखा। जब दयासिंह ने देखा कि बुढ़िया हुक्म देने से भागी नहीं तो उसके (क्रोध का पारा और भी चढ़ गया) तो उसने अनारो को दरवाजे की ओर जोर का धक्का दिया। उम्मेद घायल था, और मुश्किल

से चल रहा था, परन्तु माता से उसे असीम प्यार था। उसकी सारी अपनावट माँ तक परिमित थी, माँ के लिए वह प्राण दे सकता था। माँ को धक्का लगने का दृश्य उसके लिए असह्य हो गया। मालूम नहीं उस बालक में उस समय कहाँ से बल आ गया कि वह दोनों सिपाहियों को झटका देकर एकदम निकल भागा। पास ही ईंट का एक बड़ा-सा टुकड़ा पड़ा हुआ था। उसे उठा कर और निशाना ताक कर ऐसा मारा कि दयासिंह की कनपटी पर जाकर लगा। ईंट का टुकड़ा बड़े जोर से मारा गया था, जिससे खून की धारा बह निकली और दयासिंह चक्कर खाकर बैठ गया। सिपाही उम्मेद को पकड़ने के लिए दौड़े, और उम्मेद माँ के पास को भागा। अनारो बेचारी इस सारे कांड से इतनी घबरा गई थी और उम्मेद के कपड़े और सूरत में गर्द और मारपीट ने इतना परिवर्तन कर दिया था कि वह उम्मेद को पहिचान भी न सकी। जब उम्मेद माँ को लिपट गया और माँ, माँ पुकारने लगा, तब आवाज से उसने समझा कि वह बेटे के पास पहुँच गई है, परन्तु पुत्र के मिलने का सुख क्षण भर से अधिक न मिल सका। शीघ्र ही सिपाहियों ने आकर उम्मेद को पकड़ लिया और अनारो के सामने से घसीटते हुए दारोगा के पास ले चले। एक सिपाही ने आगे बढ़कर अनारो को इस जोर का धक्का दिया कि वह 'हाय बेटा' चिल्लाती हुई थाने के दरवाजे के बाहर सड़क पर औंधे मुँह गिर गई। उम्मेद ने माँ को गिरते देखा तो उसके शरीर में मानो बिजली-सी दौड़ गई। उसने छूटने की चेष्टा की परन्तु इस बार सिपाहियों ने बहुत बेरहमी और जोर से उसे पकड़ रखा था। बेचारा दांत पीस कर रह गया। सिपाही उसे घसीटते हुए थाने के हवालात में ले गये, और अन्दर धकेलकर बाहिर से दरवाजा बन्द कर दिया। सारी दुनिया उम्मेद की आँखों से ओझल हो गई। वह अब गहरी सुनसान में था। वह था और हवालात की दीवारें थीं, परन्तु साथ ही एक दृश्य था और एक आवाज़ थी, जो उसके कानों को चीर रही थी, दृश्य सिपाहियों द्वारा माता के धकेले जाने का था, और आवाज थी 'हाय बेटा' की।

३

केनिंग

कानून की यात्रा पूरी करने में देर न लगी। जो कुछ पुलिस के सिपाही ने कहा, रोशन कुम्हार ने उसकी ताईद की। कोर्ट इन्स्पेक्टर ने ग्रानरेरी मजिस्ट्रेट साहब के दिमाग में बिठा दिया कि लड़का घोर अपराधी है। ग्रानरेरी मजिस्ट्रेट साहब ने अपने मुन्शी की ओर देखा। मुन्शी ने आहिस्ता से कान में कह दिया कि अपराधी अभी लड़का है, इसलिये उसे बेत की सजा दे दी जाये। ग्रानरेरी मजिस्ट्रेट का कानून तो उनका मुन्शी ही होता है, वही उन्हें ताजीरात हिन्द के सबक देता रहता है। मुन्शी का इशारा पाकर मजिस्ट्रेट साहब ने उम्मेद को बारह बेतों का हुक्म सुना दिया।

कानून के इस नाटक में उम्मेद कोई दिलचस्पी न ले सका। बारह वर्ष का बालक, उस पर माता का वियोग, उसकी आंखों के सामने तो न अदालत थी और न मजिस्ट्रेट साहब थे। उसके दिल पर तो एक ही चित्र खिचा हुआ था। माता की दीन दशा, उसे सिपाही का धक्का देना, और माता का 'हाय बेटा' कहते हुए गिरना—एक फिल्म की तरह यह तस्वीर उसके हृदय पर बार-बार आती और चली जाती। जब उसे मजिस्ट्रेट ने बड़ी रुखाई भरी हकूमत के साथ बारह बेत लगाने का हुक्म सुनाया, तब भी वह चुपचाप खड़ा रहा। वह न हँसा न रोया। उस सारे घटनाचक्र ने उसे स्तब्ध-सा कर दिया था। उस स्तब्धता से

उसे कोई ऐसी ठेस ही उठा सकती थी जिसका असर पहिली चोट से अधिक हो। अभी तो वह केवल आश्चर्यचकित होकर अपने चारों ओर देखता था, और फिर दिल ही दिल में माँ को याद करने लगता था।

सजा मिलने तक उसे सब्जीमण्डी की हवालात में रखा गया था। बेत का हुक्म हो जाने पर वह जेल जाने का अधिकारी समझा गया और एक मोटा-ताजा सिपाही हाथों में हथकड़ी डाल कर उसे अदालत से हवालात में ले गया। अदालत से हवालात तक कुछ गजों का ही फासला है, परन्तु दिन के ग्यारह बजे से शाम के ४ बजे तक उस जगह खूब भीड़भाड़ रहती है। उस भीड़ में बहुत-सी श्रेणियों के लोग शामिल होते हैं। सब से अधिक जमाव तो वकीलों का रहता है। लगभग ३०० वकील हैं। कई वर्ष पहले ज़िले की कचहरी में वकीलों की संख्या लगभग पचीस थी, परन्तु दिल्ली की अलग यूनिवर्सिटी हो जाने के कारण वकीलों की बाढ़ सी आ गई है। छोटा सा जिला है, और थोड़ा सा काम है। वकीलों का नया पूर हर साल उतर आता है। तब क्या आश्चर्य है कि कचहरी के समय में बहुत से नौजवान, सूट पहिने हुए मुअक्किलों की तलाश में मैदान में घूमते नज़र आयें। वह बेचारे घर खाते हैं, और अदालत की रौनक को बढ़ाते हैं। दूसरी श्रेणी के लोग जो इस भीड़ में दिखाई देते हैं, पेशावर गवाह हैं। साल के बारह महीने आप कुछ सज्जनों को अदालत के बाहर घूमता पायेंगे। उनका काम है, शहादत देना और फीस है चार आने से दो रुपया तक। आपने फीस दी, और खुदा को हाजिर नाज़िर समझ कर शहादत तैयार हो गई। ऐसा झूठ का पेशा करने वाले सज्जन प्रायः बड़े भव्यवेष में अदालत के बाहर घूमा करते हैं। जब वह मोटा-ताज़ा सिपाही हथकड़ी द्वारा उम्मेद को घसीटता हुआ हवालात की ओर जा रहा था, तो एक ऐसे ही गवाही पेशा करने वाले बूढ़े सज्जन ने अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए सिर हिलाकर कहा कि—अफसोस, यह शकल और ऐसे काम ! मालूम होता है पागल ने सफाई में कोई गवाह भी नहीं दिया। गवाह

दे देता तो यह नौबत क्यों आती ! उम्मेद ने उस बूढ़े की ओर देखा। पहले उसे कभी नहीं देखा था, वह समझ न सका कि जिसे पहले कभी नहीं देखा था। उससे शहादत कैसी दिलायी जा सकती है।

उम्मेद जब अदालत को हवालात के दरवाजे पर पहुँचा, तब उसने अन्दर कई आदमियों को बैठे देखा। बेचारा एक ही रात थाने की हवालात में रह कर परेशान हो गया था। जब सुबह उसे सरसरी मुक-दमे के लिये अदालत में लाया गया, तब उसने खुले आकाश को देखकर गनीमत समझा था, परन्तु अब फिर हवालात का दरवाजा खुलता-सा देखकर उसका दिल बैठ-सा गया। पांव आगे नहीं पड़ता था। सिपाही ने धकेल कर उसे हवालात के अन्दर कर दिया, हाथों से हथकड़ी खोल दी, औग दरवाजे में फिर ताला लगा दिया। उम्मेद ने अपने-आपको सात और व्यक्तियों के साथ हवालात में बन्द पाया।

उसका हवालात की कोठरी में बड़ा ज़ोरदार स्वागत हुआ। उन सात में से दो लड़के थे, और ५ बड़ी उम्र के थे। बड़ी उम्र के हवालातियों ने उम्मेद का, 'आह यार,खूब है' कह कर अभिनन्दन किया, और लड़कों ने 'लो एक और आ गया, इस वाक्य से सत्कार किया। उम्मेद इन वाक्यों का कुछ भी अभिप्राय न समझ सका। उसके मन में उन सातों व्यक्तियों की सूरत देखकर बड़ी घृणा पैदा हो हुई। उसमें जो आवारगी पैदा हुई थी, वह उसकी परिस्थिति का फल थी, हृदय की कलुषता का नहीं। बचपन में किसी ने शिक्षा न दी, साथियों ने आवा-रगी सिखा दी, माता ने गरीबी और स्नेह के वश में आकर चोरी की प्रवृत्ति को न रोका, इस कारण उम्मेद हवालात के दरवाजे के अन्दर पहुँच गया परन्तु अभी उसका हृदय अपराध की कालिमा से कलुषित नहीं हुआ था। उसे यह देखकर धक्का-सा लगा कि जिस हवालात में वह बन्द किया जा रहा है, उसमें पहले से ही कुछ लोग बैठे हुए हैं, और लोग भी ऐसे कि उनके रंग-ढंग भले आदमियों के से नहीं। अन्दर घुसने पर उसने स्वागत के जो शब्द सुने, उन्होंने उसे और भी अधिक

घबराहट और चक्कर में डाल दिया। वह कुछ घबराया-सा कोठरी में घुसा, और दो कदम अन्दर जाकर रुक गया। उसने एक बार ताला बन्द करते हुए सिपाही की ओर देखा, और दूसरी बार ठठाकर हँसते हुए उन हवालातियों की ओर देखा। पीछे रास्ता बन्द हो गया था, और आगे कदम नहीं उठता था। वह कुछ क्षण तक जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया।

उसके होश वापिस आ गये, जब उसने अपने हाथ पर एक बड़े और कठोर हाथ का अनुभव किया। उसे घबराया हुआ-सा देखकर एक हवालाती हँसता हुआ उठा और उसके हाथों को अपने हाथों में लेकर बाला—

मालूम होता है बेटा, पहली बार फँसा है। अच्छा, डरते क्यों हो, आओ, इधर बैठो।

यह कहते हुए उन बड़े और कठोर हाथों वाले व्यक्ति ने उम्मेद को अपनी ओर खींचना चाहा। उस व्यक्ति पर नज़र पड़ते ही उम्मेद के चित्त में गहरी घृणा का भाव पैदा हो गया था। वह कोई पैंतिस साल की उम्र का हट्टा-कट्टा आदमी था। लम्बा कद, बड़ी-बड़ी मूंछे, भयावनी आँखें, सिर पर पेशावरी टोपी, वदनपरलुङ्गी, सलवार और कोट। बोलने के समय मुँह खुलता था तो मैल से भरे हुए और पान की लाली से सने हुये दाँत ऐसे प्रतीत होते थे, मानो किसी खूनी पशु के जबड़े हों। कान बड़े-बड़े लटके हुए। उम्मेद को उस आदमी की सूरत बहुत ही बुरी मालूम हुई। उसने झटका देकर उसके हाथ में से अपना हाथ छुड़ा लिया, और एक कदम पीछे हटकर खड़ा हो गया।

वह हवालाती, जिसका नाम कालेखां था, उम्मेद के इस कार्य से नाराज सा होकर बड़े जोर से ठहाके के साथ हँसने लगा। शेष हवालाती भी हँसने और 'वाह तेरा नखरा' 'खूब किया' 'शाबाश' आदि आवाजें कसने लगे। पहरे पर खड़ा हुआ सिपाही भी इस दृश्य को देखकर मुस्करा रहा था।

कालेखाँ से हाथ छुड़ाकर उम्मेद ने शेष हवालातियों पर भी नज़र दौड़ाई। एक को छोड़कर शेष सब उसे एक ही श्रेणी के दिखाई दिये। उसे उनके रंग-ढंग बुरे प्रतीत हुये। एक लड़का सबसे कुछ अलग होकर बैठा हुआ था। वह सब की हँसी में शामिल नहीं हुआ और न ही उसने उम्मेद को कोई चिढ़ाने की बात कही। इससे उम्मेद के दिल में उसकी ओर से कुछ सद्भावना पैदा हो गई, और वह उसके पास जाकर बैठ गया। इस पर सब हवालातियों में एक और हसी का दौर चला, जो बहुत देर तक जारी न रह सका, क्योंकि शीघ्र ही हवालातियों को जेल ले जाने वाली लारी आ पहुँची, और सिपाहियों ने हवालात का ताला खोलकर सबको उसमें बन्द कर दिया।

(२)

लारी घड़घड़ती हुई दिल्ली दरवाज़े की ओर चली। यह जीवन में पहली ही बार थी कि उम्मेद लारी में सवार हुआ। लारी के बाहर ताला लगा हुआ था, आगे ड्राइवर के पास दो सिपाही बैठे थे और पीछे दो सिपाही बन्दूकें ताने डटे हुये थे। पक्षी की तरह खुला घूमने वाले उम्मेद को वह छोटा-सा जेलखाना बहुत ही बुरा और बहुत ही कड़वा लगा। बचपन में किसी वस्तु के जो पहले असर पड़ते हैं वह बहुत पक्के होते हैं। कभी-कभी वह जन्म भर नहीं छूटते। उम्मेद पर भी मोटर के सम्बन्ध में यह पहला असर था। वह कच्चे घड़े पर छाप की तरह लग गया। जन्म भर उसे साधारणतया मोटर से, और विशेष कर लारी से बड़ी घृणा रही। वह हृदय से लारी के साथ ताला, सिपाही और बन्दूक के चित्रों को कभी अलग न कर सका।

कैदी जेल के बड़े दरवाज़े के अन्दर घुसकर दरबान के सामने पेश ये। दरबान ने उनके वारन्ट देखे और नाम पूछकर रजिस्टर में दर्ज किये। उस लारी में जो व्यक्ति आये थे, उनमें से शेष छः हवालाती थे। केवल उम्मेद ही कैदी था, क्योंकि उसे सज़ा मिल गई थी। परन्तु सज़ा थी बेतों की, इस कारण उसे भी हवालातियों के साथ ही रखने की

व्यवस्था की गई ।

सातों व्यक्ति दफ़्तर में असिस्टेन्ट जेलर के सामने पेश किये गये। दफ़्तर का कमरा बहुत भद्दा, पुराने ढंग की सराय का था। दिल्ली भारत की राजधानी है, जिसमें क्लर्कों के लिये भी ऐसे मकान तैयार हो गये हैं कि रईस लोग उनसे डाह करें। सरकारी इमारतों का तो कहना ही क्या है, परन्तु दिल्ली का जेलखाना भद्देपन का एक नमूना है। सुनते हैं बादशाही जमाने में यह भटियारन की सराय थी। अंग्रेजों ने उसे ही जेल का रूप दे दिया। दफ्तर के कमरों में कबूतरों और मकड़ियों के दल बेरोक-टोक पहुँच जाते हैं और चित्रों या सजावट के रिक्त-स्थान को बीठों और जालों से पूरा करते हैं।

वह लोग असिस्टेन्ट जेलर के सामने पेश हुये। एक नम्बरदार जिसके शरीर पर काली वर्दी थी, और लम्बा-पतला और दाढ़ी-मूंछों से भरा हुआ चेहरा था, सबके कपड़ों की तलाशी ले रहा था। किसी की जेब टटोलता, और किसी के जूते खुलवा कर देखता था कि कोई चीज तो नहीं छिपा रखी थी। जब उम्मेद की बारी आई तो वह जरा मुस्कराया और बाबू से बोला—बाबू जी, अच्छी तरह देख लूं। बाबू जी भी मुस्कराकर बोले—हाँ हाँ, अच्छी तरह देख ले। उस नम्बरदार ने, जिसका नाम सरदारसिंह था, उम्मेद की तलाशी लेनी शुरू की। उसके शरीर पर केवल दो कपड़े थे, एक पाजामा था, दूसरा फटा हुआ कुरता सिर और पांव से वह नंगा था। उन चीथड़ों में से उसकी बड़ी-बड़ी आँखें, गोल चेहरा और सुग्गे की-सी उभरी हुई नाक से प्रतीत हो रहा था, मानो कीचड़ में से कमल का फूल झलक रहा है। इस समय उस कमल के फूल पर बहुत-सा गर्द-गुबार पड़ा हुआ था।

नम्बरदार ने पहले उम्मेद के कुरते को उतार कर बगलों को टटोला और कुर्ता पहिना दिया। उम्मेद को यह काम भी काफी भद्दा मालूम हुआ और दिल में आया कि कुर्ता न उतारने दे, परन्तु फिर कुछ बोलकर चुपचाप रह गया। अब पाजामे की बारी आई। सरदारसिंह ने बाबू की

ओर देखकर इजाजत मांगी और उम्मेद के पाजामे के कमरबन्द की गांठ खोलने लगा। उम्मेद में और किसी तरह की आवारगी हो गई हो, परन्तु वह चरित्र का अछूता था। उसने पाजामे पर हाथ लगाते ही सरदारसिंह के हाथ को झकटा दिया और दो कदम अलग जाकर खड़ा हो गया। इस पर असिस्टेण्ट जेलर ने मां-बहिन की दो-चार मोटी-मोटी गालियां देते हुए एक सफेद वर्दी वाले नम्बरदार को हुक्म दिया कि पकड़ लो···को। बदमाश तलाशी से भागता है। सफेद वर्दी वाले नम्बरदार ने आगे बढ़कर उम्मेद को पकड़ लिया। उम्मेद उससे छूटने का यत्न करने लगा, परन्तु कब तक ? सरदारसिंह और सफेद वर्दी वाले नम्बर-दार ने मिलकर आखिर उम्मेद को काबू में कर लिया। सफेद वर्दी वाले ने उसके दोनों हाथ पीछे की ओर पकड़ लिये। सरदारसिंह ने एक हाथ से उसकी गरदन को पकड़ लिया और दूसरा हाथ पाजामे का नाड़ा खोलने के लिये बढ़ाया। उम्मेद के अन्दर एक तूफान-सा उठ रहा था। वह उसे बरदास्त न कर सका, उसने अपने गले को जोर का झटका देकर छुड़ा लिया और सरदारसिंह के उस हाथ में जो गले के पास था, दांतों से काट लिया। सरदारसिंह चीख मारकर अलग हो गया। जेल के दफ्तर म कुहराम मच गया। 'मारो साले को' की आवाज चारों ओर से आने लगी। सरदारसिंह के क्रोध का क्या ठिकाना था। उसने फौरन अपनी कमर से चमड़े की वह पेटी खोल ली, जिसमें लोहे के बकसूए लगे हुए थे, और लगा उम्मेद पर तड़ातड़ बरसाने। और कई आदमी भी, जिन्हें जेल के नम्बरदार, जमादार या अन्य किसी प्रकार से वफादार होने का सौभाग्य प्राप्त था, उस छोटी-सी जान को बेरहमी से पीटने में शामिल हो गये, और तब तक पीटते रहे जब तक आहत होकर वह १२ साल का अपराधी बेहोश न हो गया। भारत की जेल में गुस्ताखी की ऐसी ही सजा है। हिन्दुस्तानी जेल का उम्मेद को वह प्रथम अनुभव हुआ।

(३)

एक रात अस्पताल में रखकर उम्मेद को इस योग्य समझा गया कि उसे नीरोग कैदियों में रखा जाय, यद्यपि उसके शरीर पर कई जगह घाव और सूजन विद्यमान थे। प्रायः बच्चों को जेल के एक अलग वार्ड में रखा जाता है जिसे पंजाब में मुण्डाबारग कहते हैं, परन्तु उम्मेद को पहले ही दिन से बहुत खतरनाक कैदी समझा गया, और इस कारण उसे उन कोठरियों में बन्द किया गया, जिनमें भयंकर कैदी रखे जाते हैं। जो चक्की की कोठरियां जेल की उत्तर की ओर हैं, उनमें से ५ नम्बर की कोठरी में उम्मेद बन्द किया गया। बन्द करते समय उसे एक चटाई, दो कम्बल, एक चादर और एक-दो लोहे के तसला, दिये गये, जिनका उद्देश्य उम्मेद के जीवन की सब आवश्यकताओं को पूरा करना था। चटाई टूटी हुई थी, कम्बल फटे हुए थे, चादर को चिथड़ों का एक समूह कहें तो ठीक होगा। दो में से एक तसला तो साबित था, पर दूसरा टूटा हुआ था। यही सामान था, जिसकी सहायता से वहां के कैदी अपनी जीवनचर्या पूरी कर रहे थे।

उम्मेद गरीबी में ही पला था, उसके लिये वह सामान भी काफी होता और वह शांतिपूर्वक कैद के दो सप्ताह गुजार लेता, यदि कठिनाई केवल शारीरिक होती। परन्तु शारीरिक कठिनाई तो बहुत ही गौण थी। जेल के शारीरिक कष्ट तो बहुत ही गौण होते हैं। जिसे जेल कहते हैं, वह एक मानसिक वस्तु है, जो थोड़े या फटे कपड़ों, या लोहे की सलाखों से नहीं, वहाँ के मानसिक और सामाजिक वायु-मण्डल से बनती है।

शाम के कोई पांच बजे होंगे, जब उम्मेद कोठरी नम्बर ५ में कैदी बनकर प्रविष्ट हुआ। उस समय उस बैरक के अन्य निवासी कोठरियों से बाहर हवा खा रहे थे। बन्द कोठरियों में रहने वाले कैदियों की दिन-चर्या प्रायः यह रहती है कि प्रातःकाल होने पर, गर्मियों में कुछ पहले और सर्दियों में कुछ पीछे सिपाहियों के साथ हैडवार्डर जेल की हरेक

बैरक के सामने जाता है। जो नम्बरदार पहरे पर हो, वह बैरक के कैदियों की गिनती पूरी करता है। कोठरियों में गिनती करने का दूसरा ही तरीका है। वार्डर या जमादार हरेक कोठरी के सामने पहुँच कर पुकारता है।

"बोल जवान।"

इस आवाज़ के उत्तर में कैदी को कुछ कहना चाहिये। 'हां जी' कह दे, तो बहुत अच्छा। परन्तु यदि वैसा न कहे तो सिपाही दूसरी बार कहता है—

'अरे बोलता है कि नहीं।'

मान लो कि बेचारा कैदी उस समय गहरी नींद में है या कोई मीठा सपना ले रहा है। वह नहीं बोलता। तब तो उसकी शामत है। जमादार जो कुछ कहे, कम है। कैदी को मां, बहिन की गाली के लिये और उससे भी अधिक कठोर आपरेशन की धमकियों के लिये तैयार रहना चाहिये।

गिनती के बाद कोठरियां खोली जाती हैं। उस समय कैदी बाहर निकलकर हाथ-मुँह धोते हैं। उसी समय में उनकी कोठरी में रखे हुए टट्टी के बर्तन भंगी उठाकर ले जाता है। घन्टा भर खुले रह कर फिर वह लोग बन्द कर दिये जाते हैं, और दिन की मुशक्कत शुरू हो जाती है। कहीं-कहीं प्रातःकाल ही पहला भोजन मिल जाता है। रोटी खाकर ही कैदी मुशक्कत शुरू करते हैं। दिन के चार बजे तक मुशक्कत समाप्त हो जाती है, जिसके बाद कैदियों को फिर एक बार खुले मैदान में घूमने का अवसर मिलता है। खुले मैदान का अभिप्राय यह नहीं कि कैदी जहां चाहे घूम सकते हैं। उनका खुला मैदान प्रायः कुछ गजों तक ही परिमित होता है। बेचारे सीधे-सादे कैदी तो प्रायः अपनी कोठरी के सामने ही बैठ जाते हैं। उन्हें इधर-उधर जाने में यह डर रहता है कि कहीं नम्बरदार व जमादार गाली न दे बैठे।

लगभग ५ बजे शाम का भोजन आ जाता है। ६ बजते-बजते चाबियों

का एक बहुत बड़ा गुच्छा लटकाये हैडवार्डर यमदूत की तरह दिखाई देता है। बेचारे कैदी हाथों में रोटी और तसले में दाल डाले हुए कोठरियों में चले जाते हैं। वार्डर दरवाजा बन्द करता है और हैडवार्डर उस पर एक जबर्दस्त-सा ताला जड़ देता है। वह ताला उस दिन भी बन्द किया गया, जिस दिन उम्मेद बन्दी बन कर बन्दीगृह में पहुँचा। वह बेचारा अभी अपनी कोठरी की देखभाल ही कर रहा था कि कैदियों में कुछ उत्साहपूर्ण हलचल दिखाई देने लगी। उसने देखा कि लोग हाथों में तसले लेकर भाग रहे हैं। थोड़ी ही देर में दरवाजे के अन्दर आते हुए चार कैदी दिखाई दिये, जिन्होंने चारों ओर से एक खटोले को थामे हुआ था। उस खटोले में कोई चीज भरी हुई थी, जिसे लोग रोटी कहते थे। उस रोटी का घेरा कोई एक चक्की के पाट के बराबर होगा, पर मोटाई कागज के बराबर थी। देखने में बड़ी थी, पर तोल में हलकी थी। जिस अनाज से वह बनी थी, उसका नाम तो चना है, पर जब चना पैदा होता है, तब उसमें मिट्टी नहीं रहती। मालूम होता है कि वह चने और मिट्टी को मिलाकर वैज्ञानिक रीति से खास कैदियों ही के लिये तैयार किया गया था। रोटियों का निर्माण चित्रकला के सिद्धान्तों के अनुसार हुआ था। कहीं काले फूल बने हुए थे, जो आटे के जलने का परिणाम था, तो कहीं सफेद चित्रपट था, जो आटा कच्चा रहने का परिणाम था। कोई हिस्सा जला हुआ था तो कोई कच्चा। प्रतीत होता था कि जेल के रसोईखाते के अधिकारी बीच में लटकना पसन्द नहीं करते, या इस पार या उस पार।

कुछ कैदी बड़े से बांस में एक देग को लटकाये हुए आये। जैसे भिखारी लोग भीख के लिये हाथ फैलाते हैं, वैसे ही कैदी लोग अपने तसलों को फैलाकर खड़े हो गये। एक बड़े से बछड़े में भर-भर कर एक काली-सी द्रव चीज तसलों में डाली जाने लगी। लोग उसे दाल कहते थे, परन्तु उम्मेद उसके रूप-रंग को देखकर किसी प्रकार भी दाल की भावना न कर सका। काला-काला गाढ़ा-सा पानी था और एक बड़ी उग्र

और अप्रिय-सी गन्ध थी। उम्मेद बड़ी गरीबी में पला था, परन्तु ऐसी भद्दी चीज़ भी दाल के नाम से पुकारी जाती है, यह उसे पता नहीं था।

रोटी और दाल लेकर सब कैदी अपनी-अपनी कोठरी के आगे बैठ गये। जिन बेचारों ने दिन भर चक्की पीसी थी, १६ सेर की मुशक्कत पूरी की थी, उनके पेट में दावानल जल रहा था। वहाँ तो ईंट-पत्थर पड़ जाते तो भी उनका स्वागत ही होता। वह लोग मिट्टी मिश्रित चने के आटे की रोटी और कोलतार के रंग से मिलती-जुलती बदबूदार दाल को बड़ी प्रसन्नता से खा रहे थे, परन्तु बेचारा उम्मेद उस कूड़ाकरकट को वैसी दार्शनिक दृष्टि से न देख सका। पहले तो ग्रास ही मुँह में न जाता था, जब जी को कड़ा करके एक ग्रास मुँह में डाला भी तो दांतों और जीभ ने उसे स्वीकार न किया। उम्मेद ने उसे नाली में थूक दिया। रोटी में रेत भरा हुआ था, और दाल में सड़े हुए तेल, रंधी हुई मक्खियों और अधकच्चे लहसन की बदबू थी। उसने बड़ी मुश्किल से उल्टी को रोका। फिर वह कुछ न खा सका। रोटी और दाल उसने नाली में डाल दी और अपनी कोठरी में जाकर चटाई पर पड़ गया।

(४)

उम्मेद टूटी हुई चटाई पर लेट तो गया, पर नींद कहां से आती। जेल की ड्योढ़ी पर जो मार पड़ी थी, उसका शरीर पर अब तक असर विद्यमान था। कन्धे पर और कमर में पेटी की चोट के कारण सूजन बनी हुई थी। भूख के कारण पेट में चूहे कूद रहे थे। यही कारण काफी थे, परन्तु जब नीचे बिछी हुई चटाई और सिरहाने की जगह रखे हुये कम्बल में से निकलकर खटमलों की सेना ने आक्रमण आरम्भ किया, तब तो वह छटपटा उठा। खाना बांटने के कोई आध घन्टा पीछे हैड-वार्डर कई सिपाहियों के साथ आकर सब कैदियों की कोठरियों में ताला डाल गया। वह ताला कैदियों की छाती पर हथौड़े की तरह पड़ा करता है। यदि किसी मनुष्य को और सब तरह का आराम दे दिया जाय,

परन्तु दिन में एक बार उस पर ताला लगा दिया जाय तो उसकी आयु को आधा कर देने के लिये पर्याप्त है। उस ताले का मनोवैज्ञानिक असर बड़ा घातक है। जिन पर रोज़ तीन बार ताला लगे, उन बेचारों की क्या दशा होती होगी, यह समझा जा सकता है।

उम्मेद पर भी वही ताला वज्र की तरह गिरा। यदि नींद आ जाती तो किसी तरह ताले में भी एक रात बीत जाती, परन्तु खटमल कहां सोने देते थे। बेचारे की आंख ही न लगने देते थे और अगर थकान के कारण कभी ज़रा आंख झपक भी जाती तो उस आवाज़ से टूट जाती जो रात भर जेलों के कैदियों के सिर पर भूत की तरह सवार रहती है। हर पांचवें मिनट पर बुर्ज का पहरेदार सब बैरकों के पहरेदारों को अलग-अलग आवाज़ देकर पुकारता है। वह उस रात के भयंकर सन्नाटे को चीरती हुई आवाज़ से चिल्लाता है—'बैरक नम्बर एक का पहरेदा-ऽ ऽ ऽ र।' बैरक नम्बर एक का पहरेदार जवाब में कहता है—'सब अच्छा ऽ ऽ ऽ।' जिन कैदियों के कान इन चिल्लाहटों को सुनते-सुनते पक गए हैं, उनकी दूसरी बात है, परन्तु सामान्यतः बेचारे बदनसीबों की नींद हराम हो जाती है। बेचारा उम्मेद भी इन यमदूतों की सी पुकार को रातभर सुनता और परेशान होता रहा। उसके शरीर के अंग-अंग में दर्द हो रहा था। परन्तु कहता किससे ? अगर पहरेदार से कहता भी तो वह सुनता क्यों ? जब कष्ट असह्य हो जाता तो 'हाय मेरी माँ' कह कर हल्का कर लेता।

किसी तरह वह वेदना भरी रात बीती। दस गज लम्बी और ३ गज़ चौड़ी काल कोठरी में कभी बैठकर, कभी लेटकर, कभी घूमकर और कभी दरवाज़े की सलाखों के सहारे खड़े होकर उम्मेद ने समय काटा। सुबह 'बोल जवान' हो चुकने पर कोठरी का द्वार खुला और उम्मेद को बाहर की हवा नसीब हुई। बाहर आकर नल पर हाथ-मुँह धोकर सब कैदी तसले ले लेकर फिर अपनी-अपनी कोठरी के सामने बैठ गये, क्योंकि खाना आने वाला था। थोड़ी देर में बड़े दरवाजे से फिर वही

अर्थी का जलूस आता हुआ दिखाई दिया। उसी तरह भूखे बदनसीब कैदी उन पशुओं के खाने योग्य रोटियों के लिये वेग से लपके। इस समय के खाने में थोड़ा-सा भेद था। इस समय दाल की जगह सब्जी बनी थी। सब्ज़ी क्या थी एक खासा कचरे का ढेर था। गली, पकी हुई मूली और गांठ गोभी के बड़े-बड़े टुकड़ों के साथ, पत्ते, डन्ठल, मक्खी, झींगुर और कम्बलों के टुकड़े बदबूदार कड़वे तेल में मिला दिये गये थे। बस इसी का नाम सब्ज़ी रखा गया। और चीजें तो समझ आ गयीं परन्तु कम्बलों के टुकड़ों का सब्जी में होना कुछ नई बात थी, इसका कारण एक पुराने कैदी ने रसोईदार से पूछा कि—

यार, आज सब्जी में यह नया मसाला कहां से आ गया। आम तौर पर तो लड़की के टुकड़ों का छौंक दिया जाता था, आज कम्बलों का छौंक कैसे दिया गया।

रसोईदार ने ज़रा अलग जाकर उसके कान में कहा कि भाई क्या करें, जो लकड़ी किचन में आने वाली थी, कल उसका बड़ा हिस्सा दरोगा जी के घर चला गया है, इसलिए आज चूल्हे में गोदाम से लाकर कम्बल ही झोंकने पड़े हैं। इसीलिए आज लकड़ी की जगह कम्बल के टुकड़े दिखाई देते हैं।

यह तो रोज़ का रिवाज ही था, कि जो चीज़ चूल्हे में जलाई जाय, उसका कुछ हिस्सा सब्ज़ी में पड़े। अच्छी सब्ज़ी तो बनने से पहले ही जेल कर्मचारियों के घर पहुँच जाती थी, जो कमी हो जाती, उसे पत्तों, या ईंधन के टुकड़ों से पूरा किया जाता था। आज कम्बलों से ईंधन का काम लिया गया था, इस कारण सब्जी में पैबन्द भी उन्हीं का लगाया गया।

उम्मेद जब उस सब्जी और रोटी को लेकर अपनी कोठरी के सामने आया, तो सोचने लगा कि क्या करूँ। भूख बड़े जोर से लग रही है पर साग की शकल देखकर उल्टी आ रही है। कुछ देर तक वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़ सा बना रहा और उन लोगों की ओर देखता रहा जो अभ्यास हो

जाने के कारण बड़ी खुशी से उस साग और सब्ज़ी को खा रहे थे। देखने से भूख और चमक उठी। तब उसने सब्ज़ी के तसले को तो अलग रख दिया और लाचार होकर उस चने और मिट्टी की बनी हुई रोटी को सूखा ही खाना आरम्भ किया।

उम्मेद के पास की कोठरी में एक सिख कैदी रहता था। उसकी आयु कोई ३५ वर्ष की होगी। खूब लम्बा था, परन्तु शरीर का दुबला था। वह उम्मेद की इस दुविधा को देख रहा था। उसने जब उम्मेद को रूखी रोटी खाते देखा तो हाथ के इशारे से पास आने को कहा। उम्मेद हाथ में रोटी लिए हुए उसके पास पहुँचा। उसने गुड़ की एक डली अंटी में से निकाल कर उम्मेद को देते हुए दबी जबान से कहा कि ले इससे रोटी खा ले। देख इसे रोटी में दबा लेना, कहीं नम्बरदार न देख ले। जब नम्बरदार दूसरी तरफ़ चला जायगा तब मेरे पास बात करने आना। इतना कह कर उसने फिर हाथ के इशारे से उम्मेद को चले जाने को कहा।

उम्मेद ने २४ घन्टे के पीछे उस गुड़ की डली के सहारे से रोटी के कुछ ग्रास पेट में डालकर पानी के चार घूँट पिये।

(५)

उम्मेद के पड़ौसी सिख कैदी का नाम भागसिंह था। उसकी उम्र कोई ३५ वर्ष की होगी। उसका रंग साँवला था, क़द लम्बा, शरीर छरैरा और माथा विशाल था। आँख में सदा लाली की गहरी रेखा रहती थी। वह प्रायः चुपचाप रहा करता था। बगैर मतलब के किसी से बात नहीं करता था। उम्मेद ने देखा कि जेल के नम्बरदार और जमादार भी उससे कुछ अलग रहते थे, मानो डरते हों। कोई उसे छेड़ने की हिम्मत नहीं करता था और वह भी किसी से अधिक वास्ता नहीं रखता था।

उस दिन के पीछे प्रायः हर रोज़ वह गुड़ की एक डली रोटी के साथ खाने के लिए उम्मेद को दे दिया करता। उम्मेद कृतज्ञतापूर्ण

आँखों से उसकी को ओर देखता और चुपके से गुड़ की डली ले लेता। उसके दिल में धन्यवाद देने का विचार तो उठता था, परन्तु भागसिंह की आँखों और होठों को देखकर बोलने की हिम्मत न पड़ती थी। दिल ही दिल में धन्यवाद देकर रह जाता था। भागसिंह भी कभी बोलने की चेष्टा न करता था। अंगुली का इशारा देकर उम्मेद को बुलाता और गुड़ देकर हाथ के इशारे से ही फौरन दूर भगा देता था।

जिस कैदी को बेंत लगाने की सजा मिले, उसे कुछ दिनों तक जेल में रहना ही पड़ता है। कुछ प्रतीक्षा तो इसलिए की जाती है कि शायद कोई सम्बन्धी अपील करनेवाला निकल आये। यह भी देखा जाता है कि अपराधी बेंत की मार सहने योग्य स्वास्थ्य रखता है या नहीं। आम तौर पर छोटी उम्र के लड़कों को अलग बैरक में रखा जाता है, परन्तु सब्जी मण्डी थाने और जेल की घटनाओं से सरकार को निश्चय हो चुका था कि उम्मेद बड़ा भयानक अपराधी है, इस कारण उसे लड़कों में न रखकर भयानक अपराधियों के साथ, कोठरी में रखा गया था।

(६)

चार रोज़ इसी तरह बीत गये। सिवा उस मौन मूर्ति भागसिंह के उम्मेद का किसी से खास परिचय न हुआ। जब वह कोठरी से बाहिर जाता तो कई कैदी उससे बातें करने की कोशिश करते, परन्तु वह प्रायः चुपचाप ही रहा करता था। उस बैरक का नम्बरदार अकबरखाँ नाम का एक पठान था। वह भी प्रायः उम्मेद के पास आकर बातों की छेड़-छाड़ शुरू करता, परन्तु उम्मेद उसकी उपेक्षा ही करता था। अकबरखाँ एक जन्म कैदी था। अपने भाई की हत्या के अपराध में उसे फाँसी की सजा मिली थी, जो अपील पर जन्म-कैद के रूप में परिणित हो गई। कैद के नौ वर्ष व्यतीत हो चुके थे, दसवाँ चल रहा था। इन दस वर्षों के कारागार ने उस पर से हत्यारेपन के चिन्हों को कुछ हल्का न करके, कुछ अधिक गहरा ही कर दिया था। उसका गोरा, परन्तु क्रूर चेहरा

कैदियों के हृदयों में कँपकँपी पैदा कर देता था, क्योंकि वह दसों जेलों की हवा खाकर दिल्ली में आया था। अन्य जेलों के उसके कारनामे पंजाब भर में मशहूर थे। अकबरखाँ दिल्ली जेल के अधिकारियों का एक मज़बूत औज़ार था। जेल भर में उसकी धाक थी।

अकबरखाँ की नज़र पहले ही दिन से उम्मेद पर पड़ी। वह जब भी उसकी कोठरी के सामने से गुज़रता, कुछ न कुछ कह जाता। कभी कभी कड़ी बात कहता तो कभी नर्म, कभी धमकाता तो कभी मज़ाक करता। उम्मेद को उसकी सूरत बड़ी घृणित मालूम होती थी। इस कारण वह उसकी किसी भी बात का उत्तर न देता, दूसरी ओर मुँह फेर लेता। उसकी समझ में यह नहीं आता था कि आखिर वह नम्बरदार उससे व्यर्थ बातें क्यों किया करता है।

रात के ११ बजे होंगे। उम्मेद अपनी कोठरी में सोया पड़ा था। अब उसे खटमलों की सेना से घिरे रहकर भी सोने की आदत पड़ गई थी।

वह सपना ले रहा था। वह टूटी हुई झोंपड़ी और वही पुरानी खाट। बीमार अनारो उस पर पड़ी हुई है, और उम्मेद बाही पर बैठा है। अनारो उसके सिर हाथ फेरकर कह रही है कि मेरा बेटा। उम्मेद माँ की हालत को देखकर रो रहा है और कुछ कह नहीं सकता। इतने में झोंपड़ी का दरवाज़ा खुला और उसमें से एक अद्भुत प्राणी घुसता दिखाई दिया। उस प्राणी का चेहरा मनुष्य का सा था, परन्तु धड़ बड़े कुत्ते का सा। उम्मेद उसे देखकर चौंक जाता है और चाहता है कि लाठी लेकर उसे भगा दे, परन्तु इस डर से नहीं उठता कि माँ न घबरा जाय। प्राणी उसके पास आ जाता है और मुँह से उसके कपड़े को खैंचने लगता है। उम्मेद अब घबरा जाता है और दूर पड़ी हुई लाठी को उठाने के लिए लपकता है, मौका पाकर वह प्राणी उछलता है और एक भयावनी आवाज़ के साथ अनारो की चारपाई पर जा गिरता है। उस धड़ाके और आवाज़ से उम्मेद की नींद खुल गई, पर आवाज़ जारी रही।

उम्मेद ने समझा कि अभी सपना जारी है और फिर आँखें बन्द करलीं। तब उसे अनुभव हुआ कि आवाज़ अन्दर से नहीं, बाहिर से आ रही है, और कोई आदमी उसकी कोठरी के लोहद्वार को हिला रहा है, जिससे आवाज़ हो रही है।

उम्मेद सचेत होकर उठ बैठा और दरवाज़े की ओर देखने लगा। देखा कि अकबरखाँ नम्बरँदार दरवाज़े को पकड़ कर हिला रहा है और धीरे-धीरे आवाज़ भी दे रहा है। उम्मेद उठकर दरवाज़े के पास गया। उस आधी रात में, हल्की-सी बाहिर की रोशनी में, अकबरखाँ का चेहरा बड़ा भयावना दिखाई देता था। उम्मेद उसकी घृणित मूर्ति को देखकर दो कदम हट गया। तब अकबरखाँ ने कहा—

अरे उम्मेदू, मैं तुझे इतनी देर से बुला रहा हूँ और तू बोलता ही नहीं।

उम्मेद ने उत्तर दिया—

क्या कहते हो। मैं तो सो रहा था। इस समय क्या कहने आये हो। जल्दी कहो, क्योंकि मुझे नींद आ रही है।

अकबर बोला—अरे लड़के, मैं तेरे से एक बात पूछने आया हूँ। तू जेल में आराम से दिन काटना चाहता है या मरना चाहता है।

उम्मेद चुप रहा। वह प्रश्न को ही नहीं समझा। अकबरखाँ ने उसे चुप देखकर फिर कहा—

अरे तू ऐसा बेवकूफ है कि बात ही नहीं समझता। देख, इस बारग का मैं ही हाकिम हूँ। यहाँ न दरोगा की चल सकती है और न हैडवार्डर की। यहाँ तो मैं ही मालिक हूँ। मैं तुझ से बात करता हूँ तो तू मुँह फेर लेता है। मैं चाहूँ तो तेरा मुँह तोड़कर रख दूँ। मुझे कोई पूछने वाला भी नहीं। और अगर तू आराम से रहना चाहता है तो मेरी बात मान। मेरी बात मानेगा तो तुझे खाने-पीने की कोई तकलीफ़ न होगी, और हर तरह का आराम मिलेगा।

उम्मेद को अकबरखाँ की शक्ल से घृणा थी, उसका कारण उम्मेद

भी नहीं जानता था। जेल का कष्ट भी कष्ट ही है, और वह हरेक को बुरा लगता है। अगर कुछ आराम मिल जाय तो दिल प्रसन्न होता है। अकबरखां की बात सुनकर उम्मेद सोचने लगा कि क्या जवाब दूं। उसी समय उसे ध्यान आया कि इस बारे में भार्गसिंह क्या कहेगा ? भार्गसिंह उसे अच्छा लगता था, उसके लिये उम्मेद के हृदय में आदर और स्नेह का भाव था। उसने अकबरखाँ को टालने के लिये उत्तर दिया कि अभी तो मुझे नींद आ रही है, कल पूछना, क्या पूछते हो ?

अकबरखाँ ने कुछ तेज होकर कहा—अच्छा, कल शाम तक और ठहर जाता हूँ। मैं तुझ से मुहब्बत करता हूँ। अगर तू मेरी बात मानेगा तो तुझे जेल में सारे आराम मिल जायेंगे। मैं चाहू तो सारा दिल्ली शहर जेल में पहुँचा दूं। लेकिन अगर तैंने मेरी बात न मानी, तो तेरी खर नहीं, याद रखना जिन्दा ही चबा जाऊँगा।

यह कहते हुए अकबरखाँ के चेहरे पर शैतान-सा छा गया था। उसका मूंछ और दाढ़ी से आवृत भयावना चेहरा लोलुपता और क्रोध से और भी अधिक भयावना हो उठा। वह बड़-बड़ाता हुआ वहाँ से चला गया, और उम्मेद अपनी चटाई पर वापिस आकर लेट गया। उस रात उसे फिर नींद न आई। पड़ा-पड़ा अकबरखाँ के उस भयानक चेहरे में गढ़ी हुई उन जलती हुई आँखों पर विचार करता रहा।

अगले दिन प्रातःकाल खाने के समय उम्मेद ने पहली बार भार्गसिंह से बात करने की चेष्टा की। जब नम्बरदार दूसरी ओर को चला गया, तब उम्मेद ने भार्गसिंह के पास बैठकर कहा—कल रात अकबरा ने मुझ से बहुत-सी बातें कहीं, जिनका मैं कुछ मतलब नहीं समझा।

भार्गसिंह की भौंहें तन गईं। अकबरा और उम्मेद से बातें करे। यह उसे सह्य नहीं हुआ। उसने पूछा—अकबर शैतान की यह मजाल कि मेरे···, खैर। उसने क्या कहा—

उम्मेद को अकबरखाँ की कही जितनी बातें याद थीं; वह सब उसने कह सुनाईं। सुनकर भार्गसिंह का पारा और अधिक चढ़ गया। उसने

दबी जबान से पांच-चार गालियां दीं, और फिर कुछ सोचकर उम्मेद से कहा—

अगर आज वह फिर पूछे, तो कोई जवाब न देना और कह देना कि कल सुबह कोठरियों के दरवाज़े खुलते ही जवाब दूँगा।

उम्मेद ने फिर पूछा—कल सुबह मैं क्या जवाब दूँ ?

भार्गसिंह ने उत्तर दिया, तुझे जवाब न देना पड़ेगा। मैं ही दे लूँगा।

उम्मेद इस संक्षिप्त उत्तर का अभिप्राय न समझ सका, भार्गसिंह के मुँह की ओर ताकने लगा। भार्गसिंह ताड़ गया। उसने दबी जबान में उम्मेद से कहा कि अकबरा अव्वल दर्जे का बदमाश है। उससे बचे रहना। मैं उसे समझाऊँगा। अगर वह न समझा तो फिर देख लूँगा। तुझ से वह कुछ पूछे, तो कल के लिये टाल देना।

(७)

दोपहर के समय, जब जेल के ताले बन्द हो गये और जेल के सब अधिकारी घरों पर आराम करने के लिये चले गये, तब अकबरा उम्मेद की कोठरी के दरवाज़े पर आया। उसके हाथ में एक छोटी-सी पुड़िया थी। उसने सीखचों में से उस पुड़िया को उम्मेद की ओर बढ़ाते हुए कहा, अरे लड़के, यह ले, मैं थोड़ी-सी खांड रोटी के साथ खाने के लिये लाया हूँ, इसे रख ले।

उम्मेद को तो उसकी सूरत से पहले ही घृणा थी। भार्गसिंह की बातों ने उसे और अधिक सावधान कर दिया था। उसने चटाई पर बैठे-ही-बैठे कहा, मुझे इस खांड की ज़रूरत नहीं है। तू इसे अपने ही पास रख।

अकबरा की आँखों में खून उतर आया। उसने कहा—तू बड़ा गुस्ताख है। क्या तुझे पता नहीं कि मैं कौन हूँ, और क्या कर सकता हूँ। अगर मैं तेरी जान भी ले लूँगा तो मुझे कोई पूछने वाला नहीं। सारे पंजाब की जेलों में अकबरा का नाम मशहूर है। आज तक उसका सामना करके

कोई आराम से नहीं रह सका। मैं तुझ से मुहब्बत करता हूँ, और तुझे आराम पहुँचाना चाहता हूँ। पर तू परवाह नहीं करता। उल्टा बेइज्जती करता है। मैं फिर एक बार तुझे मौका देता हूँ। तेरे लिये अच्छा यही है कि तू मेरी बात मान जा।

उम्मेद चुपचाप बैठा रहा। कोई उत्तर न दिया। वह सोच रहा था कि क्या उत्तर दूँ, कि इतने में पास की कोठरी से भार्गसिंह की आवाज़ आई—अरे अकबरा ! ओ अकबरा ! अकबरा चौंक गया। उसने वहीं से झल्लाकर कहा—क्या है ?

भार्गसिंह ने बन्द कोठरी में से चिल्लाकर कहा—

इधर आकर मेरी बात सुन जा।

ओ ठहर जा। अभी आता हूँ। ज़रा इस लड़के से बात कर लूँ।

लड़के से बात पीछे करना, पहले मेरी बात सुन जा।

अकबरा नम्बरदार था और भार्गसिंह कैदी। कैदी की इस हिमाकत से वह झुँझला उठा, और गालियाँ देता हुआ उसकी कोठरी के सामने जा खड़ा हुआ। बोला—अरे अहमक, क्यों इतना चिल्ला रहा है। बोलता क्यों नहीं कि क्या चाहिये ?

भार्गसिंह ने गुस्से को रोकते हुये उत्तर दिया—

देख मैं तुझे सावधान किये देता हूँ। तू उस लड़के से छेड़-छाड़ मत कर।

क्यों वह तेरा कौन लगता है ? मैं जेल का नम्बरदार हूँ। जो चाहे कर सकता हूँ। तू मुझे रोकने वाला कौन है ?

खैर, मैंने तुझे बतला दिया कि उस लड़के की ओर जायगा तो बुरा नतीजा निकलेगा। तू अकबरा है तो मैं भी भार्गसिंह हूँ। जीते ही चबा जाऊँगा।

पठान को ऐसी धमकी ! अकबरा के क्रोध का पारा बहुत ऊँचा चढ़ गया। भार्गसिंह बन्द था, वह खुला था, इस स्थिति से लाभ उठाकर अकबरा ने उसी समय कैदी को सजा देने का विचार कर लिया, और

उसके मुंह पर थूक दिया, और इससे पहले कि भागसिंह कोई उत्तर देता कोठरी के सेहन से भी बाहिर चला गया।

(८)

भागसिंह के तन बदन में आग लग गई। वह सिक्ख था। पठान उसके मुंह पर थूक गया। क्या यह अपमान सहने योग्य था। परन्तु क्या करता ? उसके सामने संगीन लोहे की सलाखों का दरवाजा अड़ा हुआ था, और उसमें भारी लोहे का ताला पड़ा हुआ था। बेचारा उस समय दांत पीसकर रह गया।

शाम के समय जब कैदी हवा खाने के लिये खोले गये, तो भागसिंह ने उस बैरक के अन्य सिक्ख कैदियों को वह घटना सुनाई। जेल में कई सिक्ख नम्बरदार भी थे। उनमें से सरदारसिंह नाम के नम्बरदार का बड़ा रसूख था। वह कैदियों को मशक्कत देने वाले असिस्टेंट जेलर का अर्दली था। वह बाबू के साथ कैदियों की मशक्कत लेने आया, तब भागसिंह ने उससे भी सारी कहानी कह दी। पंजाब की जेलों में पठानों और सिक्खों में शाश्वत विरोध है। वह एक-दूसरे के जवाब समझे जाते हैं। दोनों ही वीर, दोनों ही मजबूत और दोनों ही अक्खड़पन के अवतार हैं। सरकार दोनों के विरोध से खूब लाभ उठाती है। जहाँ सिक्ख कैदी अधिक हों, वहाँ पठान नम्बरदारों से काम लेती है, और जहाँ पठान कैदियों की संख्या ज्यादा हो, वहाँ सिक्ख नम्बरदारों को लगाती है। इस प्रकार इन दोनों वीर जातियों की परस्पर द्वेष भावना के बल पर पंबाज की जेलों का प्रबन्ध किया जाता है। एक पठान ने एक सिक्ख का अपमान किया, इस समाचार ने जेल के सिक्खों में सनसनी-सी फैला दी।

उस रात जेल भर के सिक्खों में यही चर्चा रही। पठान भी चौकन्ने हो गये थे। दिल्ली जेल में पठानों की संख्या अधिक नहीं थी, तो भी वे अन्य मुसलमान कैदियों की सहानुभूति के बल पर अपने को बलिष्ट समझते थे। सिक्खों में यही चर्चा थी कि इस अपमान का बदला कैसे

लिया जाय ?

रात को जेल में जब सन्नाटा हो गया, और केवल 'सब अच्छा' की रींगती हुई ध्वनि कानों में चुभने के लिए शेष रह गई, तब सरदारसिंह भागसिंह की कोठरी के बाहर आया। कैदी सीखचों के अन्दर था, और नम्बरदार बाहर। दोनों में निम्न प्रकार से मन्त्रणा होने लगी। भागसिंह ने कहा—अकबरा बदमाश को ऐसी सजा मिलनी चाहिए कि उसे जन्म भर याद रहे। क्या करूँ, बन्द था, नहीं तो उसी वक्त मूजी को गर्दन मरोड़ देता।

सरदारसिंह—सवाल यही है कि उसे सजा कैसी दी जाय। वह आज-कल इसी बैरक में लगा हुआ है। अभी पाँच दिन और लगा रहेगा। यहीं उसकी घड़न्त करनी चाहिये।

भागसिंह—ख्याल तो मेरा भी ऐसा ही है, लेकिन दिक्कत यह है कि अब यह बहुत चौकन्ना हो गया। उस झगड़े के पीछे मैं आज शाम को उसकी ताक में था, पर वह मेरे पास तक नहीं आया। दूर ही दूर घूमता रहा। मेरा ख्याल है कि अब कुछ दिनों तक मेरे पास आयगा भी नहीं, और जब हम लोग बन्द हो जाया करेंगे, तब वह इधर से गुज़रा करेगा और उसी समय वह उम्मेद के पास भी जाया करेगा।

सरदारसिंह—तो कोई ऐसी तजवीज़ सोचनी चाहिये कि उसी समय उसे सजा मिल जाय (कुछ सोचकर) लो यार, मुझे एक तरीका सूझा है। बहुत मजे का है। वह दोपहर के वक्त, जेल बन्द होने पर इधर आयगा। मैं कोशिश करके उस समय उसकी यहीं को ड्यूटी लगवाए लेता हूँ। हैडवार्डर मुझ से दबता है, क्योंकि कैदियों से उसे जो वसूली होती है, वह मेरी ही मार्फत होती है। जब वह इधर आयगा, तब उम्मेद के पास तो जरूर ही जायगा। बस तुम उम्मेद को समझा दो कि वह शोर मचा दे। बाकी मैं देख लूँगा।

भागसिंह—सलाह तो अच्छी है, पर भाई, वह लड़का अगर मान जाय तभी तो। मुझे उस लड़के की आंखों में सचाई की झलक दिखाई

देती है। मुझे डर है कि वह झूठ बोलना स्वीकार न करेगा।

सरदारसिंह—यह तूने एक ही कही। सच्चे आदमी भी कहीं जेल में आया करते हैं। अगर आ भी जाएँ तो यहाँ आकर आज तक कौन सच्चा रहा है। तू तो पागल है। उस लड़के को रास्ते पर लाना ही पड़ेगा। उसे अच्छी तरह समझा-बुझा देना। मान जायगा। मैंने सुना है कि वह तेरा कहना मानता है।

भार्गसिंह—हाँ, यह तो ठीक है कि वह मेरी बात मानता है। मेरी उस पर पहले ही दिन से नज़र है। जब से मैंने उसे देखा है तभी से जी में ठान लिया है कि उस लड़के को अपने गिरोह में शामिल कर लूँगा। परन्तु जब कभी मैं उसकी आँखों की ओर देखता हूँ तभी मुझे मालूम होता है कि वह चोर बनने के योग्य नहीं है। हाँ, डाकू बन सकेगा। क्योंकि वह बहादुर तो है, पर झूठा नहीं।

सरदारसिंह—उसे झूठा बनाना पड़ेगा। क्या डाकुओं को कभी झूठ बोलना ही नहीं पड़ता? जैसे चोर को कभी न कभी डाकू बनना पड़ता है, ऐसे ही डाकू को भी कभी चोर का काम करना पड़ता है। यह तेरा काम है कि तू उसे झूठ का सबक सिखाकर अपने काम का बना ले।

भार्गसिंह—देखो, कोशिश करूँगा, देखूँगा कि बना सकता हूँ उसे अपने काम का या नहीं। कल सुबह उसे समझाने का यत्न करूँगा।"

दूसरे दिन प्रातःकाल भार्गसिंह ने उम्मेद को हाथ के इशारे से अपने पास बुलाकर रात की सलाह के अनुसार समझाने की चेष्टा की। पहले तो उम्मेद झूठ बोलने को राज़ी न हुआ, परन्तु भार्गसिंह के यह समझाने पर कि अकबरा के बलात्कार से छूटने के लिये दूसरा कोई उपाय नहीं है, यहाँ तक राज़ी हो गया कि जब अकबरा आयगा, तब मैं चिल्ला दूँगा। फिर यह पूछे जाने पर कि अकबरा ने क्या किया था, उम्मेद ने झूठी बात कहने से साफ इन्कार कर दिया। तब भार्गसिंह ने उसे समझा-बुझाकर इसके लिये तैयार कर लिया कि वह चुप रहे। उससे कुछ भी पूछा जाय, और किसी तरह भी पूछा जाय, वह कोई

जवाब न दे।

(६)

'सीत् सीत् सीत्' तीन बार सीटी की आवाज़ हुई। 'टन् टन् टन्...' निरन्तर घण्टा बजने लगा। सारे जेल में हलचल मच गई। अलार्म बैल बज रहा था। जेल में अलार्म बैल को सब से अधिक सनसनीपूर्ण घटना समझा जाता है। वह जेल का मार्शल ला है और उसमें सनसनी का सामान भी बहुत है। पहले बैरक नम्बर एक से सीटी की आवाज़ आई। उसका मतलब था कि कुछ हो गया। फिर दफ्तर के ऊपर अलार्म का घण्टा निरन्तर बजने लगा। जेल के अन्दर सब चौकन्ने हो गये। जिन पहरेदारों के पास चाबियां थीं वह उन्हें सम्भालते हुए दरवाज़ों की ओर भागे, और पाँच मिनट के अन्दर ही अन्दर सब कैदियों को अपनी अपनी बैरक या कोठरी में बन्द करके ताला लगा दिया गया। कैदी लोग सुबह का खाना ले रहे थे। रोटियां बँट चुकी थीं; सब्जी बँट रही थी। कुछ लोग सब्जी ले चुके थे, बाकी प्रतीक्षा में थे। जेल का नियम है कि अलार्म बजने पर फिर कोई कैदी बाहर नहीं रह सकता। सब अन्दर बन्द कर दिए जाते हैं। उस दिन जिसके पास जितनी चीज़ पहुँच चुकी थी, उसे उतने से ही सन्तुष्ट हो जाना पड़ा। कुछ कैदी काम के लिए बाहर जा चुके थे, उन्हें अजीब ढंग से बाँधा गया। बाहर जाने वाले कैदियों के पांव में लोहे का एक कड़ा पड़ा रहता है। अलार्म बजते ही लोहे की एक जंजीर उस कड़े में से निकाल कर किसी पेड़ या खम्भे पर लपेट दी जाती है, और उसमें ताला लगा दिया जाता है। उतनी देर के लिए जब तक कि फिर जेल न खुल जाय, कैदियों को पशु समझ लिया जाता है।

अलार्म बजने का दूसरा असर यह होता है कि जेल का हरेक अधिकारी, या नौकर, चाहे वह कहीं हो, या किसी दशा में हो, लाठी लेकर जेल की ओर भागता है, और हाजिरी देता है। वह दृश्य बड़ा कोलाहलपूर्ण होता है। दरोगा, नायब दरोगा, वार्डर, नम्बरदार आदि सब कर्मचारी धड़धड़ाते हुए चारों ओर भागने लगते हैं। जेल के अधिकारियों

की पाकेट में जो नादिरशाही अधिकार बन्द रहते हैं, वह अलार्म बजने पर निकल आते हैं। खतरे का घण्टा बजा और जेल का प्रत्येक अधिकारी रूस का जार बन गया।

'टन टन टन' खतरे का घण्टा अपने भीषण चीत्कार से बजने लगा, उम्मेद रोटी लेकर अपनी कोठरी की ओर बढ़ रहा था, जब उसने देखा कि अकबरखाँ उसके पीछे आ रहा है। उम्मेद ने कोठरी में पाँव रखा, और उसके पीछे अकबर खाँ ने कोठरी के सहन में प्रवेश किया। इतने में सीटी की आवाज सुनाई दी, और क्षण भर में ड्योढ़ी पर खतरे का घण्टा गर्जने लगा। उम्मेद के सामने यह पहला ही अलार्म हुआ था। वह भौचक्का-सा होकर पीछे की ओर देखने लगा। उसने देखा कि एक सिक्ख नम्बरदार कोठरी के सामने खड़ा हुआ सीटी दे रहा है, और अकबर खाँ घबराया हुआ-सा होकर बाहिर की ओर भागा जा रहा है। उस के पीछे उसने देखा कि सिक्ख नम्बरदार ने अकबर खाँ को झपट कर पकड़ लिया, और दोनों में गुत्थमगुत्था हो गई। इतने में ही दो-तीन फालतू सिक्ख नम्बरदार, जो पहले से ही बैठक में घूम रहे थे, अकबरखाँ पर टूट पड़े। अकबरखाँ को नीचे गिराकर सिक्ख नम्बरदारों ने अपनी चमड़े की पेटियों से मारना शुरू किया। इधर जमादार सिपाहियों ने जेल बन्द करना आरम्भ कर दिया। उम्मेद की कोठरी का द्वार भी बन्द हो गया, परन्तु सींखचों में से यह सम्पूर्ण नाटक दिखाई देता था, जिसका मुख्य पात्र उम्मेद स्वयं था।

थोड़ी देर में दरोगा से लेकर नम्बरदार तक जेल के सब कर्मचारी उस स्थान पर इकट्ठे हो गये। अकबर खाँ काफी पिट चुका था। अधिकारियों के आने से पहले जितने भी सिक्ख नम्बरदार या सिपाही आये, सभी ने अकबर खाँ को पीटा। दरोगा के आने पर पिटाई बन्द हो गई, और अकबर खाँ एक घायल शेर की तरह खड़ा हो गया।

दरोगा ने बयान लिए। सरदारसिंह ने बयान दिया कि उस दिन प्रातःकाल जब वह अपनी ड्यूटी पर घूम रहा था, और बैरक नम्बर एक

में कोठी नम्बर पाँच के पास पहुँचा तो उसे किसी के चिल्लाने की सी आवाज़ आई। उसने आगे बढ़कर देखा तो अकबर खाँ कोठरी नम्बर पाँच के अन्दर था, और उस कोठरी का लड़का चिल्ला रहा था। सरदारसिंह ने अकबरखाँ को आवाज़ दी तो अकबर खाँ ने वहां से निकल कर सरदारसिंह पर आक्रमण कर दिया, जिस पर सीटी बजानी पड़ी।

भागसिंह ने बयान दिया कि लड़के के चिल्लाने की आवाज़ मैंने सुनी थी। अन्य दो-तीन नम्बरदारों ने सरदारसिंह के बयान की पुष्टि की। इस प्रकार अकबर खाँ पर मुकद्दमा कायम हो गया। उम्मेद से भी बयान लिया। उसने सिवाय इसके कुछ न कहा कि अकबरखाँ कई बार मेरे पास आया और फुसलाने की चेष्टा की, पर मैंने अस्वीकार कर दिया। उस दिन के बारे में प्रश्न होने पर उम्मेद चुप रहा। उसे बहुत बार पूछा गया, दो-चार थप्पड़ भी जमाये गए, पर वह सर्वथा मौन रहा। झूठा अपराध लगाने को उसका जी नहीं चाहता था, और सच्ची बात न कहने के सम्बन्ध में वह भागसिंह से वायदा कर चुका था। मामला तैयार करके कर्नल साहब (सुपरिन्टेन्डेन्ट) के सामने पेश किया गया। कर्नल साहब ने दरोगा की राय मांगी। दारोगा स्वयं पठान था। उसने साहब को समझा दिया कि मामले की जड़ में पठानों और सिक्खों का द्वेष है, इस कारण अकबरखाँ को कोई सख्त सज़ा न देनी चाहिए। कर्नल ने भी इस बात को पसन्द किया। पठान नम्बरदारों के बल पर तो पंजाब की कई जेलें चलती हैं। उनमें असन्तोष पैदा करना सरकार को पसन्द नहीं, अकबरखाँ को दो-चार दिन में दिल्ली जेल से फीरोज़पुर जेल में तबदील कर दिया गया, बस यही उसके लिए काफी सजा समझी गई।

आखिर वह दिन आ पहुँचा जब उम्मेद को बेंत लगने वाली थी।

फांसी और बेंत की सजा देने के समय जेल के अधिकारी बड़ी सावधानता से काम लेते हैं। वह सारे जेल को बन्द कर देते हैं, ताकि सजा पाने वाले की सहानुभूति में जेल के कैदी फिसाद न कर दें। उस दिन

भी जेल बन्द था।

दफ्तर के सामने जेल के अन्दर के चक्कर में टिकटिकी लगाई गई। टिकटिकी उस ढांचे को कहते हैं, जिस पर उस व्यक्ति को बांधा जाता है, जिसके बेंत लगने वाली होती है। दण्डित व्यक्ति को उसमें ऐसे ढंग से बांधा जाता है कि हाथ और पांव टिकटिकी से कसे रहें और पीठ मार के लिए खुली रहे।

मारने के लिए बेंतें बहुत यत्न से तैयार की जाती हैं। कई दिन तक बेंतों को निरन्तर पानी में रखा जाता है, ताकि वह खूब लचक के साथ चोट कर सकें। दण्ड के दिन उन्हें पानी में से निकाला जाता है, और तेल लगाकर आपरेशन के योग्य बनाया जाता है। जैसे पुराने क्षत्रिय अपनी तलवार को मांज-धोकर चमकाते थे, वैसे ही जेल के कर्मचारी बेंत को तैयार करते हैं।

बेंत मारने वाला व्यक्ति भी जेल में विशेष आदर का स्थान रखता है। एक मज़बूत और क्रूर स्वभाव के कैदी को यह काम दिया जाता है। उस पर जेल के अधिकारियों की कृपादृष्टि रहती है क्योंकि वह उनका हथियार समझा जाता है। उसे अन्य कैदियों से विशेष भोजन दिया जाता है, दूध-घी आदि द्वारा उसे पाला जाता है। जिस दिन बेंत लगानी हो, उस दिन तो उस की ईद होती है। प्रायः बेंत लगाने से पहले उसे शराब या वैसा ही कोई अन्य मादक रस दिया जाता है, ताकि वह पूरी कठोरता से बेंत लगाने का काम कर सके।

जिस के बेंतें लगेंगी, वह तो कई दिनों तक मानो बेंतों में ही जीता है। दिन की चर्चा और रात का स्वप्न—उसके लिये बेंत के सिवा कोई वस्तु शेष नहीं रहती। कैदी पर शायद फांसी का इतना डर नहीं रहता जितना बेंत-ताड़न का। फांसी का कष्ट कुछ मिनटों और कभी-कभी कुछ क्षणों में ही समाप्त हो जाता है, परन्तु बेंतों का कष्ट घण्टों का ही नहीं, प्रायः दिनों और महीनों तक फैल जाता है। इस कारण कैदी लोग फांसी से तो डरते हैं, परन्तु बेंतों की सजा से कांपते हैं।

उम्मेद ने न कभी बेंत खाई थी, और न बेंत लगते देखी थी। कैदियों से सुनकर उसने अपने मन के सामने बेंत-ताड़न का जो चित्र खैंचा था, वह बड़ा भयानक था। एक टिकटिकी लगेगी जिस पर उसे बांधा जायगा, बांधने से पूर्व उसे नंगा कर दिया जायगा, और नंगे शरीर पर कस-कस कर बेंतें मारी जायेंगी, यह सब चित्र उम्मेद के हृदय-पटल पर सिनेमा के चित्रों की तरह आते और चले जाते थे।

पहले दिन शाम के समय उसकी भार्गसिह से बातचीत हुई। अकबर खाँ वाली घटना के पीछे भार्गसिह से उसका परिचय और भी बढ़ गया था। भार्गसिह ने उम्मेद की जीवन-कहानी बड़े ध्यान से सुनी, और घर का पता पूछ लिया। उम्मेद को भार्गसिह का विशेष परिचय तो कुछ न मिला, क्योंकि भार्गसिह अपने विषय में बहुत ही मौन रहता था, परन्तु उम्मेद इतना अवश्य जान सका कि वह किसी बड़े गिरोह का सरदार है, और अपनी दो वर्ष की सजा समाप्त करके थोड़े ही दिनों में जेल से छूटने वाला है। उसे बातचीत में यह भी पता चल गया कि भार्गसिह जिस गिरोह का सरदार है, वह मुल्तान से लेकर दिल्ली तक फैला हुआ है।

बेंत लगने की चर्चा चलने पर भार्गसिह ने उम्मेद को अपने अनुभवों की कहानी सुनाई। उसे दो बार बेंत की सज़ा मिल चुकी थी। भार्गसिह ने बड़े अभिमान से बतलाया कि जब मेरे बेंतें लगीं, तब मैंने एक बार भी मुँह से, 'हाय' या 'आह' का शब्द नहीं निकाला, और हर चोट पर केवल 'वाह गुरु' का जाप करता रहा। उम्मेद के हृदय में भार्गसिह की कहानियों से कुछ ढारस बँधा। उसके दिल में पहले से ही भार्गसिह के लिये एक आदर का भाव विद्यमान था, बेंत की कहानी ने उस आदर भाव को और बढ़ा दिया। वह सोचने लगा कि देखो, यह आदमी कितना वीर है, और कितना उदार है। बातचीत के अन्त में भार्गसिह ने उम्मेद से कहा कि 'बेंत लग जाने पर तुझे अस्पताल ले जाया जायगा, इसीलिये आज हमारी आखिरी मुलाकात है। मुझे दिल्ली जेल से रिहा नहीं किया

जायगा। मेरा घर भेरा जिले में है। वहीं ले जाकर मुझे छोड़ा जायगा। तू मुझे याद रखना, मैं कभी-न-कभी फिर तुझ से मिलूँगा।' उम्मेद को भागसिंह के अलग होने का वहुत दुःख हुआ, क्योंकि उस जेल की भयानक अंधेरी रात में भागसिंह ही उसे प्रकाश की रेखा के समान दिखाई देता था।

सुबह सात बजे के लगभग उम्मेद को लेने के लिये नम्बरदार आ पहुँचा। बेंत के विचार से ही लड़के का दिल धक्-धक् कर रहा था, उस नम्बरदार को देखकर उसके पांव कांपने लगे, परन्तु उसी समय उसे ध्यान आया कि भागसिंह ने बेंत लगने पर आह भी नहीं की थी। इसी विचार ने उसके पांव मजबूत कर दिये और हृदय को कड़ा बना दिया। वह स्थिरगति से नम्बरदार के साथ चल दिया।

उम्मेद के पहुँचने से पूर्व ही चक्कर में टिकटिकी गड़ चुकी थी, और बहुत से जेल के अधिकारी पास खड़े हुये थे। बड़े साहिब (सुपरिन्टेण्डेण्ट) एक अंग्रेज़ सिविल सर्जन थे, वह स्वयं विद्यमान थे। दरोग़ा साहिब अपनी खाकी वर्दी में साहिब वहादुर के सामने झुके हुए और दबे हुये खड़े थे। जेल का डाक्टर बहुत-सी दवा, और एक स्ट्रैचर को संभाले हुए कोने में खड़ा था। बहुत से जमादार और नम्बरदार अपनी-अपनी वर्दियां डांटे हुए टिकटिकी के चारों ओर तैनात थे। टिकटिकी के पास ही एक पेड़ के सहारे एक दर्जन बेंतें गड़ी चमक रही थीं। उन बेंतों के पास मस्त सांड की तरह झूमता हुआ एक पठान नम्बरदार दिखाई दे रहा था।

उम्मेद इस दृश्य को देखकर एक बार तो घबरा गया। उस नर-सांड की भयानक मूर्ति देखकर बालक का दिल टूटने लगा। इस समय वह मौके पर पहुँच चुका था, और बड़े साहिब के सामने खड़ा कर दिया गया था। उस क्षण भर में उम्मेद के हृदय में विचारधारा बड़े ज़ोर से बह गई। वहाँ के दृश्य को देखकर उसका हृदय काँप रहा था। मेरे कपड़े उतारे जायेंगे और इतने लोगों के सामने पीटा जायगा, यह लज्जा

उसे जमीन में गाड़े दे रही थी। बेंत और बेंत मारने वाले की मूर्ति देखकर उसके पाँव काँप रहे थे। उसे चोरी के अपराध में सजा दी गई थी। मन में विचार उठा कि चोरी करने से ही मुझे आज का दिन देखना नसीब हुआ। न चोरी करता और न यह लज्जा उठानी पड़ती। उम्मेद के हृदय में उस समय अपने आवारगी और चोरी के जीवन से ग्लानि का भाव पैदा हुआ। उस भाव से प्रेरित होकर उसने सुपरिन्टे-ण्डेण्ट की ओर उत्सुकताभरी दृष्टि डालकर कहा—

साहिब, मैं आपसे एक बात कहना चाहता हूँ।

साहब अच्छी तरह हिन्दुस्तानी नहीं समझते थे। दरोगा की ओर देखकर बोले—What does he say? दारोगा ने समझाया कि लड़का कुछ कहना चाहता है। साहब ने इशारा किया कि कहने दो। उम्मेद ने दरोगा की ओर देखकर हृदय के भावों को इस प्रकार प्रकाशित किया। उसने कहा—

मुझे अफ़सोस है कि अपनी गरीबी से मजबूर होकर मैंने चोरी करने की आदत को पड़ने दिया। साहब, अब आगे से मैं कभी चोरी नहीं करूँगा। मुझे माफ़ कर दीजिये।

साहब को दरोगा ने उम्मेद की बात का मतलब समझाया, तो उसके होंठों पर एक व्यंग्य और अपमान से भरी हुई मुस्कराहट दिखाई दी। उसने दरोगा से कहा कि इस लड़के को कह दो कि मैं मजिस्ट्रेट नहीं हूँ। मैं जेल का सुपरिन्टेण्डेण्ट हूँ। मेरा काम माफ़ करना नहीं है। क़ानून किसी की हिमायत नहीं कर सकता। चोर को सजा अवश्य ही दी जायगी।

उम्मेद को यह जवाब कड़वा मालूम हुआ। उसके दिल पर चोट सी लगी, और दुःख होने लगा कि मैंने कमजोरी की बात मुँह से क्यों निकाली। परन्तु उसने जो कुछ कहा था, डर कर नहीं, बल्कि कपड़े उतारने और सब के सामने कोड़े लगने की कल्पना से लज्जित होकर कहा था। उसके कहने में कोई बनावट नहीं थी। उसने जो अनुभव

किया, कह डाला। साहिब के उत्तर से उसका हृदय बहुत विक्षुब्ध हुआ। वह चुप हो गया।

इधर हुकूमत की गाड़ी का सिग्नल हो चुका था। उसके लिए एक व्यक्ति क्या चीज़ थी। सिग्नल हो चुका है, गाड़ी चलनी चाहिए। उम्मेद के हृदय में पश्चात्ताप है, इससे शासकों को क्या मतलब? साहिब ने कहा—Harry up Do'nt waste time. (जल्दी करो, समय ख़राब मत करो।) दरोग़ा साहिब ने नम्बरदार को इशारा किया। नम्बरदार ने उम्मेद का हाथ पकड़कर झटके से अपनी ओर घसीट लिया और दबी ज़बान से दो-एक गालियाँ भी सुना दीं। इस व्यवहार से उम्मेद के हृदय की अग्नि भड़क उठी। उसकी आँखों में ख़ून उतर आया, शरीर काँपने लगा, वह नम्बरदार के कब्ज़े से निकलने के लिए छटपटाने लगा।

साहब के सामने यह गुस्ताख़ी! अब वह बलात्कार की भारी मशीनरी चलायमान हो गई। कई हट्टे-कट्टे सिपाहियों ने उस बच्चे को चारों ओर से घेर कर कब्ज़े में कर लिया और कपड़े उतारने का उद्योग करने लगे। उम्मेद भी आपे से बाहिर हो रहा था। वह किसी को हाथों से मारता, किसी को पैर से धकेलता, और किसी को दाँतों से काटता था। कोई दस मिनट के प्रयत्न से जेल के कर्मचारियों ने उम्मेद पर पूरी तरह काबू पाया। इस खैंचा-तानी में कई नम्बरदारों की पगड़ियाँ उतर गईं, कइयों के हाथों पर दाँत के निशान पड़ गये और उम्मेद के कपड़े फट गये।

उम्मेद को नंगा करके टिकटिकी से बाँध दिया गया। उस समय वह पश्चात्ताप का भाव, जो एक क्षण भर के लिए उसके दिल में पैदा हुआ था, बलात्कारियों के प्रति क्रोधाग्नि में पड़कर भाप बन चुका था, और अब उसके स्थान पर आपत्ति के लिये उपेक्षा और गर्व का भाव पैदा हो रहा था। जो लज्जा बालक के हृदय में पश्चात्ताप की भावना को जन्म देने के कारण हुई थी, वह बलात् नष्ट कर दी गई थी। अब

उसके कपड़े उतर चुके थे। उसके हृदय में उत्पन्न हुए प्रायश्चित के अंकुर को अपमान की लू ने जला दिया गया था। उस समय उम्मेद के चित्त की यह दशा थी कि वह संसार को अपना विरोधी मान रहा था, और अकेला ही उससे लड़ने की तैयारी कर रहा था। भार्गसिंह ने उसे सुनाया था कि बेंत लगने पर वह फ़ौलाद की तरह दृढ़ रहा था और दुःख या पश्चात्ताप का एक भी शब्द उसके होंठों से नहीं निकला था। उम्मेद के मन में इस समय भार्गसिंह के कहे हुए शब्द घूम रहे थे।

साहिब ने इशारा किया कि बेंत लगानी आरम्भ की जाय। वह मस्त सांड, जिसे दूध पिलाकर इस राक्षसी काम के लिये तैयार किया गया था, अपने स्थान से झूमता हुआ चला और वृक्ष के तने के सहारे खड़ी हुई बेंतों में से एक को उठा लिया। वह बेंत बहुत लम्बी, उम्मेद की लम्बाई के लगभग बराबर होगी। उसे उसने खुले हाथ में लिया, लचका कर देखा, और हल्की-सी मुस्कराहट के साथ उस बारह बरस के बच्चे पर प्रहार करने के लिए उद्यत हो गया। उम्मेद ने आँखें बन्द करलीं और प्रहार की प्रतीक्षा करने लगा।

दरोग़ा ने आज्ञा दी। जल्लाद ने चार-पांच कदम पीछे से लपककर बेंत का भरपूर हाथ उम्मेद की पीठ पर जमाया। उफ ! उस बालक का शरीर थर्रा उठा। इतनी वेदना और इस क्रूरता के साथ। उसके मुँह से एक दम 'हाय माँ' का शब्द निकलने के लिए तैयार हुआ, परन्तु 'हा···' करने के साथ ही, मन में दूसरा भाव उठा। क्या मैं इन राक्षसों के सामने रोकर अपनी दीनता प्रकट करूँगा ? यह मेरे क्रन्दन पर हँसेंगे। भार्गसिंह मुझे कायरता पर लज्जित करेगा। वह 'हा' का शब्द मुँह से निकलने के साथ विलीन हो गया। उम्मेद के दाँत भिच गये, मुट्ठी बँध गई, और वह टिकटिकी के साथ और भी अधिक वेग से चिपक गया। जेल के एक कर्मचारी ने ज़ोर से कहा—'ए···ए···एक'।

उस जल्लाद ने पहली बेंत अलग रख दी और दूसरी बेंत उठा ली। लगभग एक मिनट खड़ा होकर उसने विश्राम किया और फिर पाँच

कदम पीछे हटकर, और जोर भरकर, वह आगे लपका और बेंत का दूसरा वार किया। यह वार पहिले से कुछ अधिक जोरदार था, क्योंकि अब मारने वाले का खून गर्म हो रहा था। पहले वार ने उम्मेद की पीठ पर एक लम्बा गढ़ा बना दिया था, पर दूसरे वार ने उसमें से हल्की-सी रुधिर की धारा बहा दी। उम्मेद का सारा शरीर काँप उठा और अन्दर से एक गहरी आह निकली, जो बड़े अव्यक्त रूप में बाहर सुनाई दी। बालक ने आँखें जोर से मींच लीं, और दाँतों को और बल से एक-दूसरे में गड़ा दिया। कर्मचारी ने फिर घोषणा की 'दो···ओ···ओ'।

हर वार के पश्चात् जल्लाद पीछे हटता था, और डाक्टर आगे बढ़ता था। वह उम्मेद की नाड़ी को टटोल कर देखता था कि शिकार में अभी मार खाने के योग्य जान बाकी है या नहीं। वह देखकर हट जाता और दारोगा को इशारा करता कि सब ठीक है, चलने दो। दारोगा इशारा कर के जल्लाद से कहता, प्रहार करो और जल्लाद अधिक उत्साह और जोश के साथ बेंत को तानकर बालक की पीठ पर जमाता।

ती ई—ई—न। चा आ आर। पाँ आँ आ च। इसी प्रकार सिल-सिला जारी रहा। हरेक वार के साथ जल्लाद का खून अधिक जोश में आ रहा था, उसके हाथ की तेजी बढ़ रही थी। उम्मेद के शरीर का यह हाल था कि बेंत का हरेक वार अपने साथ थोड़ा बहुत खून लेकर जाता था। कई स्थानों पर गोश्त के टुकड़े भी निकल पड़े थे।

परन्तु वह तो अपराधी था। पहले तो उसने नारंगियों की चोरी की, फिर पुलिस वाले पर आक्रमण किया, फिर जेल के दफ्तर में जेल के अधिकारियों की जान लेने का यत्न किया, और साहब के सामने गुस्ताखी की, उसे क्षमा का दान कैसे दिया जा सकता था। साहब भी दृढ़ निश्चय किये खड़े थे कि आज इस लड़के को ऐसा सबक देना है कि जन्म भर न भूले।

बेंत के छठे वार तक उम्मेद ने बड़ी दृढ़ता से चोटों को सहा। उसे

कष्ट से बड़ी संगीन लड़ाई लड़नी पड़ी। यदि वह हरेक चोट के साथ चिल्ला सकता, तो कष्ट हल्का हो जाता। यदि मानसिक भाव किसी प्रकार प्रकट हो जाय तो वह हल्का हो जाता है। यदि भाप के निकलने का रास्ता बना रहे तो बरतन के उलटने का भय नहीं रहता। यदि भावों को जबर्दस्ती से बन्द किया जाय तो वह मनुष्य के लिए घातक हो जाते हैं। उम्मेद के साथ भी यही हुआ। बेंत की हरेक चोट को उसने दांत भींचकर और हाथों की मुट्ठी को बन्द कर के सहा। इसका उस पर बहुत बुरा असर हुआ। छठे बार के पीछे उसकी आँखें मिच गईं। और होश जाते रहे। हरेक चोट के पीछे छोटा डाक्टर देखता था। जब उसने नब्ज़ पर हाथ रखा तो उसे बहुत सुस्त पाया। छोटे डाक्टर का नाम मुहम्मदअली था। वह पंजाब का रहने वाला था। बेचारा जेल की नौकरी में आ फँसा था, दिल का अच्छा था। उसे प्रारम्भ से ही लड़के पर दया आ जाती, पर बड़े साहब की नाराज़गी के डर से कुछ भी नहीं बोल सकता था। अगर उसके हाथ में होता तो वह उम्मेद को बेंत लगने के अयोग्य कहकर छोड़ देता पर सिविलसर्जन के सामने उसकी बात कौन सुनता! पर अब कोई दूसरा रास्ता नहीं था। उसने रिपोर्ट की कि लड़का बेहोश हो गया है, अब बेंत की चोट को बर्दास्त नहीं कर सकता। जेल का नियम है कि यदि डाक्टर किसी कैदी को शारीरिक सज़ा पाने के अयोग्य घोषित करदे तो उसकी सज़ा उस समय रोक दी जाती है। उम्मेद की सजा भी रोक दी गई। बेंत मारने वाले नर-सांड के हाथ में सातवीं बेंत लचकती रह गई। जब उसे बेंत वापिस रख देने का हुक्म हुआ तो वह बड़ा दुःखी हुआ, क्योंकि उसका खून खौल चुका था। बेंत मारने के समय उसे यह भी याद आ रहा था कि उम्मेद वह लड़का है, जिसके सिक्ख दोस्तों के कारण एक पठान नम्बरदार को सज़ा मिली थी। जेल के अधिकारियों की प्रायः यही नीति रहती है कि बेंत मारने के लिए विरोधी दल के आदमी को चुना जाता है। प्रायः हिन्दू पर मुसलमान और मुसलमान पर हिन्दू जल्लाद नियुक्त

किया जाता है। इसमें शासकों का दोष भी नहीं। याद रखना चाहिये कि संसार भर के शासक मनुष्यों की निर्बलता से लाभ उठाते रहे हैं, तब जेल के अधिकारी ही हिन्दुस्तानियों की साम्प्रदायिक निर्बलता से लाभ क्यों न उठावें।

उम्मेद को टिकटिकी पर से उतार कर स्ट्रेचर पर डाल दिया गया, और दवा शरीर पर लेपकर हस्पताल पहुँचा दिया गया। उसके शरीर की शोचनीय दशा थी। चोटों से शरीर पर छः लम्बे-लम्बे घाव हो गये थे। कई जगह खून के फ़व्वारे चल रहे थे, तो कई स्थानों पर गोश्त के टुकड़े उखड़ आये थे। कई घण्टों तक तो उसकी मूर्छा ही न टूटी। जब टूटी, तो वह अपने साथ कोई सुख न लाई, क्योंकि चेतना के साथ असह्य वेदना का अनुभव होने लगा।

जेल के अस्पताल में, और जेल में भी दो ही की पूछ है। या तो ऐसे धनी की, जिसके पास रिश्वत देने के लिये खुला पैसा हो, या ऐसे बदमाश की, जिसकी जेल में धाक हो। बाकी कैदियों की तो मिट्टी ख़राब है। जेल के अस्पताल में हरेक चीज़ के दाम पड़ते हैं। ग़रीब और कमज़ोर बीमारों के लिये तो कड़वे पानी और कच्चे चावलों के सिवा कुछ भी नहीं। उम्मेद न धनी था, और न अभी तक मशहूर बदमाश बना था। बेचारा मृत्यु और जीवन की मध्यवर्ती भूमि पर लगभग एक मास तक विचरता रहा। एक महीने के पीछे वह इस योग्य हुआ कि खाट पर से उठकर खड़ा हो सके। शरीर इतना निर्बल हो गया था कि सहारे के सिवा दो कदम भी नहीं चल सकता था।

जब खाट पर से उठा तो उम्मेद बदला हुआ आदमी था। उसके हृदय पर बेंत लगने का दृश्य फौलादी अक्षरों से अंकित हो चुका था। थोड़ी देर के लिए उस दृश्य को देखकर हृदय में लज्जा पैदा हुई थी, और पश्चात्ताप का भाव भी उत्पन्न हुआ था। उसने मनुष्यता पर विश्वास करके साहब से अपील भी कर दी थी। साहिब ने उम्मेद के भावों को नहीं समझा। उसने उस अपील को डर का परिणाम समझ

कर ठुकरा दिया। उम्मेद के दिल में इससे बड़ी ग्लानि हुई। वह मनुष्यता की एक लहर, जो दण्ड की अपमान-जनकता को देखकर उसके भावुक हृदय में पैदा हुई थी, बेंत की ठोकरों से निकाल कर बाहर कर दी गई। बेंत लगने के पीछे वह पक्का अपराधी हो गया। बेंत की चोटों ने चमड़ी उधेड़ कर उसके शरीर में अपराध का टीका लगा दिया था। उसे मनुष्यता से घृणा होने लगी थी। समाज और सरकार के लिये उसके हृदय में द्वेष की अग्नि प्रज्वलित हो गई।

उम्मेद जेल में एक भटका हुआ लड़का बनकर प्रविष्ट हुआ था, जेल ने थोड़े ही समय में उसे एक कठोर अपराधी बना दिया।

बेंत लगने के लगभग डेढ़ मास पश्चात् डाक्टर से रिपोर्ट मांगी गई कि उम्मेद शेष छः बेंतों की सजा पाने के योग्य है या नहीं। डाक्टर के हृदय में अभी जेल के ज़हर ने पूरी तरह घर नहीं किया था। उसने रिपोर्ट कर दी कि वह बहुत निर्बल हो गया है, और शायद छः मास तक भी इस योग्य न हो कि बेंत की मार को सह सके। शासन की भूख बड़ी जबर्दस्त है। वह कभी आधी खुराक से तृप्त नहीं होती। बारह बेंतों की सजा मिली है। वह तो पूरी होनी ही चाहिये। एक बार में न हो तो दो बार में सही। परन्तु जब जेल के अधिकारियों को यह मालूम हुआ कि अपराधी को पूरी सजा देकर कानून का पेट भरने के लिये छः मास की प्रतीक्षा करनी पड़ेगी, तो उन्होंने हाकिमों के पास रिपोर्ट भेजकर सिफारिश की कि अपराधी क्योंकि बहुत कमजोर हो गया है, और उसे सजा पूरी करने के लिये छः महीने तक जेल से दो वक्त रोटी देनी पड़ेगी, इस कारण उसे जेल से मुक्त कर दिया जाय। हाकिमों ने बड़ी दया करके उम्मेद को रिहाई का हुक्म भेज दिया। एक दिन प्रातःकाल सात बजे नम्बरदार ने उसे सूचना दी कि उसकी रिहाई का हुक्म आ गया है, और ड्योढ़ी में बुलाया गया है।

जेल के द्वार से छूटकर उम्मेद सीधा सब्ज़ीमण्डी की ओर रवाना हुआ। वह केवल बारह बेंत खाने के लिए जेल भेजा गया था, परन्तु अब

वह तीन महीने के पीछे वहाँ से बाहिर जा रहा था। इन तीन महीनों में वह रात और दिन अपनी मां को याद किया करता था। यदि कोई स्मृति कभी सन्तोष देती तो माँ की। वह दूर से ही मुझे देखकर पुकारेगी, "आ गया बेटा।" मैं भागकर उसकी गोद में जा बैठूंगा। वह मुझे प्यार करेगी। इस प्रकार सुखमय चित्रों से वह अपने कष्ट के दिनों को थोड़ा-बहुत सरस बना लिया करता था। जेल के द्वार से निकल कर वह सीधा सब्जीमण्डी की ओर रवाना हो गया।

४

मजदूर-जीवन

हमने अनारो को सब्ज़ीमण्डी थाने के बाहर 'हाय बेटा' के आर्तनाद के साथ सिपाही के धक्के से गिरते हुये छोड़ा था। वह गिर गई, और देर तक बेहोशी की हालत में वहीं पड़ी रही। सिपाही को तो ध्यान भी न रहा कि किसी गरीब बुढ़िया को धक्का देकर बाहर फेंका था और पुलिस के फेंके को उठाने की हिम्मत किस में है। राह चलते लोग देखते तो बचकर दूर से निकल जाते। कोई कहता, 'चोर थी, पुलिस वालों ने मारपीट कर अलग कर दिया।' दूसरा कहता, 'नहीं, बेचारी भीख माँगती थी, मर गई मालूम होती है, कहते और चले जाते। उन्हें किसी के मरने जीने से क्या मतलब ? बेचारी अनारो कोई दस-पन्द्रह मिनट तक इसी हालत में सड़क के किनारे पड़ी रही।

बशीर उसे थाने के दरवाज़े पर छोड़कर दूर नहीं गया। भिखमंगे का भेष बनाये पास ही एक गली में दुबका हुआ सड़क की ओर झांक रहा था। उसने अनारो को सड़क पर गिरते देखा, परन्तु पुलिस के डर से पास आने की हिम्मत न हुई। जब दस-पन्द्रह मिनट बीत गये तब वह हाथ में भीख का प्याला लिए उठा और आहिस्ता से अनारो के पास पहुँचा। उस समय अनारो की बेहोशी कुछ हल्की हो रही थी, वह आँखों और होठों को खोलने की चेष्टा कर रही थी, मानो गये हुये प्राण उन

रास्तों से शरीर में घुसन का प्रयत्न कर रहे हों। पास ही पानी का नल था। बशीर वहाँ गया और अपने प्याले में पानी भर लाया। उसने एक बार थाने की ओर देखा कि कोई ताक तो नहीं रहा। वहाँ सुनसान दिखाई दिया, हृदय को आश्वासन हो गया कि कोई डर नहीं है। बशीर ने अनारो के मुँह में पानी की बूंदें टपकानी शुरू कीं, थोड़ी देर में अनारो ने आँखें खोल लीं और करवट बदल कर बशीर से बोलना चाहा, परन्तु कुछ बोल न सकी। होंठ फड़-फड़ाये, जिससे बशीर को ऐसा प्रतीत हुआ कि अनारो उम्मेद का नाम ले रही है।

बशीर ने अनारो को उठाकर खड़ा किया और कमर में हाथ की टक देकर आहिस्ता-आहिस्ता गली की ओर ले चला। वह बेचारी अध-मुई-सी हो रही थी। पूरी तरह चेतन भी नहीं हो पाई थी। बशीर के कन्धे पर सिर डाले हुए वह कठपुतली की तरह जाने लगी। गली में जाकर बशीर ने उसे दीवार के सहारे से बिठा दिया और हवा की, जिससे वह पूरी तरह चेतन हो गई। चेतन होकर उसने एक बार आश्चर्य से इधर-उधर देखा, और बशीर को पहिचान कर पूछा—बेटा बशीर! क्या तुझे मालूम है, उम्मेद को पुलिस वाले कहाँ ले गये? उन्होंने उसे मारा पीटा तो नहीं। वह मेरा इकलौता बेटा है। मेरे और कुछ भी नहीं है। वही मुझ गरीबनी का धन है। वह मेरी जिन्दगी का सहारा है। मैंने उसे बड़ी मुसीबतों से पाला है। अगर पुलिस वाले उसे मुझसे छीन ले गये, तो मैं मर जाऊँगी। हाय बेचारे को पुलिस वाले किस बुरी तरह घसीट रहे थे। और वह मेरी आवाज सुनकर कैसे भागकर आया था। मेरा बेटा मुझे बड़ा प्यार करता है। हाय मेरा बेटा मेरे बिना कैसे रहेगा? उसे दो वक्त रोटी कौन खिलायेगा? अरे तू बोलता क्यों नहीं? बता, बता मेरा उम्मेद कहाँ है? तू चुप क्यों है? क्या मेरे बेटे को राक्षस छीन ले गये? मैं उन्हें छीनकर न ले जाने दूँगी। वह कौन हैं मुझसे मेरे उम्मेद को अलग करने वाले। मैं अभी जाकर उन दुष्टों से अपने जिगर के टुकड़े को छुड़ाकर लाती हूँ। यह कहती अनारो अपनी

लठिया को सम्भाल कर उठने की चेष्टा करने लगी। बेचारा बशीर मां के उद्गार को चुपचाप खड़ा सुन रहा था। निश्चय न कर सका कि क्या कहे, और क्या करे। जब तक वह बोलती रही, तब तक तो बशीर चुप रहा, परन्तु ज्यों ही उसने उठने की चेष्टा की उसकी मानो नींद टूट गई। उसे अनुभव हुआ कि यदि इस समय अनारो को दिलासा न दिया गया तो वह कोई पागलपन कर बैठेगी। बशीर ने बड़े हलके हाथ से अनारो को उठने से रोकते हुए कहा—'अम्मा, तुम्हारा उम्मेद आराम में है। वह जल्द ही पुलिस से छूटकर घर आ जायगा। चलो हम लोग वहीं चलें।'

अनारो उछलकर एकदम खड़ी हो गई। उसके चेहरे पर प्रसन्नता का उन्माद था। मेरा उम्मेद घर आ जायगा, और मैं यहाँ बैठी हूँ। वह बेचारा घर को सूना देखकर क्या कहेगा ? चलो बेटा, जल्दी चलो। हम घर चलें। मैं उम्मेद के आने से पहले ही चूल्हा जलाकर रोटी बना दूँगी। थोड़ा-सा आटा मिट्टी के बरतन में धरा है। तुम मुझे कहीं से आलू ला देना। उम्मेद आलू की सब्ज़ी बड़े स्वाद से खाता है। मैं उसे आज आलू के साथ रोटी खिलाऊँगी। चलो, चलो, जल्दी चलो।

बशीर के लिये उस बुढ़िया के कदम-से-कदम मिलाना कठिन हो गया। वह मानो हवा के घोड़े पर भागी जा रही थी। उसे एक ही चिन्ता थी कि कहीं बेटा मुझसे पहले पहुँचकर सूनी झोपड़ी में घबरा न जाय। बशीर परेशान था। झोपड़ी में जाकर अनारो को कितनी निराशा होगी, इसका उसे अब भान हो रहा था। परन्तु अब क्या करे। अगर सच्ची बात कह दे तो उसे डर था कि अनारो वहीं गिर पड़ेगी या थाने की दीवारों से सिर टकरा कर मर जायगी। वह चुपचाप तूफाना मातृ-स्नेह के उत्साह से भागती हुई अनारो को सहारा देता हुआ चला जाता था।

झोपड़ी का दरवाज़ा खुला पड़ा था। अनारो ने उसके पास पहुच कर आवाज़ दी—बेटा। अन्दर से कोई आवाज़ न आई। उसके चेहरे पर एक बार मुर्दनी-सी छा गई, परन्तु दूसरे ही क्षण म उस बावली ने

अपने को दिलासा देते हुए कहा—अच्छा। उम्मेद मुझसे पहले नहीं आया। अब उसे घर सूना नहीं मिलेगा। बेटा बशीर, जल्दी कर। मैं आग सुलगाती हूँ, तू कहीं से दो-एक आलू ला दे। देखना देर न करना। मैं उसके आने से पहले ही खाना तैयार कर दूँगी। बशीर किंकर्त्तव्य-विमूढ़ हो रहा था। अब क्या करे। अगर पहले ही झूठा दिलासा न देता, तो शायद उन्माद इतना न बढ़ता, परन्तु अब तो उसे अनारो की दशा देखकर डर लग रहा था। मामले को कुछ सुलझाने के लिये बोला—अम्मा, इतनी जल्दी क्या है। आराम से बैठो। मैं अभी जाकर उम्मेद को तलाश करके लाता हूँ। उसके आने पर उसकी पसन्द की चीज बनाना। अनारो को भला इतना धैर्य कहाँ था। उसने कहा—तो क्या मुझे मालूम नहीं कि मेरा उम्मेद किस चीज को पसन्द करता है। वह आलू की सब्जी को ही पसन्द करता है। अब तू देर मत लगा। वह बेचारा कब का भूखा है, जा आलू ले आ। तू नहीं लेने जाता, तो ले मैं ही जाती हूँ। बशीर घबराया। उसने सोचा कि अब यदि उठकर कहीं जायगी तो जीती वापिस न आयगी। उसे रोकने के लिये बोला—अच्छा अच्छा, मैं अभी जाकर आलू ले आता हूँ। तू तब तक आराम कर। परन्तु उस बेचारी को आराम कहाँ। उसे तो उम्मेद के आने से पहले रोटी बनाने की धुन सवार थी। बशीर के जाते ही उठी, चूल्हे में आग सुलगा कर उस पर एक बर्तन में पानी रख दिया और दरवाजे की चौखट पर आकर बशीर और उम्मेद का इन्तिजार करने लगी।

बशीर उम्मेद का दोस्त था। दोस्ती का हक निभाने की उसने चेष्टा की। चोरी के बाकी साथी तो उधर भूलकर भी नहीं आये, पर आखिर वह क्या करता। उसकी शक्ति भी परिमित थी और समय भी। वहाँ से टल कर बशीर ने सोचा कि अब अनारो घर पर पहुँच गई और थोड़ी देर प्रतीक्षा करके चारपाई पर सो रहेगी। निश्चिन्त होकर वह अपने घर चला गया और यह सोच कर खेल-कूद में लग गया कि कल जाकर अनारो का हाल-चाल फिर देख आऊँगा।

अगले दिन जब वह दिन चढ़े अनारो के दरवाजे पर पहुँचा तो वहाँ बहुत-सी भीड़ इकट्ठी हो रही थी। पास जाकर जो कुछ दृष्टिगोचर हुआ उससे उसको रोमांच हो आया। बेचारी उन्मादिनी माता उम्मेद के न आने से निराश होकर चौखट पर सिर पटक-पटक कर जान दे चुकी थी, सिर फटा हुआ था, लहू चौखट पर बह गया था। झोंपड़ी के अन्दर जाकर देखा तो चूल्हे पर हँडिया में आलुओं के उबालने के लिए पानी चढ़ा हुआ था, जो चूल्हे की आग बुझ जाने से ठण्डा पड़ गया था। उस चूल्हे की आग के साथ ही साथ बेचारी अनारो के जर्जरित शरीर की आग भी बुझ गई थी।

(२)

उम्मेद जेल के द्वार से निकल कर सीधा सब्जी मण्डी की ओर को चला। वह मानो एक स्वप्न में जा रहा था। उसकी आँखों में, दिल में और दिमाग में मां ही मां घूम रही थी। बस एक ही इच्छा थी कि मेरे पंख लग जायें, जिन से उड़ कर झोपड़ी के पास पहुँच जाऊँ और बाहिर से आवाज दूं—मां, मैं आ गया।

वह दो ढाई मील उम्मेद को २० मील के बराबर प्रतीत हुए। जब वह अपने मुहल्ले में पहुँचा, तब दिन चढ़ चुका था। मजदूर-पेशा लोग मजदूरी पर जा चुके थे या जा रहे थे। वह सोच रहा था कि कहीं माँ कारखाने न चली गई हो। ज्यों-ज्यों झोपड़ी पास आती थी, त्यों-त्यों उसके दिल की धड़कन बढ़ती जाती थी। कभी जल्दी पहुँचने के लिए भागने लगता, तो कभी सन्देह में पड़कर ठिठक जाता। इसी तरह उमंग, सन्देह और आशंका की तरंगों में दोलायमान उम्मेद झोपड़ी के द्वार पर जा पहुँचा। दरवाजा खुला पड़ा था, और बाहर एक बकरी बंधी हुई थी। उम्मेद दरवाजे पर बकरी को बँधा देखकर कुछ चौंक गया, क्योंकि उन्होंने कभी बकरी नहीं रखी थी। वह एकाएक अन्दर न घस सका, और बाहर से ही कुछ दबी हुई-सी आवाज से पुकारा—माँ।

दरवाज़े पर एक नई आवाज़ सुनकर एक दो वर्ष का बच्चा किवाड़

के पास आकर झांकने लगा। वह बच्चा सिर से पैर तक नंगा और धूल में सना हुआ था। हिन्दुस्तान में गरीबों के बच्चे प्रायः इसी तरह पलते हैं। उस बच्चे ने एक किवाड़ के पीछे से एक चोर आँख से उम्मेद को देखा तो डर गया, क्योंकि उम्मेद की सूरत भयानक हो रही थी। उसके सिर के बाल बेतहाशा बढ़कर बेरी के झाड़ की तरह रूखे और कंटीले हो गये थे। चेहरे पर जेल की भयानकता बरस रही थी। कपड़े काले, चिथड़े ही थे। बच्चे ने एक चीख मारी और दादी की टांग को पकड़ लिया। उसकी दादी भी इस समय दरवाजे के पास आ पहुँची थी। दादी की उम्र लगभग ७०साल की थी, कमर झुक गई थी, मुँह झुर्रियों का शयनगृह बना हुआ था, सफेद बाल गाढ़े के मोटे सूत की तरह लटक रहे थे, हाथ में एक लठिया थी, उसने उम्मेद की ओर ऐसे देखा, मानो किसी बाजार के कुत्ते को देख रही हो। उम्मेद माँ की जगह उस खूँसट को देखकर सन्न-सा रह गया। बुढ़िया ने अत्यन्त घृणापूर्ण तीखे स्वर में कहा—क्या है, रे ! यहाँ खड़ा मुँह क्यों ताक रहा है ? जाता क्यों नहीं ? यहां भीख वीख कुछ न मिलेगी। चला जा यहाँ से।

उम्मेद हिम्मत करके बोला—मेरी अम्माँ कहाँ है ?

बुढ़िया चमक उठी, बोली—कौन है रे तेरी अम्मां ? पाजी कहीं का अपनी माँ को यहाँ तलाश करने आया है। यह घर है कि श्मशान है जो तू अपनी मां को यहाँ तलाश कर रहा है। चला जा यहाँ से। तेरी माँ चली गई नरक में, उसे वहीं ढूंढ ले। यहाँ तेरा कोई नहीं है।

बुढ़िया के चिल्लाने से अड़ोस-पड़ोस के लोग घरों से निकल आये। उनमें से कई उम्मेद को पहिचानते थे। पहले तो वह लोग उस डरावनी सूरत को देखकर सहम-से गये, परन्तु पहिचानने में देर न लगी। उम्मेद भी उन्हें पहिचानता था। उसे शीघ्र ही सचाई का पता चल गया। उसकी माँ उसी रात मर गई थी, जब उसे हवालात भेजा गया। बेचारे अनाथ को खबर कौन दे, और क्यों दे ? ले-दे कर बशीर ही उनका हितू था, वह पुलिस से इतना डर गया था कि उधर आना जाना तक

छोड़ दिया था। माँ को मरे तीन मास हो गये और उम्मेद को पता भी न चला। जब उसने उस मर्मबेधी समाचार को सुना, तो सिर पकड़ कर वहीं बैठ गया।

इससे पहले उम्मेद ने अपने को कभी अकेला नहीं समझा था। जेल की अंधेरी कोठरी में भी वह मां को सदा अपने पास ही देखा करता था। आज पहली बार उसने इस विशाल संसार में अपने को अकेला पाया। भूमि उसके पांव तले से निकल गई, आकाश बज्र-सा बनकर उसके सिर पर गिरा और वह बेसुध होकर जहां खड़ा था, वहीं बैठ गया। न जान कितनी देर तक वह आंख बन्द किये बैठा रहा। उसे प्रतीत हो रहा था कि सारा संसार अग्निमय हो रहा है, चारों ओर आकाश में आग की लपटें ही लपटें फली हुई हैं, जिन के संसर्ग से पेड़ और घर धू-धू करके जल रहे हैं। उस आग के मध्य में केवल वही अकेला खड़ा हुआ है। उसके शरीर को लपटें छूती तो हैं, पर जलाती नहीं। शेष सम्पूर्ण जगत् अग्निप्रलय से नष्ट हो रहा है, केवल वही एक देखने वाला है। उस समय उस पर जून के महीने की तेज धूप पड़ रही थी, जिस से दिमाग और शरीर तप रहे थे। उसी तपिश में वह देर तक पत्थर की मूर्ति की तरह बैठा रहा। किसी के दिल में यह भी भाव पैदा न हुआ कि उसे कोई सान्त्वना का शब्द कहे या हाथ से पकड़ कर उठाये।

(३)

इस समाचार के फैलने में देर न लगी कि अनारो का बेटा जेल से छूटकर आ गया है। बशीर को उसके बाप ने कपड़े के कारखाने में नौकर करा दिया था। वहां वह रद्दी रुई के बण्डल बांधने के काम पर लगाया गया था। मजदूरों में अनारो को बहुत से लोग जानते थे। कानों कान खबर बशीर तक भी पहुँच गई। कैसा ही हो, पर उम्मेद के दोस्तों में से एक बशीर ही था, जिस में मित्रता को निभाने की भावना थी। बाकी मित्र तो पुलिस के प्यादे को देखते ही ऐसे भागे कि फिर

उधर का रास्ता न लिया, और न कभी दोस्तों की खबर पूछी। बशीर ने ज्यों ही उम्मेद के आने की खबर सुनी, किसी बहाने से छुट्टी लेकर वहाँ पहुंचा, जहां बेसुधी की हालत में बैठा हुआ उम्मेद धूप में अग्नि-प्रलय के सपने देख रहा था। बशीर ने उम्मेद का हाथ पकड़ कर उठाया, और जोर-जोर से पुकार कर उसकी मोह-निद्रा को तोड़ने का यत्न किया।

पहले तो उम्मेद कुछ भी न समझ सका। पथराई हुई आँखों से चारों और देखता रहा, परन्तु थोड़ी देर में उसने बशीर को पहिचान लिया। जब से उम्मेद ने मां की मृत्यु का समाचार सुना, उसकी आंखों से एक भी आँसू नहीं निकला था। मनुष्य का दुःखरूपी वाष्प द्रव होकर आंखों के रास्ते से तब निकलता है, जब सहानुभूति की ठण्डक का स्पर्श होता है। जहां सहानुभूति करने वाला कोई न हो, वहां आँसू बनते ही नहीं, निकलेंगे क्या ? ऐसी दशा में मनुष्य का दुःख भाप की तरह दिमाग़ और दिल में फैलकर उन्हें सर्वथा जड़ बना देता है—सोचने और अनुभव करने की शक्ति जाती रहती है। अब तक उम्मेद की यही दशा थी। बशीर के हृदय में उम्मेद से सहानुभूति की भावना विद्यमान थी, उसे पहिचानते ही उम्मद के रुंधे हुये आँसू सावन के बादलों की तरह बरस पड़े। उम्मेद अपने बालमित्र बशीर से लिपट कर कितना रोया, और कितनी देर तक रोया और यह उसे विदित ही नहीं हुआ।

बशीर उसे सहारा देते हुये अपने घर की ओर ले चला। रास्ते में उसे अनारो के मरने की कहानी भी सुनाता जाता था। उस कहानी के सुनने में उम्मेद के हृदय में यह बात बैठती जाती थी कि उसकी मां को मारने के असली अपराधी वह पुलिस के आदमी ही हैं, जिन्होंने उस बेचारी निर्बल बुढ़िया को धक्का देकर सड़क पर फेंक दिया, और उसके बेटे को पकड़कर हवालात में बन्द कर दिया। उसके हृदय पर पुलिस की जो अपराध माला अंकित हो रही थी, उसमें एक और दाना पिरोया गया। साथ ही जिस संसार ने उसे और उसकी मां को एकदम

भुला दिया, उस पर भी उसके हृदय में क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो रही थी। वह संसार का विद्रोही बनता जा रहा था।

बशीर उम्मेद को अपने घर ले गया। बशीर का बाप एक भला आदमी था। वह सब्ज़ी के ठेकेदार के यहाँ मुन्शी का काम करता था। जब भारत में खिलाफ़त का आन्दोलन जोर से चला, तब नवाबखां भी कांग्रेस की स्वयंसेवक-सेना में भर्ती हो गया था। उन दिनों जो मुसलमान वालन्टियर कोर में भर्ती होकर कांग्रेस के झन्डे के नीचे आए उनमें दो तरह के आदमी थे। कुछ ऐसे कट्टर मुसलमान थे जो कांग्रेस को खिलाफ़त की एक शाख समझते थे, परन्तु कुछ ऐसे भी थे, जिन पर राष्ट्रीयता की मुहर लग गई थी। ऐसे लोग कम थे, परन्तु उनका सर्वथा अभाव नहीं था। जब खिलाफ़त आन्दोलन कांग्रेस से अलग हो गया और उसमें मजहबी दीवानों की (तूती बोलने लगी तब) राष्ट्रीय मुसलमान उससे अलग होकर बैठ गये। उनमें ऐसी धर्मान्धता न थी कि कोरे खिलाफ़ती बनते, और इतनी ताकत न थी कि अपने सम्प्रदाय के उमड़ते हुए मज़हबी जनन का सामना कर सकते। ऐसे लोग सार्वजनिक हलचल से बिल्कुल अलग होकर घरों में बैठ गये। नवाब उसी तरह के मुसलमानों में से था। वह धर्मान्ध मुसलमान नहीं था। हिन्दू-मुसलमान सबको भाई समझता था, परन्तु अपने विचारों को दबाये रखता था। जब बशीर ने उसे उम्मेद की सब कहानी सुनाई तो उसका हृदय दया से उमड़ आया। उम्मेद राजपूत था, इस कारण मुसलमान के घर का बना अन्न नहीं खा सकता था। नवाबखां ने एक हिन्दू ढावे वाले के यहाँ उम्मेद के खाने का प्रबन्ध कर दिया।

दो-तीन दिन में उम्मेद कुछ सावधान हो गया। अब उसे एक ही चिन्ता थी कि अपने पांव पर कैसे खड़ा हो। नवाबखां की सहानुभूति और बशीर की दोस्ती, उसे कांटों की तरह चुभ रही थी। उसे दूसरे की कृपा पर पलना अखर रहा था। बशीर से सलाह करके उसने यही निश्चय किया कि कारखाने के जिस खाते में बशीर काम करता है वहीं

भी लग जाय । काम मिलन में अधिक अड़चन न हुई । नवाबखां
मेद को साथ लेकर कारखाने के सेक्रेटरी के पास गया और उसकी
परम्परा का वर्णन किया । उम्मेद के बाप और मां दोनों मिल में
कर चुके थे । यह बात उसके पक्ष में पड़ी । जब तक गांठ पर हाथ
ड़ता हो, तब तक सेक्रेटरी साहब बड़े उदार और भले आदमी थे ।
उ द पर दया दिखाने में कोई आपत्ति न प्रतीत हुई ।

उम्मेद भी रद्दी कपास के खाते में बशीर के साथ ही लगा दिया
ग स प्रकार उसका मजदूर-जीवन प्रारम्भ हुआ ।

५
पांच वर्ष पीछे

उम्मेद को मजदूर-जीवन में आये ५ वर्ष व्यतीत हो गये। इस जीवन में वह प्रायः अपने पुराने जीवन को भूल-सा गया था। शरीर से मजबूत था और खूब परिश्रमी था। ईमानदारी से मालिक का काम करता था। रद्दीखाते से कुछ ही महीनों में वह बुनता में चला गया, जहां काम सीखने में उसे अधिक समय न लगा। अब वह लाइनजाबर की जगह पहुँच गया है।

यह बढ़ती की उम्र है। वह खूब लम्बा हो गया है और शरीर भी फल गया है। होंठों पर हल्की-हल्की मूँछें दिखाई देने लगी हैं। सुबह साढ़े-पाँच बजे से घूघू के साथ ही उठता है, और मुँह धोकर कारखाने की ओर चल देता है। उठना और मिल की ओर चलना, यह काम उस की आदत में शामिल हो गये हैं कारखाने के दरवाजे पर हाजरी देना और फिर जाकर लूम पर खड़ा हो जाना भी स्वभाव का एक हिस्सा बन गया है। इसमें और उसके सामने चलते हुए लूम में केवल इतना ही भेद है कि वह तो रात को कोठरी में पड़ रहता है, पर लूम को उसी जगह विश्राम करना पड़ता है। अन्यथा दोनों एक से हैं, जीवित मशीन के जड़ पुर्जे हैं। दस घण्टों तक और कभी-कभी काम आ पड़ने पर बीस घण्टों तक खटाखट खटाखट के उस कड़वे और रूखे कोलाहल में काम

करते हुये उम्मेद को यह होश भी नहीं रहती कि वह जीवित वस्तु है, या लकड़ी या लोहे की कोई मूर्ति। उसकी आँखें और हाथ पुर्जे की तरह अपना काम किये जाते हैं, जब तक शाम का घूघू बाहिर निकलने की सूचना नहीं देता। अधिक काम के दिनों में तो कभी कभी २० घण्टों के बाद ही खुली हवा में निकलना नसीब होता है। जब कारखाने में से अन्य मजदूरों के साथ वह निकलता है, तब उसका हुलिया देखने योग्य होता है। बाल खड़े हुए, मुँह पर कालिमा, कपड़े मैले और पांव लड़खड़ाते हुए। आंखों में थकान इस सीमा तक होती है कि अपनी कोठरी तक पहुँचना मुश्किल हो जाता है। आदत ही है, जो वहाँ तक खींच ले जाती है अन्यथा जी तो चाहता है कि सड़क पर लेट जाय।

इसी निर्जीव जीवन में उम्मेद के पांच वर्ष व्यतीत हो गए। वह इस ढर्रे में बहुत आसानी से नहीं पड़ सका था। जब बशीर के बाप ने उसे समझा बुझा कर कारखाने में दाखिल कराया तब वह कुछ दिनों तक बहुत घबराया।

उसने कभी बन्धन का जीवन नहीं बिताया था। माँ की मृत्यु का दुःख अभी नया था और हृदय में वह विक्षोभ का तूफान भी अभी हल्का न हुआ था जो गत तीन महीनों की घटना के कारण उत्पन्न हुआ था। परन्तु समय सबसे बड़ा वैद्य है। वह तीव्र से तीव्र पीड़ा को हल्का कर देता है। धीरे-धीरे उम्मेद भी ढर्रे की पटरी पर पड़ गया। परिश्रमी मां बाप का बेटा था, परिश्रम करने में चुस्त निकला। शीघ्र ही अफसरों की आँखों पर चढ़ गया, और अठारह वर्ष की आयु पूरी होने से पहले ही असिस्टेन्ट हैडजाबर बन गया।

मजदूरी पर लगने से दूसरे वर्ष उम्मेद के साथ एक घटना घटी, जिसका यहां उल्लेख कर देना आवश्यक है। एक दिन जब वह थका मांदा कारखाने से आया, और मजदूर लाइन की २४ नम्बर की कोठरी के दरवाजे पर पहुँचा, जो उसका घर बनी हुई थी, तो उसके पड़ोसी ने बतलाया कि दिन में एक सिख बाब उम्मेद का ठिकाना पूछता हुआ यहाँ

आया था । अधिक पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि वह फिर रात को आने की बात कह गया है । उम्मेद को आश्चर्य हुआ, क्योंकि वह किसी सिख बाबू से परिचित नहीं था । उसके पड़ौसी का नाम रामाधीन तिवारी था । उम्मेद ने उससे पूछा—

तिवारी जी महाराज, यह तो बताओ कि उस बाबू का हुलिया कैसा था और उसने कोई काम भी बताया था कि केवल पता पूछकर चला गया ।

तिवारीजी उस समय अपनी कोठरी के सामने बैठे रसोई के बर्तनों को रगड़ रहे थे । पुरबियों की दिनचर्या में बरतन रगड़ने का विशेष स्थान है । उनके पहने हुए कपड़ों पर चाहे मनों मैल चढ़ा रहे, परन्तु बरतन पर धब्बा नहीं रह सकता । तिवारी जी की रात की ड्यूटी थी । खाना खाकर बरतनों पर रगड़ा चढ़ा रहे थे । पेट भरा हुआ था, इस लिए चित्त प्रसन्न था और मन में मौज थी । मस्तानी आवाज़ से बोले—

"भय्या देखा क्यों नहीं था ? बहुत अच्छी तरह देखा था । इतने पास से देखा था कि जो कुछ और पास आ जाता तो उसकी सब बबुआई निकल जाती । खटखट करता हुआ बरामदे में चढ़ आया और हमारी कोठरी में झाँक कर पूछने लगा—यहां कोई उम्मेदसिंह नाम का आदमी रहता है । हम उस वक्त रोटी बना रहे थे । तिवारी की रोटी कोई हँसी ठट्ठा है कि जो चाहे उसे देख ले । उसने चौखट पर हाथ रख कर मुँह अन्दर किया ही था कि हमने अंगोछा कन्धे पर से उतार कर रोटी पर डाल दिया । क्या नजर लगी रोटी को तिवारी कभी खा सकता है ?

उम्मेद ने रोक कर पूछा—तो क्या तिवारीजी, तुमने कभी किसी का देखा हुआ खाना नहीं खाया ?

तिवारीजी एक बरतन को रगड़ चुके थे, उसे एक ओर रख दिया, और दूसरे पर राख का रद्दा चढ़ाते हुए बोले—

नहीं बेटा, हमने कभी किसी का देखा हुआ कच्चा खाना नहीं

खाया। हां, पक्के भोजन की दूसरी बात है। उसे दृष्टिदोष नहीं लगता। भैया, अब तक तो धर्म अच्छा निभ गया, आगे का भगवान मालिक है। हाँ, एक बार ऐसा हुआ.........

उम्मेद ने देखा कि गाड़ी स्टेशन से छूट पड़ी है, और यदि लाल झण्डी न दिखाई गई तो जंकशन से इधर रुकने वाली नहीं, बीच में ही रोक कर बोला—

महाराज, इसे छोड़िये, यह तो आपने बताया ही नहीं कि उस सिख सरदार का हुलिया कैसा था ?

तिवारी जी कहानी का सिलसिला टूटने से कुछ खीज-से गये। अनमने-से होकर बोले—

और कैसा होता, पुलिस के ढर्रों का-सा कपड़ा पहने था। तुर्रेदार साफा, रेशमी कोट, सफेद सलवार और अंग्रेजी बूट डाटे हुए था। जाने भैया कौन था और तुझे क्यों पूछता था ?

उम्मेद सोच में पड़ गया।

(२)

रात के कोई दस बजे होंगे। उम्मेद खाना खाकर चारपाई पर लेट रहा था। अभी नींद नहीं आई थी, मन में तरह-तरह के विचार उठ रहे थे। तिवारी ने कहा था कि एक ऐसे हुलिये वाला सिख—जैसे पुलिस के अफसर हुआ करते हैं, उसे पूछता हुआ आया था। पुलिस में उसकी माँग क्यों हुई ? उसने तो कोई कसूर नहीं किया। मजदूर का मेहनती जीवन व्यतीत करता है। फिर पुलिस ने क्यों याद किया। आँखें मूँदे यही बातें सोच रहा था कि किसी ने उसके पैर को छुआ। उम्मेद घबराकर उठ बैठा। देखा तो एक लम्बे-चौड़े जवान को खाट के पांयते खड़ा पाया। जवान बोला—क्या उम्मेद तुम्हारा ही नाम है ?

उम्मेद ने कहा—हाँ, तुम्हें मुझसे क्या काम है।

जवान ने दबी जबान से कहा—उठो, और मेरे साथ चलो।

—मैं तुम्हारे साथ क्यों चलूँ ?

— तुम्हें मेरे साथ चलना ही पड़ेगा, सरदार ने बुलाया है।

—मैं तुम्हारे सरदार को नहीं जानता कि कौन है ? मैं उसके बुलावे से इस समय क्यों चलूँ ?

क्या तुम सरदार को नहीं जानते ? तो तुम सरदार भार्गसिंह को भूल गये ?

भार्गसिंह के नाम से उम्मेद चौंका। वह मज़दूर-जीवन में अपने बालपन और जेल के जीवन को भूल-सा गया था। एक तो वैसे ही मज़दूर के जीवन में सोचने, याद करने या सपना लेने की फुर्सत नहीं होती। वह ऐसा थकाने वाला, ऐसा रूखा, और ऐसा जड़-जीवन है कि चेतन मनुष्य को अचेतन कल का पुर्ज़ा बनाकर डाल देता है, फिर उम्मेद ने यत्न करके अपनी पूर्व स्मृतियों को भुलाया था। वह अपने बचपन के आवारा जीवन से डरता और जेल की याद से कतराता था। बशीर के बाप ने उसे बहुत समझा-बुझाकर नौकरी पर लगाया था और अब भी समय-समय पर उसे सीधे रास्ते पर लाने का यत्न करता रहता था। वह सदा उम्मेद की ऊँची प्रकृति को जगाने की चेष्टा करता और उसमें सफल भी होता। मेहनत करना मनुष्य का धर्म है, ईमानदारी की कमाई ही नेक कमाई है—बशीर का पिता उम्मेद को ऐसी-ऐसी बातें समझाया करता था। उम्मेद पर उनका असर होता था। वह ईमानदारी से कमाई करता था, और नेकी से खर्चता था। जब कभी पुरानी स्मृतियां उसके रास्ते में आना चाहतीं, तब वह उन्हें इच्छा के बल से मार भगाने की चेष्टा करता था। उसने अपने बाल-जीवन को पूर्व जीवन के समान भुला दिया था। भार्गसिंह के नाम ने मानो पूर्व-जीवन की स्मृति को जागृत कर दिया। वह सोच में पड़ गया। उसे किसी दिन भार्गसिंह से सहानुभूति मिली थी, भार्गसिंह को उसने एक आदर्श व्यक्ति माना था, उसे माता की भाँति समझकर प्यार किया था। पर अब तो वह उसे भुलाना चाहता था। जी कहता था, अपने उपकारी के पास चल। दिमाग़ कहता था, वह आवारा जीवन की स्मृति

है उसके पास मत जा। इसीलिये उम्मेद दुविधा में पड़कर सोचने लगा।

परन्तु भार्गसिंह का दूत ऐसा कच्चा नहीं था। उसने बढ़कर उम्मेद का हाथ पकड़ लिया और झटका देकर कहा—

क्या सोच रहे हो? सरदार के पास अधिक समय नहीं है। फिर उसे जाना है। वह तुमसे मिलने ही के लिये दिल्ली में ठहरा हुआ है, देर न करो। अन्यथा उसे स्वयं तुम्हारे पास आना पड़ेगा। चलो! जल्दी करो।

दुविधा के समय में मनुष्य की इच्छाशक्ति निर्बल हो जाती है। दुविधा होना इस बात का प्रमाण है कि मनुष्य अपनी इच्छा के मार्ग को स्पष्ट नहीं देख रहा। उस मानसिक निर्बलता की दशा में प्रायः वही भाव मनुष्य पर विजय पा जाता है, जिसे बाहिर से कुछ सहायता मिल जाय। यदि हम किसी व्यक्ति के बारे में सन्देह में पड़कर सोच रहे हों कि वह भला है या बुरा, और उसी समय कोई मनुष्य आकर उस व्यक्ति के विरुद्ध कुछ कह दे तो हमारा पूरा झुकाव उस व्यक्ति के प्रतिकूल हो जायगा। उम्मेद भी उस समय दुविधा की निर्बलता का शिकार बना हुआ था। सरदार के दूत ने उसके हाथ को झटका देकर खड़ा किया, तो वह चुपचाप दरवाज़े की सांकल चढ़ाकर उसके साथ हो लिया।

दोनों व्यक्ति लगभग एक मील तक चुपचाप चले गये। सब्ज़ीमण्डी से उत्तर दिशा में कई बाग़ हैं, वह बाग़ आधे जंगल और आधे खेत कहे जा सकते हैं। उनमें माली के परिवार के सिवा शायद सप्ताहों तक कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता। जो मकान बने हुए हैं, वह भी पुराने हैं और साल में कभी एकाध बार ही काम में आते हैं। बाग़ों के बीच-बीच में फालतू ज़मीन के टुकड़े भी हैं, जिनमें कांटेदार झाड़ियों की अधिकता है। सरदार का दूत उम्मेद को घुमा-फिरा कर ऐसे ही एक गुंजान टुकड़े में ले गया। उम्मेद उस समय पूरी तरह अपने-आप में नहीं था। वह मानो रस्सी से खिंचा हुआ भार्गसिंह से मिलने के लिए जा रहा था। रुकने से

मानो उसकी जड़ता को ठोकर लगी। उसने चेतन होकर पूछा—

तुम ठहर क्यों गये ? सरदार भार्गसिंह कहां है ?"

दूत ने उसका कुछ उत्तर न देकर मुंह में अंगुली डालकर एक विशेष ढंग से सीटी बजाई, जिसका उत्तर भी वैसी ही सीटी से मिला, और साथ ही उस अन्धकार से घिरी हुई झाड़ी में से एक आदमी निकलता हुआ दिखाई दिया। उम्मेद की टकटकी उसी ओर लग गई। उस आदमी ने पास पहुँच कर अपने दूत से पूछा—नारायण यह आदमी कौन है ?

नारायण ने उत्तर दिया—उम्मेदसिंह ! 'अच्छा, तुम जाओ' कहकर सरदार भार्गसिंह उम्मेद के पास आ गया और नारायण इशारा पाकर झाड़ी में विलीन हो गया।

(३)

पास आने पर उम्मेदसिंह ने भार्गसिंह को पहिचान लिया। इस समय भी उसके कपड़े पुलसिया ठाठ के थे, परन्तु चेहरा पहिचानने में उम्मेद को कठिनाई न हुई। वह चेहरा जेल में काफी परिचित हो चुका था। उसके चेहरे में तीन वस्तुएँ ऐसी थीं, जो देखने वाले पर अंकित हो जाती थीं। माथा खूब चौड़ा था, आँखों में एक विशेष प्रकार की लाल रेखा थी और कान बहुत बड़े और कुछ नीचे को लटके हुए थ। नाक लम्बी और नोकीली थी। आवाज़ में उम्मेद को कुछ परिवर्तन मालूम हुआ था, परन्तु वह बनावटी ही प्रतीत होता था।

भार्गसिंह ने उम्मेद पर एक गहरी निगाह डाली और जांच लेने पर मुस्कराकर उसके कन्धे पर हाथ रख दिया। उम्मेद इन पाँच वर्षों में काफी बदल गया था। उसकी बढ़ती का समय था। उसकी लम्बाई भी बढ़ गई थी और चौड़ाई भी, परन्तु चेहरे में कोई अधिक भेद नहीं आया था, भार्गसिंह ने उम्मेद को अपने पास खींच कर बच्चे की तरह थपकी देते हुए पूछा—

कहो, उम्मेद तेरा क्या हाल चाल है ?

अच्छा है, सरदार जी। ईश्वर की दया से राज़ी खुशी हूँ।

मैं यह देखकर बहुत प्रसन्न हुआ कि तेरी सेहत अच्छी है, और तू जवान हो गया है। तेरी उस माँ का क्या हाल चाल है, जिसकी तू रात-दिन बातें सुनाया करता था।

रुद्धकण्ठ से उम्मेद ने कहा—वह तो मर गई।

भार्गसिंह अनायास बोल उठा—चलो अच्छा हुआ। एक झगड़ा खत्म हुआ।

उम्मेद को धक्का-सा पहुँचा। उसकी माँ के मरने पर भार्गसिंह खुश होगा, इसका उसे सपने में भी ख्याल नहीं आया था। उसने आश्चर्यान्वित होकर पूछा—

मेरी माँ मर गई, इसमें क्या अच्छा हुआ सरदार जी? वह तो मुझे बहुत प्यार करती थी। मेरा उसके मरने पर दुनिया में कोई नहीं रहा।

भाई, मैं यह नहीं कहता कि तेरी माँ तुझे प्यार नहीं करती थी। मैं तो सिर्फ इतना कहता हूँ कि अब तू आज़ाद हो गया। अब जो चाहे कर सकता है।

मैं आपकी बात समझा नहीं। वह कौन-सा काम है, जो माँ के सामने नहीं कर सकता था, और अब कर सकूँगा?

अगर तेरी माँ जिन्दा होती तो आज मैं तुझे लेने के लिए कभी न आता, क्योंकि मुझे चिन्ता होती कि तेरे पीछे तेरी माँ का क्या होगा? पर अब मुझे कोई चिन्ता नहीं है। अब मैं तुझे कह सकता हूँ कि मेरे भाई, आज मैं एक काम के लिए तुझे अपने साथ लेने आया हूँ। जितनी जल्दी हो सके चल।

सरदार जी, आप तो जानते ही हैं कि मैं आपकी अपने बड़े भाई से अधिक इज्जत करता हूँ। मेरा रोम-रोम आपका आभारी है। इन पाँच सालों में मैंने न जाने कितनी बार आपको याद किया। आज आपसे मिलकर मेरे चित्त में बड़ा हर्ष हुआ। परन्तु आपकी इस बात ने मुझे सन्देह में डाल दिया है कि आप मुझे किसी ऐसी जगह ले जाना चाहते

हैं जहाँ मेरी माँ के जीवित रहते मुझे न ले जाते। क्या मैं जान सकता हूँ कि आप मुझे कहाँ ले जाना चाहते हैं।

भार्गसिंह थोड़ी देर तक चुप रहा। मानो वह निर्णय करना चाहता है कि जो प्रस्ताव वह पेश करना चाहता है, उन्हे किन शब्दों में प्रकट करे। थोड़ी देर मौन रहकर वह उम्मेद के कन्धे पर हाथ रखकर बोला—

उम्मेद, मैं आज दिल्ली में एक कोठी पर डाका डालने आया हूँ। मेरे साथ काफ़ी आदमी हैं। और सब प्रबन्ध हो गया है, केवल एक ऐसे आदमी की ज़रूरत है, जो उस कोठी से परिचित हो। तुम वह आदमी हो। तुम्हें अभी इसी समय मेरे साथ उस कोठी पर चलना होगा क्योंकि डाका डालकर हमें मोटर द्वारा कम-से-कम १०० मील दूर निकल जाना है।

उम्मेद भी बचपन में बहुत-सी शरारतें कर चुका था और जेल में चोर-डाकुओं की संगत ने उसके दिल में चोरी और डकैती से तीव्र घृणा का भाव दूर भी कर दिया था, परन्तु इतने वर्षों के मेहनती जीवन के पीछे नये सिरे से पुराने जीवन को ताज़ा करने के प्रस्ताव ने उसे घबराहट में डाल दिया। वह एक दम कोई उत्तर न सोच सका और टालने के लिये बोला—

पर यह तो बतलाओ सरदार जी, ऐसी कौन-सी कोठी है, जिसे मैं जानता हूँ और आपकी सहायता कर सकता हूँ।

भार्गसिंह ने उम्मेद के कान के पास मुँह ले जाकर कहा—जहाँ डाका डालना हो, उसका पता मैं साथियों को कभी नहीं देता, परन्तु तेरी दूसरी बात है। हम आज सेठ···············के बगले पर डाका डालना चाहते हैं, और मुझे विश्वास है कि तू वहाँ कई बार गया है।

उम्मेद का शरीर काँप गया। वह तो उस मिल मालिक का बँगला था, जिसमें वह काम करता था। क्या जिस लोटे से पानी पिया है, उसी में छेद करना पड़ेगा? जिसका नमक खाया है, उसीको डसने के

लिये उम्मेद का मन तैयार न हुआ। उसने कहा—

सरदार जी, वह तो मेरे मालिक का बँगला है, उसमें डाका मत डालिये। जिसका नमक खाता हूँ, क्या उसी के साथ शत्रुता करूँ। इस काम में पड़ने को मुझसे न कहिये।

भागसिंह को निराशा हुई। उसे निश्चय था कि उम्मेद उसकी बात को कभी न टालेगा। इसीलिये उसको अपनी डकैती का रहस्य उसने कह दिया। इन्कार ने भागसिंह को दुविधा में डाल दिया। परन्तु वह निराश नहीं हुआ। उसने उम्मेद को थपकी देते हुए कहा—

ठीक है। तुझे ऐसे ही कहना चाहिये, क्योंकि तू अभी बच्चा है। तुझे क्या मालूम कि जिस आदमी को तू अपना मालिक बता रहा है, वह तेरा सबसे बड़ा दुश्मन है। वह तेरा खून चूसकर मोटा हो रहा है। तू मेहनत करता है, पसीना बहाता है, अपनी जान की बाज़ी लगाकर माल पैदा करता है, और वह सेठ, सोने की चौकी पर बैठकर मौज उड़ाता है। तू दिन भर अपनी हड्डियाँ तोड़कर शाम को भूखे पेट सोता है, और वह दिन भर कुर्सी पर बैठकर रात को गदेलों पर आराम करता है, तू उसका नमक नहीं खाता, तू अपनी कमाई का नमक खाता है।

उम्मेद इस सारे उपदेश को न समझ सका। बात बिलकुल नई थी। मालिक मालिक ही है, और मज़दूर मज़दूर ही, उसके दिल में यही बात बैठी हुई थी। भागसिंह कुछ उल्टी ही बात कह रहा था। उम्मेद के दिल में यह बात बैठी नहीं, अच्छी-सी तो लगी, कुछ हृदय के बाह्यभाग को छुआ भी, परन्तु अन्दर न घुस सकी। वह बोला—

सरदार जी, आपकी बात मेरे दिल में नहीं लगी। जिसका काम करता हूँ, जिससे माहवारी तलब पाता हूँ, उसी पर डाका डालने में सहायता करना मेरे लिये असम्भव है। मेरा धर्म तो उनकी रक्षा करना है। आप मुझसे अधर्म करने को न कहिये। मैं आपसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ।

समय गुज़र रहा था। डकैती करने वालों के लिये आधीरात का

समय अमूल्य है। वह गुज़रता जा रहा था, इधर उम्मेद अपनी हठ पर क़ायम था। महाभारत के प्रारम्भ में, लड़ाई के लिये तैयार सेनाओं के बीच में कृष्ण को इतना समय मिल गया था कि वह अर्जुन को सम्पूर्ण गीता का उपदेश करते रहे और योद्धा लोग घण्टों तक मुँह ताकते रहे, परन्तु वह द्वापर युग था और भार्गसिंह तथा उम्मेद कलियुग में बातें कर रहे थे। द्वापर युग में सूर्य भी थोड़ी देर के लिये रुक सकता था, परन्तु कलियुग में तो समय बीतता ही जाता है। भार्गसिंह ने एक बार कलाई पर लगी हुई घड़ी पर नज़र डाली और फिर उम्मेद से कहा—

इस वक्त मेरे पास समझाने का तो समय नहीं है। इतना कहता हूँ कि मैं जो कहता हूँ वह सच है। तू आज नहीं, तो कल इसे ज़रूर समझ जायगा। अगर तेरा मुझ पर कुछ भी विश्वास है, तो तुझे हमारे साथ चलने में आनाकानी नहीं करनी चाहिये। अब मैं तुमसे चलने या न चलने का कारण नहीं पूछता, केवल आख़िरी जवाब पूछता हूँ कि तू हमारे साथ चलेगा या नहीं ?

उम्मेद ने दृढ़स्वर में उत्तर दिया—नहीं।

भार्गसिंह ने मुँह में अँगुली डालकर सीटी बजाई, जिस पर चार आदमी पास की झाड़ी के पीछे से निकलकर आ गये और उम्मेद को घेरकर खड़े हो गये। चारों आदमी खूब लम्बे-चौड़े थे। सबने पुलिस के कान्स्टेबलों की सी सूरत बना रखी थी। सिर पर मुंडासा बांधा हुआ था। उसका एक किनारा ठोड़ी के नीचे से लपेटा हुआ था, जिससे मुँह का बड़ा भाग छिप गया था। उम्मेद इस नये कांड से भौंचक-सा रह गया। इससे पूर्व कि वह इतिकर्त्तव्यता पर सोचता, चारों ओर ऐसे लोगों से वह घिर गया, जिसके सम्बन्ध में वह नहीं जानता कि वह उसके मित्र हैं या शत्रु।

भार्गसिंह ने उम्मेद से कहा—

देखो उम्मेद, मैं तुझे अपने छोटे भाई की तरह प्यार करता हूँ। उस प्यार के भरोसे पर तो मैंने तुझ पर विश्वास करके यहाँ बुलाया

था। समय होता तो मैं तुझे समझा देता कि तेरी भूल है, और मैं ठीक कहता हूँ। इस समय मुझे जल्दी है। अब मुझे अपना काम तेरी सहायता के बिना ही करना पड़ेगा। यदि तेरी जगह और कोई होता तो मैं इस समय पिस्तौल की गोली से मौत के घाट उतार देता, क्योंकि हमारा रहस्य केवल दो के हाथ में सुरक्षित रह सकता है। या तो हमारे साथी के हाथ में या लाश के हाथ में। परन्तु तेरे ऊपर मुझे विश्वास है, और मैं यह भी जानता हूँ कि तेरा यह भ्रम शीघ्र ही दूर हो जायगा। जिसे तू अपना मालिक समझे हुए है वह तेरा सबसे बड़ा दुश्मन है। यह सब हुकूमत करने वाले सरमायादार लोग ग़रीबों के कट्टर शत्रु हैं, यह तू अनुभव से समझ जायगा। पर आज रात भर मैं तुझे क़ैदी बनाकर रखूँगा। हम अपना काम बनाकर चले जायेंगे, तब सुबह तू आज़ाद हो जायगा, पर एक बात याद रखना। मुझसे मिलने, आज की बातचीत और हमारी डकैती का हाल किसी से मत कहना। ले, मेरे हाथ पर हाथ रखकर कह दे कि नहीं कहूँगा।

भागसिंह ने अपना हाथ बढ़ाया, उम्मेद ने उस पर हाथ रख दिया। भागसिंह ने अपने आदमियों को इशारा किया, जिस पर उन्होंने उम्मेद के हाथ पीठ के पीछे रस्सी से बाँध दिये और एक ओर ले चले। उम्मेद चुपचाप उनके पीछे चल दिया। उसे दुःख हो रहा था कि वह भागसिंह की बात क्यों न मान सका, परन्तु यह प्रसन्नता भी थी कि उसने मालिक के साथ नमकहरामी करने से इन्कार कर दिया।

अलग होते हुए उम्मेद ने कहा—बन्दगी सरदार जी, मुझे माफ़ कर देना कि मैं आपकी बात न मान सका।

भागसिंह ने भरे हुए गले से कहा—उम्मेद, तू नहीं जानता कि मैं तुझे कितना प्यार करता हूँ। यदि इतने दिनों तक तुझसे नहीं मिला, तो केवल तेरी ख़ातिर। अब तुझे छोड़ता हूँ, यह भी तेरी ख़ातिर। मुझे यकीन है कि तू मेरे पास आयगा और शीघ्र ही आयेगा, इसी आशा में तुझसे अलग होता हूँ। यदि तेरे दिल में कभी मुझसे मिलने का विचार

पैदा हो तो किसी भी अमावस की रात को ग्यारह बजे इसी स्थान पर आकर हाथ से तीन वार ताली बजाना। तुझे मेरा पता लग जायगा। परन्तु देखना, सावधान रहना। आज की कोई बात जुबान पर न आने पाये।

उम्मेद ने कहा—वह तो मैं वायदा कर चुका। आप चिन्ता न करें।

भागसिंह ने फिर इशारा किया। वह चारों आदमी उम्मेद को लेकर झाड़ियों में से होते हुए एक टूटे हुए मकान में पहुँचे, जो मुग़लों के समय की किसी बड़ी इमारत का अवशेष था। उस मकान के चारों ओर खँडहरों के ढेर पड़े थे, केवल मध्य में एक कोठरी कुछ बनी हुई थी। परन्तु वह बाहर की टूटी हुई दीवारों से ऐसी ढँकी हुई थी कि बाहर से देखने वालों को उसका अनुमान भी नहीं हो सकता था। उस कोठरी में ले जाकर उन लोगों ने उम्मेद को खड़ा कर दिया। कोठरी में एक ओर चारपाई पड़ी थी, दूसरी ओर पानी का एक घड़ा और सकोरा रखा था। उम्मेद चारपाई पर बैठ गया। उसे प्यास लगी थी, उसने पानी माँगा। उनमें से एक आदमी ने घड़े में से सकोरे में डालकर पानी उम्मेद के मुँह को लगा दिया।

वह लोग जाने की जल्दी में थे। जाते हुए उनमें से एक ने उम्मेद से कहा कि तुम घबराना नहीं, सरदार का हमें हुक्म है कि तुम्हें कोई तकलीफ़ न हो। रात में भागने की चेष्टा न करना। भागना चाहोगे तो गोली के शिकार बन जाओगे। सुबह होते ही तुम्हारी कोठरी का द्वार खोल दिया जायगा। तुम घर वापिस चले जाना।

उम्मेद ने कहा—यह तो ठीक है पर मेरे हाथ तो खोल दो, मैं आराम कैसे कर सकूँगा।

तुम तो बहुत भोले हो। रस्सी में गाँठ ही ऐसी दी गई है कि जरा से झटके से खुल जायगी। तुम झटका देकर देखो।

जितने में उम्मेद ने झटका दिया उतने में वह चारों आदमी कोठरी

से बाहर चले गये और किवाड़ बन्द कर सांकल चढ़ा दी।

बाहर एक आदमी खड़ा था जो भिखारी बनकर उस कोठरी में रहता था। उसने कहा—

इस आदमी का क्या किया जायगा।

जब यह बेहोश हो जाय तब तुम और भोला मिलकर इसे कहीं दूर झाड़ियों में डाल आना। क्यों दिलावरसिंह उस सकोरे में बेहोशी का काफ़ी मसाला डाल दिया था न ?

दिलावरसिंह ने उत्तर दिया—हाँ, चार पाँच घण्टों के लिये काफी बेहोशी हो जायगी।

देखो मुनीर सब काम चौकसी से करना, नहीं तो तुम जानते हो सरदार के मिज़ाज़ को। कच्चे ही चबा जायगा।

उस रात मिल मालिक के घर पर डाका पड़ा। डाका डालने वालों की संख्या कोठी वालों की राय में लगभग पचास थी, परन्तु वस्तुतः सात थी। सब लोग पुलिस की वर्दी में थे। सब के पास पिस्तौलें थीं और मुँह पर नकाब पड़ी हुई थी। आधी रात का समय था, कोठी के निवासी गहरी नींद में सो रहे थे। कोठी बिल्कुल अकेले में थी। डाकुओं को लूटने की बहुत सुविधा मिल गई। कई हज़ार का माल लेकर और दो नौकरों को घायल करके डाकू चम्पत हो गये।

सुबह जब उम्मेद को होश आया तब उसने अपने को रोशनारा बाग के पास झाड़ियों में पड़ा हुआ पाया। पूर्व दिशा में उषा की लालिमा मानो उसकी दशा पर हँस रही थी और पक्षीगण अपने घोंसलों में से मुँह निकाल कर उसे चिढ़ा रहे थे। उसकी आँखों में गर्मी थी और मुँह का स्वाद बिगड़ा हुआ था। उसे अपने-आप से ग्लानि सी हो रही थी। आँखें मलता हुआ वह उठा और अस्थिर कदमों से कारखाने की ओर रवाना हुआ। जिस समय वह कारखाने के दरवाजे के अन्दर घुसा, उस समय ड्यूटी पर जाने वाले मज़दूरों का आखिरी जत्था प्रवेश कर रहा था। वह भी अन्दर जाकर अपने लूम पर खड़ा हो गया।

आज सारे कारखाने में रात के डाके की चर्चा थी। उम्मेद ने भी वह सुनी। तरह-तरह की कल्पनायें की जारही थीं। कोई कहता था, डाकू रिसालसिंह के मशहूर जत्थे ने डाका डाला है, तो कुछ लोग आतंकवादियों को जिम्मेवार ठहराते थे। जितने मुँह, उतनी बातें थीं। एक कल्पना यह भी की गई थी कि शायद मिल के कुछ असन्तुष्ट मज़दूरों ने डाका डाला हो। उम्मेद ने सब कुछ सुना और चुप रहा।

पुलिस में रिपोर्ट भेजी गई। बड़ी धूमधाम से पुलिस के बड़े अफ़सर तशरीफ़ लाये। सेठ जी बड़े आदमी थे। एस. पी. और डी. एस. पी. की तो गिनती ही क्या, स्वयं डिप्टी कमिश्नर साहब तशरीफ़ का टोकरा लेकर पहुँचे। सेठ जी ने अपनी कोठी का बड़ा कमरा अफ़सरों के आवागमन के लिए खोल दिया। बड़े से लेकर छोटे तक सब पुलिस के अफ़सरों की दिल खोल कर ख़ातिर की गई। पुलिस ने भी ज़ाब्ते की कार्रवाही करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। कई दर्जन फुलस्केप काग़ज़ों पर रपट लिखी गई और घर के प्रायः सभी नौकरों के बयान लिये गए। चार-पांच नौकरों को पुलिस वाले थाने में भी ले गए। वहां उनकी खासी मरम्मत की गई। रातभर सोने न दिया और चपत-घूसों की बौछार की, परन्तु कुछ मतलब की बात न निकली। नौकरों की मुसीबत को देख कर आखिर सेठ जी को दया आ गई और सबइन्सपेक्टर की उचित भेंट-पूजा करके नौकरों को छुट्टी दिलाई।

जब कोठी के नौकरों पर वार खाली गया, तो पुलिस ने सेठ जी को खबर दी कि एक अन्तर्राष्ट्रीय डाकू पार्टी का पता चला है। शायद डाका भी उन्हीं लोगों ने डाला हो। सेठ जी के पैसों से पुलिस के अफ़सर अन्तर्राष्ट्रीय डाकुओं की तलाश में कलकत्ता, बम्बई और करांची की सैर कर आये। अन्त में परिणाम कुछ भी न हुआ। पहाड़ खोदकर चूहा भी न निकला। सेठ जी के कई हजार रुपए खर्च हो गए, और चोरी का रहस्य कुछ भी न खुला।

(५)

उम्मेद को ईमानदारी, मेहनत और स्वामिभक्ति से कार्य करते हुए पाँच वर्ष व्यतीत हो गये। इस बीच में उसका जीवन कारखाने के कर्घे की तरह चलता रहा। दूसरे के इशारे पर उठना और दूसरे के इशारे पर बैठना। सुबह की सीटी पर जागना और रात की सीटी पर सोना। दिन भर काम करना और रात को खूब गहरी नींद लेना। एक बेजान पुर्जे की तरह उम्मेद हिलता-जुलता खाता-पीता था।

मिल के परिश्रमी जीवन के कारण उसके बालापन की स्मृतियाँ दब सी गई थीं। धुंधले से प्रकाश में कभी-कभी अस्पष्ट रूप से दिखाई देती थीं। स्मृति भटक कर कभी कभी जेल और भागसिंह की ओर घूम आती थी, परन्तु मिल के मजदूर का वर्त्तमान इतना कोलाहलपूर्ण होता है कि भूत या भविष्य की हल्की आवाजें उसमें सुनाई नहीं देतीं। उम्मेद केवल वर्त्तमान जीवन व्यतीत कर रहा था। उसका पुराना दोस्त बशीर उसी कारखाने के इंजिन विभाग में काम करता था। वह भी उम्मेद की तरह मिलमय जीवन व्यतीत कर रहा था। दोनों मित्र कारखाने की दिनचर्या की किश्ती पर बैठकर जीवन नदी के प्रवाह में बहे जा रहे थे।

६

हड़ताल

कल इतवार की छुट्टी है, इस कारण आज की रात मज़दूरों के लिए प्रमोद और विनाश की रात है। सुबह जल्दी उठकर कारख़ाने जाने की चिन्ता नहीं और न दिन भर खड़ा रहना पड़ेगा। इसलिए रात भर जागकर मन बहलाया जा सकता है, यह सोचकर मज़दूर लोग अपनी लाइन में स्थान-स्थान पर एकत्र हो गये हैं, और जुआ तथा शराब की सहायता से अपने सूखे और थकाने वाले मज़दूर जीवन में से जीवन का रस निचोड़ने का प्रयत्न कर रहे हैं। सातवें दिन कुछ विश्राम मिलता है। सुनसान मन में कमी करने के लिए हृदय मनोरंजन का दरवाज़ा तलाश करता है। हाथ में गाढ़े पसीने की कमाई के कुछ पैसे आ गये हैं। परिवार साथ नहीं कि दिल बहलाने का कुछ उपाय हो। यदि कुछ आदमियों का परिवार साथ है भी तो संगदोष बड़ा बलवान् है। इच्छा न रहते भी साथियों का साथ देना पड़ता है। शनिश्चर की रात को अधिकांश मज़दूर सप्ताह भर की बचत पी जाते हैं और बहुत-से तो कर्ज़ के नीचे दब जाते हैं। मिलों के मालिक मज़दूरों के मनोरंजन और भलाई का दावा भरते हैं। मज़दूरों की कमाई का कुछ हिस्सा मज़दूर-हित के नाम पर इकट्ठा किया जाता है और उसका कुछ भाग सिनेमा, फुटबाल, जादू आदि के खेल-तमाशों में ख़र्च भी किया जाता है, पर वह कारख़ाने के हज़ारों

मज़दूरों के सौवें हिस्से को भी नहीं छूता। कुछ मज़दूरों का कुछ समय के लिए मनोरंजन हो जाता है, परन्तु योरप के मज़दूरों को जो विनोद और सुख की सामग्री प्राप्त हो जाती है, भारतीय मज़दूर उसका शतांश भी नहीं पाते। फिर विलायत के मज़दूर जब गिरे हुए मनोरंजन से नहीं बच सकते, तो भारतीय मज़दूर कैसे बच सकेंगे।

हां, तो उस रात स्थान-स्थान पर जुए के जमाव हो रहे थे। जिस लाइन में उम्मेद की कोठरी थी, वहां भी एक चौकड़ी जमी हुई थी। उस चौकड़ी के उस्ताद या गुरुघन्टाल वह हमारे पूर्व परिचित तिवारी जी थे। तिवारी जी कन्नौजिया ब्राह्मण थे, शुद्धता के अवतार थे और धर्म का अक्षरशः पालन करने वाले थे। जब रसोई बनाने बैठते, तब एक अंगोछा कमर पर लपेट लेते, बाकी सब कपड़े उतार कर खूंटी पर टांग देते थे। वह अंगोछा रसोई बनाने और खाने के लिए रिजर्व था। जब से खरीदा गया, तब से धोने की नौबत नहीं आई। मैल से चिक्कट हो गया था, परन्तु था बिलकुल शुद्ध, क्योंकि तिवारी जी उसे केवल भोजन के समय पहिनते थे और उस अंगोछे में केवल तिवारी जी के शरीर की मैल थी, और तिवारी जैसे उच्च ब्राह्मण के शरीर की मैल कैसे अशुद्ध हो सकती है। रसोई बनाते-बनाते यदि पसीना आ जाता तो उसी से पोंछ देते। जब खाना बना और खा चुकते, तब उसे खूंटी पर टांग देते और दूसरे कपड़े पहिन लेते। इतने समय तक कोई दूसरा आदमी उन्हें छू नहीं सकता था। इन कारणों से वह मज़दूरों के धर्मगुरू माने जाते थे। वह प्रायः कहा करते थे कि 'भय्या, हमने सब कुछ कर लिया। जुआ खेला, शराब पी, अपनी उम्र में दूसरों की औरतों तक को न छोड़ा, पर अपना धर्म नहीं छोड़ा। आज तक कभी दूसरे का बनाया खाना नहीं खाया और कभी चौके से बाहर अन्न ग्रहण नहीं किया।' श्रोता लोग धर्म की इस व्याख्या को सुनकर मुग्ध हो जाते और तिवारी जी को वशिष्ठ मुनि का कलियुगी अवतार मानते थे।

जुए का दौर चल रहा था। चार आदमी खेल रहे थे, बाकी देख

रहे थे। थे तो वे दर्शक, पर उनमें खिलाड़ियों से भी अधिक जोश पैदा हो रहा था। उस समय बशीर खिलाड़ियों में था और उम्मेद दर्शकों में। तिवारी जी पूरे जोश पर थे। हाथ पर हाथ मार रहे थे। दर्शक लोग अधेड़ तिवारी जी के शरीर की फुर्ती और जोश को देखकर आश्चर्यान्वित हो रहे थे। उनका प्रतिद्वन्द्वी इंजिन खाते का छोटा अफसर हाजी नसीरअली था। वह मिल में हाजी जी के नाम से मशहूर था। बड़ी पाकरूह रखता था। दो बार हज कर आया था। माथे पर काला दाग बता रहा था कि पाँच बार की नमाज में कभी कमी नहीं आती। दाढ़ी का सब से लम्बा बाल नाभि से छूता था। तस्वीह जेब में रहती थी। हाजी जी को उनके जानने वाले अपना मज़हबी लीडर मानते थे। उधर तिवारी जी, इधर हाजी जी—बड़े जोर की भिड़न्त थी। तिवारी जी, का साथी बशीर था और हाजी जी का साथी रामनारायण।

जुआ फिसाद की जड़ होती है ही। बात ही बात में तीवारी और हाजी में कहा सुनी होने लगी। बशीर तिवारी जी की ओर से बोलने लगा और रामानारायण हाजी जी की ओर से। दर्शकों में भी दो दल हो गये। दो-चार ने तिवारी की पीठ ठोंकी, तो दो-चार ने हाजी की। गरमागरम बातें होने लगीं और वाक्यरूपी तीर छूटने लगे। शीघ्र ही पारा बहुत ऊँचा चढ़ गया और एक-दूसरे की रिश्तेदार औरतों के सम्बन्ध में भयानक धमकियां दी जाने लगीं। सभी जोश में थे, बीच-बचाव कौन करे ? मामला यहाँ तक बढ़ गया कि आस्तीनें चढ़ने लगीं। मुसलमानों के खून में गरमी होती है। अन्य सबकी अपेक्षा हाजी और बशीर का तकरार अधिक गरम हो गया। हाजी अफसर था और बशीर उनके आधीन कर्मचारी। पर जुए के जोश में दोनों बेहोश थे। झगड़े में दोनों बराबरी पर उतर आये। हाजी ने अपनी आयु और ओहदे के जोश में आकर बशीर के मुँह पर एक तमाचा जमा दिया। बशीर तमतमा उठा। वह अपने-आपको भूल गया और उसने भी हाजी साहब के दाढ़ी सुशोभित मुँह पर एक घूंसा जमा दिया। हाजी साहब को ऐसे ठोस जवाब

की आशा न थी। उन्होंने सोचा था, अफसर का तमाचा है, पच जायगा।

बशीर ने उसे अफसर का तमाचा नहीं समझा, बल्कि जुआरी भाई का आक्रमण समझ कर उसका जवाब दे दिया। हाजी साहिब की सारी मस्ती उस घूंसे से उतर गई, और होश ठिकाने आ गये, परन्तु झेंप बहुत जबर्दस्त थी। हाजी साहिब ने उस झेंप को क्रोधाग्नि से मिटाने का यत्न करते हुए चिल्ला कर कहा—

पाजी, हरामज़ादा,······यह गुस्ताखी। बहुत अच्छा बच्चू, काम को तो आखिर मेरे पास ही आयगा।

इस भारी तनातनी में उम्मेद बशीर के पास खड़ा हुआ देख रहा था। वह हर तरह से दोस्त की मदद को तैयार था। अगर मामला आगे बढ़ता तो उम्मेद बीच में कूद पड़ता परन्तु हाजी साहिब शीघ्र ही मैदान से पीछे हट गये और केवल धमकी पर उतर आये, तब उम्मेद ने भी जुबानी धमकी का उत्तर जुबानी धमकी से देते हुए कहा—

अरे मियाँ जाने दो, क्यों फ़िजूल गुस्सा बघारते हो। तुम क्या कारखाने के मालिक हो, जो काम करते आदमी को निकाल दोगे, या बड़े लाट हो कि जिसे चाहोगे फांसी लगा दोगे ?

हाजी अब वहां न ठहर सका। विषैली आँखों से बशीर और उम्मेद की ओर देखता हुआ वहां से चला गया। इसप्रकार उस जुआपार्टी का अन्त हुआ। मैदान तिवारी जी के हाथ रहा।

(२)

कारख़ाने में कुछ औरतें भी काम करती थीं। रद्दी सूत को सुलझा कर गोले बनाने का काम उनसे लिया जाता था। सुखदेई को यह काम करते लगभग पन्द्रह वर्ष हुए। तब उसका पति मर गया था। सुखदेई की गोद में उस समय एक नन्ही-सी बच्ची थी, जिसके गोल चेहरे और सांवले रंग पर मुग्ध होकर उसके माँ-बाप उसे श्यामा पुकार कर जी को प्रसन्न किया करते थे। श्यामा का बाप मर गया, तो बेचारी माँ कुछ दिन रो-धोकर एक पड़ौसी के साथ कारख़ाने के सेक्रेटरी के पास गई। सेक्रे-

टरी दयावान पुरुष था। उसने सुखदेई को काम दे दिया। तब से वह कारखाने में ही काम करती है।

श्यामा अपनी माँ की अंगुली पकड़े हुए प्रतिदिन कारखाने में आती और साथ ही चली जाती। दस वर्ष की उमर तक ऐसा ही चलता रहा। इसके पीछे लड़की स्यानी होने लगी। भारतवर्ष में और विशेषतः शहरों में दस-ग्यारह साल की उम्र में लड़की पर जवानी चढ़ने लगती है। सुखदेई ने देखा कि देर करने से तरह-तरह की बातें उठेंगी; एक बिरादरी का लड़का तलाश करके दिल्ली में ही शादी कर दी। एक साल पीछे श्यामा का गौना हो गया और वह ससुराल चली गई। दो साल तक वह सुसराल में रही। उसका पति पल्लेदारी का काम करता था। पल्लेदार यदि मेहनत करे तो दिन भर में डेढ़ दो रुपया कमा लेता है। वह आजकल के बहुत से ग्रेजुएटों से अधिक कमाई कर सकता है। श्यामा का पति भी बड़ा ईमानदार और मेहनती आदमी था। वह दिन भर में डेढ़-दो रुपए कमा लाता और घर में लाकर माँ को दे देता। श्यामा की सासु का स्वभाव बड़ा अच्छा था। पति के मर जाने के पीछे लड़के को उसी ने पाला था। अपने लड़के से उसे जो मुहब्बत थी, उसका कुछ हिस्सा उसने श्यामा को भी दे दिया था। श्यामा के दो साल पति के घर में बड़े सुख से कटे।

उस साल शहर में जोर का इन्फ्लुएन्जा हुआ, जिसने हजारों घर तबाह कर दिए। बेचारी श्यामा का छोटा-सा स्वर्ग भी उसी पिशाच की चपेट में आ गया। उसकी सास और पति दोनों इन्फ्लुएन्जा की भेंट चढ़ गये। वह बेचारी निराधार और असहाय दशा में अकेली रह गई।

सुखदेई को खबर लगी तो वह टूटे हुए दिल को लेकर भागी हुई आई। देखा तो लड़की का चमन उजड़ चुका था और वह बेचारी श्मशान के समान उस घर में अकेली पड़ी रो रही थी। मां ने बेटी को छाती से लगाया और अपने साथ ले आई। श्यामा अपनी मां के पास रहने लगी। सुखदेई समय और दुःख के कारण अब बूढ़ी हो रही थी।

छोटा बोझ उठाना भी उसके लिये असम्भव था। इस कारण उसने सेक्रेटरी साहिब के सामने हाथ जोड़ कर और पाँव पकड़ कर श्यामा को भी अपने साथ ही मजदूरी पर लगवा दिया। एक वर्ष भर से मां-बेटी दोनों इसी खाते में काम कर रही हैं।

श्यामा का रंग सांवला था, परन्तु चेहरा बहुत सुन्दर था। गोल चेहरा, चंचल आंखें, सुघड़ शरीर। यदि श्यामा किसी धनी परिवार में होती तो यह सब वस्तुयें सुन्दरता और सौभाग्य की निशानी समझी जातीं, परन्तु बेचारी श्यामा तो ग़रीब थी और विधवा थी, उसके यह गुण दोष ही समझे जाते थे। अड़ौसी पड़ौसी उस पर अंगुली उठाते थे और गली की स्त्रियाँ तरह-तरह की चर्चाओं और सम्भावनाओं का भविष्य पुराण तैयार करती थीं।

कारखाने में श्यामा की पर्याप्त चर्चा थी। पुरुष इस अंश में बहुत बदनाम प्राणी हैं। वह स्त्री की सूरत पर पागल हो जाता है। वह भूल जाता है कि उसकी माता भी स्त्री है, बहिन भी स्त्री है और बेटी भी स्त्री है। स्त्री को देखते ही उसके हृदय की गति तीव्र हो जाती है। जो पुरुष इस रोग से मुक्त हैं वह विरले हैं और धन्य हैं। श्यामा पर भी कारख़ाने के बहुत से पुरुषों की दृष्टि पड़ रही थी।

कारखाने का ख़ज़ानची एक पारसी सज्जन था, जिसका नाम मि॰ भरूचा था। मि॰ भरूचा कम्पनी में बीस वर्ष से नौकर था और अपने जीवन का बयालीस वां वर्ष बिता रहा था। मालिक मि॰ भरूचा से बहुत प्रसन्न थे, क्योंकि वह अपनी ड्यूटी का बड़ा पक्का था और कारख़ाने का हितैषी था। समय का इतना पाबन्द था कि दफ्तर के अन्य लोग उसको दफ्तर में आते देखकर अपनी घड़ी ठीक कर लेते थे। रोकड़ कारोबार का आइना है। समझदार मालिक अपनी रोकड़ को देखकर अनायास ही आर्थिक स्थिति को जान लेता है। मि॰ भरूचा में सबसे बड़ा गुण यह था कि वह सेक्रेटरी का मुँह लगा होने से छोटी से छोटी बात वहां तक पहुँचा देता था, जिससे सेक्रेटरी अपने कारख़ाने की दशा को जांचता

रहता था। सेक्रेटरी तक आसानी से पहुँच होने के कारण अन्य कर्मचारी भरूचा से डरते भी थे, और जलते भी थे।

जलने वाले लोग श्री भरूचा के निजू जीवन के बारे में तरह-तरह की बातें कहते थे। उन लोगों में मशहूर था कि वह जो पारसी ऊपर से बड़ा नर्म और बड़ा भला प्रतीत होता है, अन्दर से बड़ा रहस्यमय है। वह अकेला था, उसकी शादी नहीं हुई थी, तो भी उसका मासिक खर्च आमदनी से आगे बढ़ जाता था। उसे प्रायः दफ्तर से कर्ज लेना पड़ता था। वह किराये के जिस मकान में रहता था, आधी रात तक प्रायः उसका दरवाज़ा बन्द ही पाया जाता था।

श्यामा पर जिन बहुत से लोगों की नज़र थी, उसमें से एक भरूचा भी था। वह प्रायः मज़दूरों के मिल में आने के समय से पहले ही कुर्सी पर आ बैठता था। कुर्सी के सामने दरवाज़े की चिक थी। वहां से आते-जाते मज़दूरों को झांकना बहुत आसान था। बन्धे हुए समय पर श्यामा अपनी मां के साथ कारखाने में जाती थी। भरूचा नित्य उसे तरसती हुई आँखों से देखता और आंखों से ओझल हो जाने पर काम में लग जाता। जब फुरसत मिलती, तब टहलता हुआ उस ओर जा निकलता, जिधर औरतें काम करती थीं और अपनी आँखों का व्यसन पूरा करता था।

(३)

बेचारी श्यामा बड़ी मुसीबत में पड़ गई। युवती स्त्री, फिर विधवा, और उस पर हिन्दू, आफ़त पर आफ़त थी। कारखाने के गन्दे वातावरण में पतिव्रता के परमाणु कहां रह सकते हैं। जब सभ्य और ऊँचे समाज में ही युवती हिन्दू विधवा की स्थिति अत्यन्त संकटमय होती है, तब भला कारखाने में उसकी मान रक्षा क्या हो सकती थी। कुछ ही महीनों में सुखदेई को अनुभव होने लगा कि श्यामा को लेकर कारखाने में आना ख़तरों से भरा हुआ है, परन्तु बेचारी क्या करती ? पीछे छोड़कर आती तो भी बदनामी थी। हिन्दू विधवा की शादी की जाय, यह बात सुखदेई

की समझ में ही नहीं आती थी। उसकी राय थी कि विधवा की शादी करने से तो उसे गला घोंटकर मार देना अच्छा है। तब सिवा इसके कोई उपाय नहीं था कि सुखदेई अपनी लड़की को छाया की तरह अपने साथ-साथ लिए फिरती। बेचारी श्यामा बड़ी कठिन परीक्षा में पड़ी थी। उसमें जवानी की चंचलता तो थी, परन्तु पापवासना पैदा नहीं हुई थी। उसे लोगों का आँख फाड़ फाड़कर देखना बहुत बुरा लगता था। किसी की बुरी बात सुनी तो सहमकर मां के पास हो जाती। वह कपड़े को संभाले निष्कपट आंखों से चारों ओर देखती हुई कारखाने में आती, दिल लगाकर अपना काम करती और सांझ को उसीतरह घर चली जाती थी।

एक दिन की बात है। कुछ मज़दूर कारखाने के दरवाजे के पास खड़े गपशप कर रहे थे। कोई बीड़ी पी रहा था, तो कोई पान खा रहा था। बीच बीच में कहकहा भी लगता जाता था और आपस में चांटे-बाजी भी हो रही थी। सुखदेई श्यामा और अन्य कई औरतें कारखाने में जा रही थीं। उन्हें दूर से देखकर उस मजदूर-मण्डली के दिल में शरारत की ज्वाला पैदा हो गई। जब श्यामा उनके पास से गुज़र रही थी तब एक काले मोटे से मज़दूर ने दूसरे छरैरे बदन के दढ़ियल से मज़दूर को हँसते-हँसते ऐसे ज़ोर का धक्का दिया कि वह श्यामा पर जा गिरा। श्यामा धक्का खाकर मां पर गिरी और बुढ़िया मां चीख मारकर ज़मीन पर गिर गई। मजदूर घूम रहे थे, वह सब इस दृश्य को देखकर सहायता के लिए आने की जगह हँसने लगे। औरतें बेचारी घबरा कर इधर-उधर भाग निकलीं। मोटा और दढ़ियल अपनी इस कारस्तानी पर उछल पड़े, और 'वाह पट्ठे' का नारा लगाकर दूसरे को बधाई देने लगे।

उसी समय उम्मेद कारखाने की ड्यूटी पूरी करके घर जा रहा था। उसने दूर से इस दृश्य को देखा तो उसका खून उबल पड़ा। बेचारी ग़रीब निर्बल औरतों पर ऐसी कठोरता? उसकी आँखों में लहू उतर आया। दोनों बदमाशों को खुश होकर एक-दूसरे को शाबाशी देते

देखकर तो वह आपे से बाहर हो गया। आगा देखा न पीछा—क्षण-भर में दौड़कर उस जगह पहुँच गया और उन दोनों बदमाशों की गर्दन पकड़कर उनके सिर आपस में ऐसे जोर से टकराये कि सब हँसी चिल्लाहट में विलीन हो गई। दोनों शरारतियों ने अपने को एक ज़बर्दस्त आदमी के हाथों में गिरफ्तार पाया।

एक बार तो दोनों आदमी स्तब्ध से रह गये, परन्तु उन्हें अनुभव करने में देर न लगी कि उम्मेद अकेला है, और वह दो हैं। अब दोनों इस भांप में लगे कि किसी तरह पिण्ड छुड़ाकर वहाँ से भागें, क्योंकि सुखदेई के गिर जाने से मामले के संगीन हो जाने का अन्देशा था, और कारख़ाने के दरबान लाठियाँ हाथ में लिये बाहर निकल आए थे। उम्मेद के हाथ से छूटने में दोनों को देर न लगी। एक ने उम्मेद के हाथ पर काट खाया। ज्योंही उम्मेद ने काटने वाले मुंह को दूर हटाने के लिए हाथ बढ़ाया दूसरे ने मौका पाकर उम्मेद को जोर का धक्का दिया। इसी हाथापाई में दोनों के गले उम्मेद के हाथ से छुट गये, और वे भाग निकले।

उनके भाग जाने पर उम्मेद का ध्यान अभागी औरतों की ओर गया। धूल में लथपथ हुई श्यामा अपनी माँ को सहारा देकर उठाने का यत्न कर रही थी। भला हुआ कि सुखदेई के कोई चोट नहीं आई थी। परन्तु बूढ़ा शरीर धक्के को कैसे सह सकता था ? वह बेचारी बुरी तरह कराह रही थी। उम्मेद उनके पास पहुँचा।

श्यामा एक तो स्वयं ही हांफ रही थी, फिर लज्जा से मानो सिमटी जा रही थी। माँ को उठाने का कई बार प्रयत्न करने पर भी न उठा सकी। उम्मेद ने हाथ का सहारा देकर माँ को खड़ा कर दिया। एक ओर से सुखदेई को श्यामा ने और दूसरी ओर से उम्मेद ने थाम लिया।

श्यामा ने सब कुछ देखा था। उसने उन मोटे और दढ़ियल मज़दूरों पर उम्मेद को टूटते, उनके सिरों को भिड़ाते, और गुत्थमगुत्था होते देखा था। उसने यह भी देखा था कि उन मज़दूरों के भाग जाने पर उम्मेद

घर नहीं गया, प्रत्युत उन लोगों की सहायता करने के लिये आया था। श्यामा का दिल उम्मेद की ओर कृतज्ञता से झुक गया। बेचारी ग़रीब अनपढ़ लड़की मुँह से कुछ भी न कह सकी। केवल कृतज्ञता-भरी आँखों से उम्मेद की ओर देखकर रह गई।

उम्मेद ने सुखदेई को थामते और आश्वासन देते हुए श्यामा से कहा—बेचारी के बहुत चोट आई है। मालूम होता है, यह तुम्हारी माँ है। हाँ, ठीक है। तो इसे अब घर पर ही पहुँचा देना चाहिए। तुम्हारा घर किधर है?······अच्छा चलो। बेचारी सहारे के बिना न चल सकेगी। एक ओर से तुम सहारा दो दूसरी ओर से मैं देता हूँ।

श्यामा ने मुँह से कुछ भी न बोल केवल हाथ के इशारे से घर का राह बता दिया। श्यामा का घर दूर नहीं था, कोई तीन फर्लांग की दूरी पर एक कोठरी में मां के साथ वह रहा करती थी। वहाँ पहुँचकर उम्मेद ने सुखदेई को खाट पर लिटा दिया। वह चोट और थकान से अधमुई-सी हो रही थी। खाट पर पड़ते ही आँखें बन्द करके लेट गई।

श्यामा अवसर पाकर कोठरी के कोने में गई, एक कपड़े से अपना मुंह पोंछ और हाथ में पंखी लेकर मां को हवा करने लगी। उम्मेद खाट के पास खड़ा हुआ कुछ सोच रहा था। प्रत्यक्ष में तो इस समय दोनों ने एक-दूसरे को नहीं देखा, परन्तु यह भी नहीं कह सकते कि फिर क्या देखा, क्योंकि दोनों ने और भी कुछ नहीं देखा। यदि बिना देखे कुछ देखा तो वह एक-दूसरे को ही। उम्मेद के हृदय में सहानुभूति का भाव था, तो श्यामा के हृदय में कृतज्ञता का। दोनों जवान थे, इस कारण सहानुभूति और कृतज्ञता के भावों के साथ एक और भाव का मिश्रण होते देर न लगी। दोनों ही एक-दूसरे की ओर एक अवर्णनीय खिंचाव का अनुभव कर रहे थे, उसे प्रेम कह सकते थे या नहीं, यह कहना कठिन है।

कुछ क्षण तक चुप रह कर उम्मेद बोला—बोलते समय उसकी

आँखें श्यामा के चेहरे में गड़ी हुई थीं।

तुम्हारा क्या नाम है ?

श्यामा ने आंखें नीची किये ही उत्तर दिया—

श्यामा।

यह तुम्हारी मां है ?

हाँ।

तुम लोगों पर उन बदमाशों ने जो ज्यादती की, उसकी क्या वजह थी ? क्या वह तुम्हें पहले से जानते थे ?

नहीं, हम उन्हें नहीं जानते थे। यह भी नहीं मालूम कि उन्होंने ऐसा क्यों किया।

अच्छा तो अब तुम्हारी माँ आराम से लेट गई है। जब जागे तब उसे गरम दूध पिला देना। मैं अब जाता हूँ, फिर मां का हाल पूछने आऊँगा। हां, तो मैं यह पूछना भूल गया कि तुम्हारे तो कहीं चोट नहीं आई ?

यह प्रश्न जो उम्मेद ने अन्त में पूछा, उसकी जिह्वा पर पहले से ही घूम रहा था पर लज्जावश पूछा अन्त में। श्यामा ने आँखें उठाये बिना ही उत्तर दिया—

नहीं, मेरे तो कोई चोट नहीं आई।

उम्मेद ने चारपाई के पास जाकर सुखदेई के माथे पर हाथ रख कर देखा। शरीर का तापमान ठीक था। सांस भी नींद की गति से चल रहा था। अब वहां ठहरने का और बहाना शेष नहीं था। निराश-सा होकर और एक लम्बा सांस लेकर उम्मेद ने श्यामा की ओर देखते हुए कहा—

अच्छा, अब मैं जाता हूँ। हाँ, यह पूछना था (कुछ रुक कर) मैं कहता था कि यदि तुम्हें किसी वस्तु की आवश्यकता हो तो मैं बजार से ला दूँ। तुम तो मां की तबीयत खराब होने के कारण जा न सकोगी।

श्यामा बहुत देर से सोच रही थी कि कुछ कहूँ। कृतज्ञता प्रकट

करने को बार-बार उसका मुंह हिलता था, परन्तु लज्जावश रुक जाती थी। मगर इस बात को सुनकर उससे न रहा गया। शर्म को जीतकर उसने आंखें ऊँची कीं और उम्मेद की ओर देखते हुए कहा—

आपने हम लोगों के लिए जो तकलीफ़ उठाई, वह क्या कम थी? उसका अहसान हम लोग कभी न भूलेंगी। अगर आप न आ जाते तो न जाने वह बदमाश हमारी क्या गत बनाते। आपकी मेहरबानी है कि आपने इतनी मदद की। ईश्वर की कृपा से घर में सब कुछ है। आप फिक्र न करें। इन वाक्यों को मुंह से कहते समय श्यामा उम्मेद को देख रही थी। दोनों की आंखें थोड़ी देर के लिए मिल गयीं। जो मुंह न कह सका वह आंखों ने कह दिया और आंखों ने यह सन्देश दिलों को कह दिया और दिल ने उसे आत्मा तक पहुँचा दिया। एक ओर सहानुभूति थी, दूसरी ओर कृतज्ञता, और दोनों में ही प्रेम का भाव अंकुरित हो रहा था।

ठहरने का अब कोई बहाना नहीं था। उम्मेद वहां से चला गया।

(४)

श्यामा और उसकी माता पर धक्का लगने की बात मिल में शीघ्र ही फैल गई। खबर मि० भरूचा के कानों में भी पड़ी। उसने इस मौके को अपना जाल फैलाने के लिए अनुकूल समझा। उस रात दिया बलने के पीछे मि० भरूचा ने सुखदेई की कोठरी में दबे पाँव प्रवेश किया।

सुखदेई होश में आकर बैठ गई थी। श्यामा चूल्हे के पास खिचड़ी पका रही थी। दोनों ही कारखाने के एक बूढ़े हाकिम को कोठरी में घुसते देखकर आश्चर्यान्वित हुईं और कुछ घबरा गईं। सुखदेई चारपाई से उठने की कोशिश करने लगी, श्यामा सिर का कपड़ा सम्भालती हुई खड़ी हो गई। भरूचा ने हाथ से सुखदेई को बैठने का इशारा किया और चारपाई के पास पड़े हुए लकड़ी के सन्दूक पर बैठकर इसप्रकार बातचीत शुरू की।

तुम्हारा ही नाम सुखदेई है? क्या तुम रद्दा सूत के खाते में काम

करती हो ? आज तुम्हारे साथ ही वारदात हुई थी क्या ?

मि० भरूचा ने यह सब सवाल स्वयं ही कर डाले और जवाब की प्रतीक्षा किए बिना ही आगे कहना शुरू किया—

मैं मिल की ओर से तुम लोगों का हालचाल दरयाफ्त करने आया हूँ, अब कैसा हाल है ?

सुखदेई ने उत्तर दिया—

बाबू जी, अब तो मेरी तबीयत ठीक है। उस समय तो मैं बदहवास सी हो गई थी। बहुत चोट लगी थी। बेचारी श्यामा भी गिरी थी पर ईश्वर ने दया की कहीं चोट नहीं आई। भरूचा ने आश्चर्य से कहा—

हां, वह श्यामा कौन है ?

आपकी गुलाम है बाबू जी ! वह भी कारखाने में ही काम करती है।

श्यामा को यह गुलाम वाली बात कुछ अच्छी न लगी, वह चुपचाप देगची में कड़छी चलाने लगी।

भरूचा ने उत्सुकता प्रकट करते हुए कहा—अच्छा, यह तुम्हारी लड़की श्यामा है। बड़ी अच्छी है। इसकी उम्र क्या होगी ?

इसकी उम्र कोई सोलह वर्ष होगी, बाबू जी, बेचारी अभागी है। एक साल हुआ इसका घर वाला मर गया। तभी से बेचारी मेरे पास रहती है। वह बड़ा अच्छा था, बाबू जी। ऐसा दामाद मिलना मुश्किल है। यह भगवान् की मर्जी, उसके आगे किसी की क्या चल सकती है ?

भरूचा ने सहानुभूति प्रगट करते हुए कहा—तब तो बेचारी बड़ी दुखिया है। अफसोस यही है कि ऐसे ग़रीबों की हालत पूछने वाला कोई नहीं। अच्छा तो सुखदेई, तुझे इलाज-विलाज के लिये कुछ खर्च की जरूरत होगी। यह १०) का नोट है, मैं श्यामा को दिए जाता हूँ।

सुखदेई १०) के नाम से घबराकर बोली—नहीं बाबू जी, मुझे कुछ नहीं चाहिए, हम दोनों कमाती हैं। हमारे पास खाने-पीने को सब

कुछ है। तुम्हारी दया ही बहुत है।

भरूचा ने समझाते हुए कहा—तुम घबराओ नहीं। यह रुपया मैं अपने पास से नहीं दे रहा हूँ। यह तो कारखाने की ओर से ही समझो।

फिर श्यामा की ओर देखकर कहा—श्यामा! देखो, तुम्हारी माँ इस बात को नहीं समझती, कारखाने वाले अपने मज़दूरों की तकलीफ़ में मदद दिया करते हैं, उसे लेने में कोई हर्ज नहीं।

श्यामा ने समझा कि मां सचमुच बूढ़ी हो गई। इतना भी नहीं समझती कि मज़दूरों की मदद कारख़ाने वाले किया ही करते हैं। उसे भरूचा ने मां से अधिक अक्लमन्द समझा, यह बात भी उसे अच्छी लगी। उसने भरूचा की बात का कोई उत्तर न देते हुए मां से कहा—माँ, कारखाने की ओर से मदद लेने में कोई हर्ज नहीं। यह तो हमारी मेहनत का ही इनाम है।

मां चुप हो गई। वह श्यामा को अपने से समझदार समझती थी। बुढ़ापे में भोली मातायें अपने बच्चों की समझदारी पर प्रायः अत्यधिक विश्वास करने लगती हैं। सुखदेई भी भोली माता थी। भरूचा ने आगे बढ़कर १०) का नोट श्यामा के हाथ में दे दिया।

श्यामा ने कृतज्ञता भरे नेत्रों से उसकी ओर देखा, और फिर देगची में कड़छी चलाने लगी।

भरूचा फिर हालचाल दर्याफ्त करने की सूचना देकर, उन्मत्त सी आखों से श्यामा की ओर देखता हुआ वहाँ से चला गया।

(५)

सुबह मिल में काम हो चुकने पर उम्मेद सीधा सुखदेई के घर पहुँचा। सुखदेई के शरीर में कई स्थानों पर पीड़ा विद्यमान थी। श्यामा घर को झाड़बुहार कर चूल्हे में आग सुलगाने का यत्न कर रही थी। उम्मेद ने बाहिर से दरवाजा खटखटाया तो श्यामा ने पूछा कौन है? उम्मेद ने जवाब दिया—मैं हूँ उम्मेदसिंह। श्यामा उम्मेद को तो पहिचान गई थी, परन्तु नाम से अपरिचित थी। बोली—कौन उम्मेदसिंह? उम्मेद ने कहा—

वही जो कल तुम लोगों को घर पहुँचा गया था ।

जब से उम्मेद वहाँ से गया, श्यामा के दिल में तब से बराबर उसका एक अस्पष्ट-सा चित्र बना रहा था । रह रह कर उसका स्मरण आता था । कारखाने के द्वार पर का सारा दृश्यबदमाश की शतारत, उम्मेद का बीच में कूदना और मां बेटी की रक्षा करना, फिर घर तक पहुँचाना और वहाँ सहानुभूतिपूर्ण स्निग्ध दृष्टि से श्यामा को देखना—यह सब बातें चित्रों की तरह श्यामा के हृदय-पट पर घूम जातीं । ऐसा अनुभव उसने अपने जीवन में पहली ही बार किया था । दो साल तक गृहस्थ रही और पति का प्रेम भी पाया, परन्तु वह प्राप्त धन का उपभोग था। अप्राप्त और शायद अप्राप्य परन्तु मन चाही वस्तु के लिए जो एक घोर तृष्णा पैदा होती है, वह तीव्रता और घनता में अपना सानी नहीं रखती। श्यामा भी अपने हृदय में एक तीव्र और घनी अधीरता का अनुभव कर रही थी।

परन्तु उम्मेद का शब्द सुनकर श्यामा स्तब्ध-सी रह गई । कुछ न बोल सकी । मां जाग रही थी । उसने क्षीण स्वर में श्यामा से कहा—अरी, सुनती नहीं है क्या ? दरवाजे पर कल वाला बाबू खड़ा है । दरवाजा क्यों नहीं खोलती ? इसने श्यामा का संकोच तोड़ दिया। वह झटपट उठी और दरवाजे का पल्ला खोलती हुई बोली—सांकल तो बन्द नहीं थी, आप आ क्यों नहीं गये ?

उम्मेद अन्दर आ गया । उसके दिल की दशा भी श्यामा जैसी ही थी । वह भी अपने हृदय को श्यामा से शून्य नहीं पा सका था । उठते, बैठते और काम करते, सभी धूलि-धूसरित सांवले गोल चेहरे की स्मृति उम्मेद की आँखों के आगे घूमती रहती थी । दोनों के भावों में भेद इतना ही था कि जहाँ श्यामा के चिन्तन में उत्सुकता के साथ भय या संकोच मिला हुआ था, वहाँ उम्मेद का चिन्तन दृढ़ उत्सुकता से मिश्रित था ।

उम्मेद की दृष्टि अन्दर आते ही श्यामा के चेहरे पर पड़ी । आज उसे वह चेहरा कल से भी अधिक सुन्दर और आकर्षक प्रतीत हुआ ।

कल चेहरे पर गर्द थी, बाल बिखरे हुए थे और कपड़े अस्तव्यस्त थे। आज सावधान दशा में श्यामा बहुत ही भली मालूम होती थी। श्यामा ने भी उम्मेद को देखा। उसके दिल को क्या हो रहा था, उसे वह स्वयं नहीं जानती थी। उसे केवल इतना ही अनुभव हो रहा था कि वह उम्मेद की ओर निरन्तर देखना चाहती है, पर देख नहीं सकती। नीचे आँखें किये ही उसने कहा—

आइये, बैठिये! माँ आपको बहुत याद करती थीं।

उम्मेद ने सुखदेई की खाट के सिरहाने पड़े हुए लकड़ी के सन्दूक पर बैठते हुए कहा—

मैं भी तो माँ को कल से याद कर रहा हूँ। एक मिनट भर के लिये भी आप लोगों का ध्यान दिल से नहीं हटा सका। हाँ—तो माँ, तुम्हारा दर्द कैसा है?

अभी तो वैसा ही है बेटा! बूढ़ा शरीर ठहरा, पुरानी हड्डियों में जान ही कितनी है? भला हो तेरा, जो तूने हमारी सुध ली, नहीं तो हम लोगों का और कौन है?

ऐसा न कहो मां, तुम शीघ्र ही ठीक हो जाओगी। आज मैं मालिश के लिये दवा भी लेता आया हूँ। इसके मलने से दर्द जाता रहेगा।

यह कहते हुए उम्मेद ने कोट की जेब से एक शीशी निकालकर श्यामा को दे दी। श्यामा ने ले ली। इस लेने-देने में स्पर्श से श्यामा के शरीर में बिजली-सी दौड़ गई। क्यों? इसे वह भी समझ न सकी।

थोड़ी देर तक उम्मेद सुखदेई से बातें करता रहा। श्यामा देखने में तो घर के काम-काज में लग गई, परन्तु उसका ध्यान उम्मेद की ओर ही लगा था।

वह न देखती हुई भी देख रही थी, न सुनती हुई भी सुन रही थी। उम्मेद सुखदेई से कह रहा था—

देखो माँ, मुझसे कोई बात छिपा न रखो। क्या मुझे मालूम नहीं

कि तुम लोग किस ग़रीबी में गुज़ारा कर रही हो। तुम्हें ख़र्च के लिये मुझसे लेने में एतराज़ न करना चाहिये। मुझे अपना ही बेटा समझो।

सुखदेई ने उत्तर दिया—

बेटा, ईश्वर तेरा भला करे। तूने मुझे माँ कहकर मेरे दिल को ढारस दिया। मैं ग़रीब हूँ। मेरी बेटी जन्म की दुखिया है। बेचारी ने दो दिन की चाँदनी देखी थी, फिर अँधेरी रात हो गई। जब से श्यामा के चचा परलोक गये, तब से मुझे कोई हितू न मिला। तेरे प्रेम ने एक ही दिन में मेरा दिल मोह लिया है। बेटा, मैं तुझसे संकोच क्यों करूँगी? कल मैंने रुपया लेने से इन्कार कर दिया था, क्योंकि इस ग़रीबी में भी मैंने किसी दूसरे के सामने हाथ नहीं पसारा पर अब तो मैं तुझे दूसरा नहीं समझती। तूने मुझे माँ कहा है तो मैं भी बेटा जानती हूँ।

तब तो तुम्हें ख़र्च के लिए कुछ लेने में एतराज़ न होगा?

पर बेटा, कल शाम, वह जो मिल का पारसी बाबू है, वह आया था और १०) का नोट दे गया था। वह मेरे पास वैसा-का-वैसा धरा है। वह कहता था कि १०) मालिक ने भेजे हैं। अरी श्यामा दिखाना वह नोट।

पारसी बाबू के नाम से उम्मेद के माथे पर त्यौरी चढ़ गई।

हम बता आये हैं कि भरूचा कारख़ाने में अपने चरित्र के लिये बहुत बदनाम आदमी था। वह इस घर में घुसा है, यह सुनकर उम्मेद पर मानो वज्र गिरा। एक ही दिन में यह घर उसे अपना-सा लगने लगा था। मानो उसकी खोई हुई कोई चीज़ मिल गई हो। उस घर में भरूचा का घुसना ऐसा प्रतीत हुआ जैसे सेंध लगाकर कोई चोर घुस आया हो।

श्यामा अपनी धोती के लड़ में बँधे नोट को खोलकर ले आई और देखने के लिये उम्मेद के हाथ में दे दिया। नोट में कोई विशेषता नहीं थी, वैसा ही था, जैसा बाज़ारों में चलता है, पर उम्मेद को वह काँटे-

दार-सा प्रतीत हुआ। उसे हाथ से छोड़ते हुए उम्मेद ने कहा —

भरूचा बहुत बुरा आदमी है। वह शराब पीता है, और बदचलन भी है। उसके हाथ से तो एक पैसा लेना भी हराम है। उसकी आँख बहुत बद है। तुमने उससे यह नोट क्यों लिया और तुमने (श्यामा की ओर देखकर) माँ को यह नोट लेने से क्यों न रोका ?

सुखदेई ने घबराकर कहा—तो बेटा, वह तो कहने लगा कि यह रुपया मील वालों ने भेजा है, मैंने उसकी बात सच्ची समझकर ले लिया। तो क्या उसने झूठ ही कहा था ?

हाँ, उसने बिलकुल झूठ कहा था। कारखाने वाले ऐसे झगड़ों में किसी की मदद नहीं करते। वह बड़े मतलबी हैं। उनका काम होना चाहिये फिर कोई मरे या जिये। नह नोट तो भरूचा ने अपने पास ही से दिया है। इसे तुम न लेतीं तो अच्छा था।

तो अब भी कुछ नहीं बिगड़ा बेटा ! वह आज सांझ को आने की बात कह गया है। मैं उसे नोट वापिस कर दूँगी।

सांझ की बात सुनकर उम्मेद के तन में आग-सी लग गई। एक बार उसने श्यामा की ओर देखा और दूसरी बार सुखदेई की ओर। पर कुछ सोचकर चुप-सा रह गया, वह बोला नहीं।

उसे चुप देखकर श्यामा घबरा गई। वह बातचीत में कोई हिस्सा न लेकर केवल सुन रही थी। परन्तु वह सुनना बोलने से भी अधिक महत्वपूर्ण था। वह बातें सुन रही थी, और उम्मेद की ओर देखती जाती थी। भरूचा क्यों आया और उसका आना उम्मेद को क्यों बुरा लगा, इन सब बातों का रहस्य वह समझना चाहती थी, पर समझ न सकी तो भी उसके दिल में यह बात बैठ गई कि भरूचा बुरा आदमी है और उम्मेद अच्छा।

उम्मेद का जी बुरा-सा हो गया। वह थोड़ी देर तक चुपचाप बैठा रहा। सुखदेई उसके मुँह की ओर देख रही थी, श्यामा पास ही नीचे को मुँह किये खड़ी थी, भरूचा को दिया हुआ नोट उम्मेद के पांव के

पास पड़ा था, और उम्मेद अन्यमनस्क-सा होकर दरवाजे की ओर देख रहा था।

(६)

आज रात, कल के ही समय पर फिर द्वार खुला और माँ-बेटी ने घबराई हुई आँखों से भरूचा को अन्दर आते देखा। भरूचा की भी आँखों में और चेहरे पर कल की अपेक्षा लाली अधिक थी, और उसके पाँव लड़खड़ा रहे थे। उसे अन्दर आता देखकर सुखदेई चारपाई पर से उठकर बैठ गई, और श्यामा अपने कपड़ों में और अधिक सिमट कर बैठ गई। भरूचा ने सुखदेई के पास आकर पूछा—

बुढ़िया, तुम्हारा क्या हाल है ? अब चल फिर सकती हो ?

अब तो अच्छी हूँ, बाबूजी, तुम्हारी दया से चल फिर सकती हूँ पर कमज़ोरी बहुत है।

तो चलो। तुम अपनी बेटी को लेकर यहाँ से चलो। मैंने तुम लोगों के लिये एक दूसरा मकान किराये पर ले लिया है। इस गन्दे मकान से तुम्हारी कमज़ोरी दूर नहीं हो सकेगी।

इस नये प्रस्ताव को सुनकर सुखदेई कुछ आश्चर्य में पड़ गई। उसे याद आया कि वह तो १०) का नोट वापिस देने का वायदा कर चुकी थी, और यहाँ मकान किराये पर ले लिया। बोली—

बाबू जी, हम ग़रीबों पर आप इतनी दया क्यों कर रहे हैं ? हम तो इसी छोटे-से घर में खुश हैं। आपकी क्या इतनी दया कम है कि आप हाल-चाल पूछ लेते हैं। नये मकान में हम नहीं जाना चाहतीं। हाँ—और आप कल जो १०) का नोट दे गये थे, वह ले लीजिये, हमें उसकी दरकार नहीं।

भरूचा कुछ चकरा गया। कल तो बुढ़िया आसानी से हाथ में आ गई थी और आज उलटी बातें करती है, बात क्या है ? इसे किसी ने जरूर बहकाया है ? भरूचा को क्रोध आने लगा, परन्तु उसे दबाकर वह सुखदेई के पायतों बैठ गया और चिकनी-चुपड़ी बातें करके उसे फुसलाने

लगा। बातें सुखदेई से कह रहा था और आँख श्यामा पर थी। उसे कपड़ों में सुकड़ी हुई, छिपती-सी देखकर उसे और भी घबराहट हो रही थी।

बहुत-सी बातें समझाईं, पर बुढ़िया अपनी बात पर जमी रही। भरूचा की आँखें आज भयावनी थीं, उन्हें देखकर सुखदेई और भी घबरा गई और उससे पिंड छुड़ाने का प्रयत्न करने में दृढ़ हो गई। जब देर तक समझाने से भी सुखदेई ने न मानी तो भरूचा के कोप का पारा चढ़ने लगा। उसने आज नित्य से भी अधिक मात्रा में शराब चढ़ाई थी। धैर्य हाथ से निकल गया और शैतान असली रूप में दिखाई देने लगा। वह आँखों से आग और मुँह से झाग बरसाता हुआ चिल्लाने लगा—

तो तू मेरी बात नहीं मानना चाहती ? बहुत अच्छा। कान खोल कर सुन ले। मैं तेरी कोई परवाह नहीं करता हूँ। श्यामा, चल उठ, तू मेरे साथ चल।

इस समय दरवाजे पर किसी के हिलने की आहट हुई, परन्तु भरूचा आपे से बाहर होने के कारण उसे न पहचान सका।

श्यामा कपड़ों में और भी अधिक सुकड़ती हुई कातर दृष्टि से दरवाजे की ओर देख रही थी।

भरूचा चारपाई पर से उठकर श्यामा की ओर बढ़ा। सुखदेई ने हाथ जोड़कर कहा—

बाबू जी, बाबू जी, क्या करते हो, उस बेचारी को माफ़ करो। ग़रीब को इस तरह न सताओ।

पर भरूचा आगे बढ़ता ही गया और श्यामा के पास जाकर बोला—

चलती है या नहीं, या तुझे जबरदस्ती पकड़ कर ले जाना पड़ेगा।

दरवाजा और अधिक जोर से हिला और जोर-जोर से सांस चलने की भी आवाज आई। सुखदेई बेचारी चारपाई से उठकर बेटी की रक्षा के लिए आगे बढ़ना चाहती थी, परन्तु बुढ़ापा और निर्बलता के कारण पछाड़ खाकर गिर पड़ी। गिरते हुए मुँह से केवल इतना कह सकी—

हाय बेटी।

भरूचा ने बुढ़िया के गिरने की परवाह न करके श्यामा का हाथ जोर से पकड़ लिया। श्यामा ने डर कर चीख मारी। भरूचा ने चीख को रोकने के लिए अपना दूसरा हाथ श्यामा के मुँह की ओर बढ़ाया ही था कि दरवाज़ा धड़ाके से खुल गया और इससे पहले कि भरूचा सम्भलता, उम्मेद के मज़बूत हाथों ने उसकी पीठ में इस जोर से मुक्का दिया कि वह श्यामा को छोड़कर लड़खड़ाता हुआ सुखदेई की खाट से जा टकराया।

भरूचा का शरीर मज़बूत था। वह खाट से टकरा कर गिरा नहीं, सम्भल गया। उसने जब उम्मेद को देखा तो चकरा-सा गया। वह उसे पहचानता था। मिल का कोई मज़दूर भरूचा का सामना करे यह तो असम्भव-सी बात थी, क्योंकि सभी जानते थे कि उसकी पहुँच मालिकों तक है और उसके डंक में बड़ा घातक ज़हर है। एक मज़दूर द्वारा ठोकर खाकर भरूचा का क्रोध बारूद की आग की तरह भड़क उठा और वह उम्मेद पर टूट पड़ा।

यों तो दोनों ही मज़बूत थे, पर उम्मेद जवान था और साथ ही उसके होश कायम थे। भरूचा उम्र में बड़ा था और शराब के कारण आधा बेहोश था। लड़ाई बराबर की न रही। थोड़ी देर में भरूचा का दम टूट गया, वह नीचे आ गया और उम्मेद उसकी छाती पर सवार हो गया। भरूचा के माथे और सिर में कई चोटें भी आ गई थीं।

शत्रु को परास्त करके उम्मेद ने उदारता का परिचय दिया। उसे दस-बीस खरी गालियां सुना कर यह शर्त पेश की कि अगर तू वायदा करे कि फिर कभी श्यामा की ओर आँख उठा कर नहीं देखेगा, तो तुझे जिन्दा छोड़ दूंगा, नहीं तो जान से मार डालूंगा।

भरूचा को जान प्यारी थी, उसने वायदा कर लिया कि ऐसा ही करूँगा पर साथ ही मन में सोच लिया कि बच्चा जी! एक बार छूट जाऊँ, फिर तुझे वह मज़ा चखाऊँगा जो जन्म भर याद रहेगा।

उम्मेद ने वायदा लेकर भरूचा को छोड़ दिया और दरवाज़ा खोल-कर अन्धेरी रात में गली में धकेल दिया। श्यामा, जो डर के मारे स्तब्ध-सी हो रही थी और एक कोने में खड़ी चकित नेत्रों से इस कांड को देख रही थी, भरूचा के चले जाने पर माँ के पास पहुँची, और उसके देह को हाथ लगाकर देखने लगी कि उसमें जान बाकी है या नहीं ?

(७)

दोनों आदमी देर से मन्त्रणा कर रहे हैं। दोनों ही हमारे पुराने परिचित हैं। एक तो कारखाने के खज़ानची मि० भरूचा और दूसरे इंजन खाते के असिस्टेन्ट हाजी नसीरअली।

भरूचा के निवासस्थान पर आज सुबह से दोनों कुछ सलाह कर रहे हैं। सलाह तो गुप्त है, पर पाठक आइये, हम आपको परोक्ष रूप में वहां ले चलकर खड़ा कर दें। गणेश जी के वरदान से लेखकों को परोक्ष रूप धारण करने और कराने की शक्ति प्राप्त हो चुकी है। आज उसी से काम लेना पड़ेगा।

भरूचा कह रहा था—

यह तो कुछ मुश्किल नहीं है। बशीर का टिकट कटाना क्या कठिन है ? तुम उसकी दो-चार शिकायतें कर दो। मैं सेक्रेटरी के कान भर दूंगा। पहले उस पर बहुत भारी जुर्माना करा देंगे। अगर शोर मचा-येगा तो अलग करवा देंगे।

हाजी—यह तरीका तो ठीक है, पर मुश्किल तो यह है कि मेरे खाते के मज़दूर बशीर को बहुत पसन्द करते हैं। वह शैतान सलूक का बड़ा मीठा है और मजदूरों से मिलजुल कर रहता है। मुझे डर है कि कहीं उसके अलग होने से हड़ताल न हो जाय।

भरूचा—भला इस जरा-सी बात पर हड़ताल क्यों होगी ? इससे बहुत बड़ी-बड़ी बातें हो गईं, पर किसी ने हड़ताल न की।

हाजी—मालूम होता है, बाबू जी तुम अपनी ही दुनिया में रहते हो। तुम्हें मिल के हाल-चाल का कुछ भी पता नहीं।

भरूचा—तो क्या मिल में कोई नई बात चल रही है।

हाजी—हां, कुछ दिनों से मिल के मजदूरों में एक नई ही लहर चल गई है। बम्बई से दो आदमी आये हैं, जो अपने-आप को मजदूर यूनियन के मिशनरी बतलाते हैं। वह कभी-कभी हमारी मिल की लाइन में आते हैं, और मजदूरों को बहकाते हैं। बशीर और उम्मेद जो आपस में गहरे दोस्त हैं, उन लोगों से बहुत मेल-जोल रखते हैं।

भरूचा—क्या कहा ? उम्मेद ? वही······जो लम्बा-सा जवान-सा लड़का है।

हाजी—हाँ वही बशीर का दोस्त ? तुम उसे जानते हो ?

भरूचा—जानता क्यों नहीं ? खूब जानता हूँ, और असल में मैंने तुम्हें उसी के बारे में बातचीत करने को बुलाया था, परन्तु तुमने आते ही अपना किस्सा छेड़ दिया, और मेरी बात पीछे रह गई।

हाजी—खैर, देर आयद दुरुस्त आयद। पहले न सही, पीछे ही सही। आप अपनी भी कह डालिये।

भरूचा—मेरी बात तो इसी उम्मेद से ताल्लुक रखती है। मैं इस छोकरे से बदला लेना चाहता हूँ—इसे अपने रास्ते से हटाना चाहता हूँ।

हाजी—वह क्यों ?

भरूचा—बस। अभी मत पूछो, फिर कभी बतलाऊँगा। इस वक्त तो अपने-अपने मतलब की बात करो। तुम बशीर को खत्म करना चाहते हो, मैं उम्मेद को। तुम कहते हो, दोनों ही आदमी आपस में दोस्त हैं, और बाहर के शरारती आदमियों से मिलते-जुलते हैं। आओ, दोनों मिलकर जोर लगायें और दोनों ही दुश्मनों को उखाड़ फेंकें।

हाजी—बहुत अच्छी बात है। लाओ हाथ पर हाथ। देखो काम अधूरा न रहने पाये।

हाजी ने हाथ आगे किया, भरूचा ने उस पर अपना हाथ रखते हुए कहा 'आमीन।' इसके पीछे दोनों षड्यन्त्रकारी देर तक बैठे हुए मन्त्रणा का तानावाना बुनते रहे।

(८)

इतवार का दिन था और सायंकाल का समय। बाग़ में कोई तीन हजार मज़दूर एकत्र थे। एक कुर्सी पर गांधी टोपी, खद्दर का कुर्ता और रेशमी चादरा पहिने बा० तोताराम विराजमान थे। बा० तोताराम शहर के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता हैं, उनके सामने एक मेज़ रखी है, जिस पर खड़े होकर बम्बई से आये हुए मज़दूर-नेता श्री पाटनकर व्याख्यान दे रहे हैं। इस समय वह पूरे जोर पर हैं। पतला-दुबला शरीर, दाढ़ी मूंछ मुंडी हुई, केवल कुर्ता और धोती पहिने हुए। उनका कद छोटा था, इस कारण सर्वसम्मति से उन्हें मेज़ पर खड़ा किया गया था। वह मज़दूरों की वर्त्तमान दशा का चित्र खींच रहे थे, इस कारण खून में उबाल आ रहा था। आँखें माथे में से निकली पड़ती थीं, मुँह में झाग आ रहे थे और सारा शरीर मानो बिजली से हिल रहा था।

पाटनकर के पीछे काकाराम बोलने के लिए खड़ा हुआ। काकाराम एक स्थानीय मिल में वीवर का काम करता था। किसी कारण से उसका मिल के मैनेजर से झगड़ा हो गया और नौकरी छूट गई। तब से वह मज़दूरों में आन्दोलन करने का काम करता है। वह कोई वक्ता नहीं है, परन्तु दिल में क्रोध और दुःख का आवेग इतना प्रबल है कि शब्दों में आग-सी पैदा हो गई है। उसने मिल के मालिकों को खूब आड़े हाथों लिया। उसने कहा, ये सब स्वार्थी और मक्कार हैं। अपने मतलब के लिए मज़दूरों की खुशामद कर लेते हैं, पर मतलब सिद्ध हो जाने पर उनका गला काट देते हैं। मज़दूरों के खून पर ये लोग मोटे हो रहे हैं। इत्यादि इत्यादि। काकाराम के व्याख्यान ने मज़दूरों में बड़ा जोश पैदा कर दिया। कई बार तालियां पिटीं और कई बार 'दुनिया के मज़दूर जिन्दाबाद' का नारा ज़ोर से लगाया गया।

काकाराम के बाद बम्बई से आये दूसरे सज्जन स्वा० भूतानन्द ने एक प्रस्ताव पेश किया। प्रस्ताव का अभिप्राय यह था कि 'दिल्ली के मज़दूरों की यह सभा घोषणा करती है कि सम्पत्ति के बटवारे की यह

प्रथा सर्वथा अन्यायपूर्ण है। कारखानों पर मालिकों का नहीं मजदूरों का ही कब्जा होना चाहिए और जब तक ऐसा न हो तब तक के लिए मिल-मालिकों के सामने निम्नलिखित शर्तें मजदूरों की ओर से पेश की जाएँ।

(१) केवल ५४ घन्टों का सप्ताह माना जाय।

(२) सात रोज में एक रोज छुट्टी अवश्य हुआ करे।

(३) किसी भी मजदूर को १५ दिन का नोटिस या १५ दिन का वेतन दिये बिना काम से अलग न किया जा सकेगा।

यदि मिल मालिक इन शर्तों को २४ घंटे के अन्दर-अन्दर न माने तो मजदूरों को हड़ताल कर देनी चाहिये। इस प्रस्ताव का समर्थन स्थानीय कांग्रेस के एक सिक्ख कार्यकर्त्ता ने किया, उसका नाम जसवन्तसिंह था। वह मोटर-ड्राइवर यूनियन का सेक्रेटरी था।

मजदूर लोग सब वक्तृताओं को बड़े ध्यान से सुन रहे थे। बातें उनके कानों को बड़ी अच्छी लग रही थीं। उन्हें बताया जा रहा था कि मिलों के असली मालिक तुम हो। सेठ तो चोर हैं। उनका कोई अधिकार नहीं है कि तुम पर हुकूमत करें। मार्क्स और लेनिन ने भी ऐसा ही कहा है। मजदूरों के दिलों को यह बातें बहुत भाती थीं। प्रस्ताव भी उन्हें बहुत प्यारे लगे। अब काम बहुत अधिक करना पड़ता है, दाम कम मिलते हैं। अगर प्रस्ताव मान लिया जाय तो दाम अधिक मिलेंगे, काम कम करना होगा; कितनी अच्छी बात है!

वक्तृताएँ हो जाने पर सभापति महाशय प्रस्ताव पर राय लेने के लिए खड़े हुए। आपके खड़े होने पर कुछ श्रोता तालियां बजाने लगे और दुनिया के मजदूरों की जय के नाद से बाग को गुंजाने लगे। आप बोलना ही चाहते थे कि लोगों ने देखा कि सभा के एक कोने में कुछ हलचल-सी मच रही है। एक आदमी खड़ा होने का यत्न कर रहा है, और कुछ लोग उसे पकड़ कर बिठाने का यत्न कर रहे हैं। सब लोगों का ध्यान उधर ही चला गया। सभापति ने खड़े होकर शान्त कराना चाहा, पर उस कोने में जो खींचातानी हो रही थी, वह बन्द न हुई।

तब सभापति ने चिल्लाकर कहा कि आप लोगों को लज्जा आनी चाहिए कि आप सभा में आकर असभ्य व्यवहार करते हैं। आखिर मामला क्या है ? आप लोग क्यों एक आदमी को पकड़ कर बिठाने का यत्न कर रहे हैं ?

इस पर जिस आदमी को पकड़ कर बिठाने का यत्न किया जा रहा था, वह जोर से चिल्लाया कि देखिए सभापति जी, मैं कुछ कहना चाहता हू, और ये लोग मुझे कहने नहीं देते। फिर आसपास के मजदूरों ने उसे पकड़ कर बिठाना चाहा, परन्तु वह भी मजबूत था, खड़ा रहा; शोर बढ़ता ही गया।

सभापति जी मेज पर खड़े होकर लोगों को शान्त कराने लगे। लोग चुप तो हो गये, पर कोने की समस्या हल न हुई। वह आदमी खड़ा ही रहा और लोग उसे बैठने को कहते ही रहे।

तब सभापति जी ने अपने पूरे अधिकार से काम लिया। उन्होंने मत भरी आवाज से कहा कि आप लोग उस कामरेड को, जो बोलना चाहता है, छोड़ दो और बोल लेने दो ! सुनो तो सही कि वह क्या कहता है। भाई, तुम मेरे पास आकर अपने विचार प्रकट करो। लोगों ने उसे छोड़ दिया। वह श्रोताओं की पंक्ति को चीरता हुआ सभापति के पास आकर खड़ा हो गया। पाठक, आप उसे पहिचानते हैं। वह आपका पूर्व परिचित लाइन जाबर उम्मेदसिंह है।

सभापति की आज्ञा पाकर उम्मेदसिंह ने कहना शुरू किया। उसने कहा—

भाइयो, मुझे अफसोस है कि आप लोग मेरी सच्ची बात को सुनना नहीं चाहते। आपने अब तक जो बातें सुनी हैं, वे एकतर्फा हैं। वे आपकी समझ में नहीं आ सकतीं। मैं निश्चय से कह सकता हूँ कि वे आपकी समझ में नहीं आईं। वे बातें ऊँची फिलासफी की हैं। हम तो मज़दूर आदमी हैं, हमें इससे क्या मतलब कि मार्क्स साहिब या लेनिन साहिब ने क्या कहा है ? क्या वह हमारे शहर में आये हैं ? क्या उन्हें

आप में से किसी ने देखा है ? (नहीं नहीं का शोर)। फिर आप उनकी बात कैसे मान लेंगे ? किसी भाई ने कहा था कि मील के मालिक हम हैं। क्या यह सच है (हाँ हाँ का शोर) ? तो फिर क्या देर है ? अपनी-अपनी तनख्वाहें आज से दुगुनी कर दो। मालिक तो तुम हो ही। क्या तुम आज मिल में मनमानी कर सकते हो ? (नहीं नहीं की ध्वनि)। तो फिर आप मालिक कैसे ठहरे ? वह लोग आपको फ़जूल बहकाते हैं, जिनका हड़ताल से कुछ नहीं बिगड़ेगा। बिगड़ेगा तो हमारा, जिनकी नौकरी जाती रहेगी।

सभापति ने देखा कि रंग बिगड़ रहा है। फौरन घण्टी बजाने लगे। उम्मेदसिंह रुककर श्रोताओं की ओर देखने लगा। कुछ मजदूर चिल्लाने लगे—बोलो, बोलो। दूसरों ने कहा बैठ जाओ, बैठ जाओ। सभा में शोर मच गया। सभापति ने मेज़ पर खड़े होकर चुप कराने का यत्न किया, फिर भी सफलता न हुई। मजदूर-संघ के नेता जोश में भरे हुए थे, वह बलपूर्वक उम्मेद को वहाँ से हटाने की चेष्टा करने लगे। उम्मेद के हमजोली भी कम नहीं थे। वे भी आस्तीनें चढ़ा कर मैदान में आ गये। मारपीट का खतरा हो गया। सभापति जी बेचारे मजदूरों के नेता बनने आये थे, न कि सिर को ख़तरे में डालने। गड़बड़ होती देखकर वह सभा के विसर्जन की सूचना देते हुए दो-तीन शरीर-रक्षकों के साथ मोटर में बैठकर चल दिये। सभा के स्थान पर थोड़ी देर तक तो वाग्युद्ध होता रहा, फिर धीरे-धीरे मजदूर अपने-अपने क्वार्टरों की ओर चले गये। अच्छा हुआ कि सायंकाल का अंधेरा बाग पर छा रहा था, इसलिए भीड़ जल्दी ही तितर-बितर हो गई और किसी को भारी चोट नहीं लगी।

(६)

वह रात मिल के हल्के में बड़ी चहल-पहल की थी। चारों ओर सलाह-मशविरे और मन्त्रणा हो रही थी।

सब से पहले हम मजदूर संघ के दफ्तर में चलते हैं। वहां मज़दूर

दल के सभी नेता विद्यमान थे। लाला तोताराम भी शाम की घबराहट के शान्त हो जाने पर, फिर लौट आये थे। पाटनकर, काकाराम और जसवन्तसिंह के अतिरिक्त अन्य भी बहुत से मज़दूर विद्यमान थे।

इस प्रश्न पर विवाद हो रहा था कि अब क्या किया जाय ? पाटनकर का प्रस्ताव था कि मिलवालों को अभी अल्टीमेटम भेज दिया जाय और यदि ठीक उत्तर न आये तो कल शाम से हड़ताल शुरू होनी चाहिये। काकाराम आदि बहुत से मज़दूर इस प्रस्ताव से सहमत थे। लाला तोताराम कह रहे थे कि हड़ताल का प्रस्ताव पास नहीं हो सका, इसलिये हड़ताल करना ठीक न होगा। पर दूसरे पक्ष के लोग इस आशंका को व्यर्थ समझते थे। प्रस्ताव तो एक तरह से पास हो चुका था, शोर मच जाने से पास होने की सूचना नहीं दी जा सकी और सभापति ने मुँह में तो उसकी स्वीकृति की घोषणा कर ही दी थी। कुछ लोगों ने आपत्ति उठाई कि यदि हड़ताल कामयाब न हुई तो ? इस पर काकाराम ने उन्हें बहुत आड़े हाथों लिया। उसने कहा कि तुम लोग बिल्कुल दब्बू और डरपोक हो। मुझे तो शक है कि तुम लोग मिलवालों के पिट्ठू भी हो। हड़ताल सफल क्यों न होगी ? ठीक समय पर मैं दरवाजे पर रहूँगा, देखूँगा कौन-सा माई का लाल है जो काम पर चला जायगा ?

ऐसे जोश के सामने कौन ठहर सकता था। सब आक्षेप रद्द कर दिये गये और उसी समय एक अल्टीमेटम मिल के सेक्रेटरी को भेजा गया, जिसका आशय यह था कि या तो मज़दूर-संघ की सब शर्तें मंजूर की जायँ, नहीं तो कल शाम के ६ बजे से मिल में हड़ताल कर दी जायगी।

अब हम सेक्रेटरी साहब के बँगले पर चलते हैं। वहाँ भी युद्धसमिति की बैठक हो रही थी। मिल के सब अधिकारी एकत्र थे। वहाँ असिस्टेन्ट सेक्रेटरी बा० रामनाथ, खज़ानची मि० भरूचा, मैनेजर मि० देवले और विभागों के बहुत से इन्चार्ज विद्यमान थे। हमारे पूर्व परि-

चित हाजी नसीरअली साहब भी अपनी शानदार दाढ़ी और इबादती अदा के साथ कुर्सी पर विराजमान थे। मिल के रिपोर्टरों ने शाम की सभा की सब कार्रवाई कह सुनाई। सभा में उपस्थित कुछ मजदूरों के नाम भी सुनाये गये। उम्मेद की वक्तृता की चर्चा भी हुई। रिपोर्टर की रिपोर्ट में जो कमी थी, वह अफसर लोग पूरी करते जाते थे। प्रायः सभी अफसर सभा से दूर वृक्षों की ओट में खड़े होकर तमाशा देख रहे थे। जब उन मजदूरों की सूची लिखी जाने लगी, जो सभा में हाजिर थे, तो हाजी साहब ने उनमें एक नाम जुड़वा दिया। आपने कहा कि मेरे खाते में जो बशीर नाम का आदमी काम करता है, वह भी जल्से में मेज के पास ही बैठा हुआ था और 'दुनिया के मजदूर जिन्दाबाद' के नारे लगा रहा था। बशीर का नाम भी नोट कर लिया गया। उम्मेद के साहस का सेक्रेटरी पर बहुत असर हुआ। सेक्रेटरी ने उसकी प्रशंसा में कई वाक्य कहे। उन्हें सुनकर भरूचा का चेहरा उतर गया और उसने एक तिरछी-सी चोर निगाह से हाजी नसीरअली की ओर देखा। उस दृष्टि का अभिप्राय यह था कि हजरत खूब हाथ मार गये, हमारा तो मजा ही किरकिरा हो गया। नसीरअली ने जवाब में एक बहुत ही अभिप्राय भरी दृष्टि से भरूचा की ओर देखा, जिसका मतलब था कि घबराओ मत, सब ठीक कर लूँगा।

सलाह मशवरे में रात के १२ बज गये। अभी बातचीत चल ही रही थी कि मजदूर संघ का भेजा हुआ अल्टीमेटम आ पहुँचा। सेक्रेटरी-साहब के माथे पर चिन्ता की रेखा गहरी हो गई। अब घबराई हुई-सी आवाज में सलाह होने लगी। सब लोगों को काम बाँट दिये गये। बा० रामनाथ के सुपुर्द यह काम दिया गया कि वह उम्मेद द्वारा मजदूरों को काम पर लाने की चेष्टा करें। इस काम के लिये जितना रुपया खर्च होगा, मिल उसके लिये तैय्यार है। भरूचा को पुलिस के अफसर के पास, देवले को आन्दोलनकारियों के पास और नसीरअली को मजदूरों को समझाने के लिये रवाना कर दिया गया। देवले को मजदूर लोग चाहते

थे, क्योंकि वह तबियत का उदार था और जुबान का मीठा था। जिन मज़दूरों को हड़ताल का नेता समझा जाता था, उनसे मिलने का काम देवले के सुपुर्द किया गया।

रात को दो बज चुके थे; सब लोग अपनी-अपनी मुहिम पर रवाना हुए।

(१०)

नसीरअली मिल के पास ही एक किराये के मकान में रहता था। मज़हबी मुसलमान होने के कारण ज़बर्दस्त पर्दा था। घर के अन्दर क्या होता है, यह बाहर के आदमी नहीं जान सकते थे। रात के तीन बजे का समय था। अभी पूर्वदिशा में प्रकाश की किरणें दिखाई नहीं दे रही थीं। चारों ओर घोर अन्धेरा था। एक टिमटिमाते हुए दिये की रोशनी में उस पर्देदार घर के आँगन में बैठे हुए १३ आदमी कुछ गुप्त-मन्त्रणा कर रहे थे।

नसीरअली ने कहा—

तुम तसल्ली रखो, इंजिनखाता ज़रूर बन्द हो जायगा। इन बद-माश मिलवालों को मैं छठी का दूध याद करा दूँगा। तुम लोग घब-राओ नहीं। हड़ताल हो और पूरे ज़ोर से हो। ऐसा करो कि एक भी आदमी कारखाने में न घुसने पाये।

एक मज़दूर ने पूछा कि हाजी जी उस उम्मेद का क्या इलाज किया जाय। उसने बहुत से हिन्दू मज़दूरों को अपने साथ कर लिया है।

नसीरअली ने उत्तर दिया—उसी बदमाश का तो इलाज करना है। बड़ा आया है मालिकों का पिट्ठू। उसे जी हुज़ूरी की पूरी सज़ा देनी चाहिये। यही काम सुपुर्द करने को तो तुम्हें यहाँ बुलाया है। यह काम तुम लोगों को सौंपता हूँ कि उस बदज़ात काफ़िर को मिल के दरवाजे तक न पहुँचने दो। जहाँ वह घर से बाहर निकले तो मारे लाठियों के ढेर कर दो। हड़ताल के गुलगपाड़े में अपराधी को पकड़ना मुश्किल हो जायगा। एक और भी बात है, मज़दूरों को बहकाने के लिये मिल की

ओर से कुछ रक़म भी अवश्य मिलेगी। वह भी शायद उसके पास होगी। जब बेहोश हो जाय तो उसकी जेब की पूरी तलाशी लेकर भाग जाना।

लगभग उसी समय सेक्रेटरी साहब के शयनागार का दरवाज़ा भी खटखटाया गया। चिन्ता के मारे नींद आँखों से भाग चुकी थी, और सेक्रेटरी साहब पलँग पर पड़े विचार-सागर में गोते खा रहे थे कि इतने में आहट हुई। उठकर दरवाज़ा खोला तो देखा कि मि० देवले काका-राम को साथ लेकर आये हैं। काकाराम हड़ताल का अगुआ था। यह सब हलचल उसी की पैदा की हुई थी। उसे लगभग छः मास पूर्व मिल से अलग किया गया था, तब से वह मिल के दरवाजे पर ही धूनी रमाये बैठा था। उसकी घोषणा थी कि या तो उसी नौकरी पर बहाल हूँगा; नहीं तो मिल की ईंट से ईंट बजा दूँगा। अब तक मिल के अधिकारी उसकी उपेक्षा करते रहे। मज़दूर-संघ की स्थापना, बम्बई के मज़दूर नेताओं को निमन्त्रण और रविवार की सभा, यह सब काकाराम के ही कारनामे थे।

सेक्रेटरी ने एक प्रसन्नताभरी दृष्टि से देवले की ओर देखा और फिर काकाराम की ओर मुड़कर कहा—कौन ? काकाराम ! कहो भाई कैसे हो ?

काकाराम कुछ झेंप-सा गया, बोला—जयराम जी की बाबू जी। मि० देवले अपने साथ लाये हैं।

आओ, अन्दर आओ भाई। बहुत दिनों में आये। चलो, बैठो।

कमरे के अन्दर जाकर सेक्रेटरी साहब पलँग पर बैठ गये और दोनों आदमियों ने पास की कुर्सियाँ खींच लीं। उनमें बहुत देर तक बातें हुईं। काकाराम ने अपनी क्लेश-कहानी सुनाई और शिकायत में कहा कि मैंने कई दरख्वास्तें दीं और आपसे मिलने की कोशिशें कीं, पर दरख्वास्तों का कोई जवाब न मिला और दरबान मिल में नहीं घुसने देता था। 'तंग आयद बजंग आयद।' दिक़ आकर तो गाय भी सींग

दिखा देती है। मुझसे भी जो कुछ बन पड़ा, किया।

सेक्रेटरी साहब ने इन सब बातों से बिल्कुल अनभिज्ञता बतलाई। कहा कि न मेरे पास कोई दरख्वास्त पहुँची और न कभी दरबान ने सूचना दी कि तुम मिलना चाहते हो। क्या कहूँ यह दफ्तर के आदमी बिल्कुल निकम्मे हैं। मुफ़्त की तलब पाते हैं। बहुत-सी बातें मुझ तक पहुँचाते ही नहीं।

काकाराम मूर्ख नहीं था। खूब जानता था कि सेक्रेटरी साहब कोरा झूठ बोल रहे हैं। जो कुछ हुआ उन्हीं की राय से हुआ, पर इस समय तो उसकी जीत हो रही थी। अब मुर्दे उखाड़ने से क्या लाभ? वह सीधा मतलब पर आया—

अच्छा तो अब मेरे लिए क्या हुक्म है?

तुम्हें कल ही बहाल कर दिया जायगा और तलब भी रुपये में दो आना बढ़ा दी जायगी। बात यह है कि हड़ताल न होनी चाहिये।

काकाराम मजदूर तो था, परन्तु मजदूर-संघ वालों के संग से बहुत चतुर हो गया था। उसने सौदा करने की ठानी। बोला—आप जानते हैं कि हड़ताल को रोकना बहुत कठिन है, सब मजदूर फैसला कर चुके हैं और मैं उस मामले में बहुत दूर तक फँसा हुआ हूँ। हड़ताल तब तक नहीं टूट सकती, जब तक कि कुछ मजदूरों की मुट्ठी गर्म न की जाय। यदि आप कुछ रुपया खर्च कर सकते हैं तो काम बन जायगा।

तुम्हारी राय में कितना रुपया काफी होगा?

मैं समझता हूँ कम-से-कम दो हज़ार रुपये बांटने की आवश्यकता पड़ेगी।

सेक्रेटरी दो हजार रुपये के नाम से बिदक गया। इतनी बड़ी रक़म कैसे दी जायगी। कुछ झिचकर बोला—

देखो भाई काकाराम, ऐसा अनर्थ न करो। दो हज़ार तो सेठ जी के दरबार में कभी मंजूर न होगा। थोड़े में काम चलना चाहिये। सौ दो सौ में ही फैसला हो जाय तो अच्छा हो।

काकाराम ने लापरवाही दिखाते हुये कहा—अच्छा तो जाने दीजिये। रुपये के विना हड़ताल नहीं रुक सकती और आप रुपये को हवा नहीं लगाना चाहते। यही तो आप लोगों की खराबी है। जबर्दस्ती से चाहे कोई हजारों की रक़म छीन ले जाय परन्तु राजी से एक पैसा भी खर्च करना नहीं चाहते। कितना बड़ा अन्धेर है।

यह कहकर काकाराम उठने लगा। सेक्रेटरी ने देखा, काम बिगड़ता है। कुछ देर तक सौदा होता रहा। अन्त में निश्चय हुआ कि काकाराम को उसी समय एक हज़ार रुपया दे दिया जाय और वह हड़ताल को रोकने की पूरी कोशिश करे।

(११)

हड़ताल के दिन प्रातःकाल ७ बजे मजदूर संघ के नेता ला० तोताराम के बंगले पर एकत्र हुए। उन लोगों को यह देखकर कुछ आश्चर्य हुआ कि हड़ताल के लिये सब से अधिक जोश रखने वाला काकाराम नदारद था। अस्तु, बातचीत शुरू हुई। यह उन्हें मालूम हो चुका था कि सेक्रेटरी के पास से अल्टीमेटम का कोई उत्तर नहीं आयगा, और मिलवालों ने हड़ताल रोकने की कोशिश जारी कर दी है। उपस्थित सदस्यों के चेहरों से घबराहट प्रकट हो रही थी, क्योंकि हड़ताल कर देना बहुत आसान है, उसे सम्भालना कठिन है।

घबराहट का विशेष कारण यह भी था कि ला० तोताराम कुछ फिसलते प्रतीत होते थे। मजदूर-संघ के फण्ड में एक कौड़ी भी नहीं थी। केवल ला० तोताराम का भरोसा था। उनके पास काफी पैसा था। कोठी थी, दूकान थी, शहर में मकान थे, और कई मोटरें थीं। मज़दूर उनके रुपये को अपना ही समझते थे। ला० तोताराम ने कई बार ऐसी घोषणा भी की थी। उस घोषणा को सच्ची करने का समय आ गया तो ला० तोताराम का दिल घबराने लगा। हड़ताली मजदूरों के पेट पालने के लिये तो बहुत धन चाहिये। राशि कई हज़ार तक पहुँचेगी। क्या मज़दूरों में लोकप्रियता प्राप्त करने के लिये इतनी बड़ी

रकम खर्च होगी ? यह ठीक है कि उनकी मन्शा म्युनिसिपल कमेटी में जाने की थी और कमेटी में चुनाव के समय उन्हें मज़दूरों से बड़ी उम्मीदें थीं, परन्तु फिर भी तो हड़ताल का खर्च एक आदमी के बस का नहीं। ला० तोताराम ऐसी ही विचारधारा में बह रहे थे।

मज़दूर नेताओं का सब से बड़ा भरोसा ला० तोताराम की थैली पर ही था। उसका मुँह खुलने में देर देखकर वे घबरा गये। ला० तोताराम ने बरसों तक मज़दूरों को मालिकों के विरोध में भड़काया था, परन्तु अब जब उनके उपदेशों का फल सामने आ रहा था, तब उनका दिल डरने लगा। अभी तक वह कहते थे 'हड़ताल होनी चाहिये', परन्तु आज मालूम हुआ कि हड़ताल हो भी सकती है। यह भी दीख रहा था कि हड़ताल ऐसी होती है।

मज़दूर नेता हड़ताल पर डटे हुए थे। उनकी शान का प्रश्न था। ला० तोताराम हड़ताल के मामले को लटकाना चाहते थे। उनका प्रस्ताव था कि मिल के अधिकारियों के पास एक डेपुटेशन भेजा जाय, जो सुलह कराने का यत्न करे। मज़दूर नेता इस प्रस्ताव के स्वीकार होने में अपनी हार समझते थे। बात-ही-बात में बहस होने लगी। एक-दूसरे पर छिपे हुये व्यंग बरसने लगे। ला० तोताराम ने मज़दूर नेताओं के प्रस्ताव का विरोध करते हुये कह दिया कि बात यह है कि आप लोग तो अपनी शान पर मर रहे हैं और उधर मज़दूर लोग फँस जायेंगे, और मेरा रुपया बर्बाद हो जायगा, आप लोगों की गांठ का तो कुछ जायगा नहीं।

इस आक्षेप का उत्तर देते हुए एक मज़दूर ने कह डाला कि लाला जी, आज तक तो आप हमें भड़का कर अपना काम निकालते रहे और जब पैसा खर्च करने का समय आया तो भागने लगे। हमारे लिये तो सभी सरमायेदार एक हैं। जैसे वह थे, वैसे ही आप निकले।

लाला जी भी चुपके से सुननेवाले नहीं थे। फौरन उल्टा वार किया—तुम ही कौन से मज़दूर हो। तुम जैसे गठकतरों ने ही मज़दूरों

की मूवमेण्ट को बदनाम करा डाला है। मुझसे पैसा खाते रहे और मुझ को ही आंखें दिखाते हो।

बात बहुत बढ़ गई। तू-तू मैं-मैं तक नौबत आ गई। मज़दूर लोग आस्तीनें चढ़ाते हुए खड़े हो गये। लाला जी ने भी घण्टी बजाकर चपरासी को बुला लिया। बहुत हुआ कि मार-पीट की सीमा से इधर ही मामला तय हो गया। बम्बई के आदमियों ने बीच में पड़कर निपटारा करा दिया। लाला जी ने बहुत-सा किन्तु, परन्तु करते हुये ५००) खजांची से मंगवाकर संघ के मन्त्री के हाथ पर दिये और फ़रमाया कि बस इसी से हड़ताल का खर्च पूरा कर लेना, इससे अधिक मेरे पास इस समय नहीं है।

(१२)

शाम के ६ बजे थे। मिल के दरवाजे के अन्दर दस-बारह हट्टे-कट्टे चौकीदार हाथों में लाठी लिये हुए खड़े थे। दरवाजे के बाहर तीन-चार हड़तालिये मजदूर और एक खद्दर की टोपीवाले सज्जन, हाथों में लाल झण्डियों को हिलाते हुए चिल्लाते थे कि मिल वालों का नाश हो। हड़ताल करनेवालों की जय हो। आज मिल में काम करना हराम है।

वह समय मज़दूरों के मिल में आने का था। दरवाजे पर थोड़ी ही देर में मज़दूरों की भीड़ लग गई। कुछ मजदूर अन्दर जाने का यत्न कर रहे थे, कुछ मज़दूर उन्हें रोक रहे थे। दरवान लोग लाठी हिला-हिला कर दरवाजे पर से भीड़ हटाने का उद्योग कर रहे थे। होहल्ला और शोर-गुल बढ़ने लगा। कुछ मजदूर धक्का देकर अन्दर चले गये, कुछ बाहर खड़े होकर बहार देखने लगे और बाकी शोर-गुल सुनकर घरों को वापिस जाने लगे।

जो लोग लाल झण्डियाँ हिला रहे थे, वह काकाराम की प्रतीक्षा में थे। काकाराम ने कह दिया था कि वह ठीक मौके पर दरवाजे पर आ पहुंचेगा। हड़ताल को सफल बनाने का जिम्मा उसी ने लिया था।

देखते-देखते आंखें थक गईं, पर काकाराम के दर्शन न हुए।

उधर ड्योढ़ी के ऊपर दफ्तर के कमरे में खड़े हुए ला० रामनाथ उम्मेद की प्रतीक्षा कर रहे थे। उम्मेद ने उनसे वायदा किया था कि वह दो बजे से पहले ही दरवाजे पर पहुँच जायगा और मजदूरों को समझा बुझाकर हड़ताल करने से रोकेगा। रामनाथ मजदूरों को ठीक रास्ते पर लाने के लिये १०००) के नोट उम्मेद को दे आये थे। वह साढ़े ५ बजे से ही ऊपर की खिड़की से दरवाजे की ओर झाँक रहे थे, और उम्मेद का इन्तजार कर रहे थे। देखते-देखते उनकी आँखें थक गईं, पर उम्मेद के दर्शन न हुए।

हड़ताल का काम अधूरा ही रहा। कुछ आदमी अन्दर चले गये, कुछ बाहर रह गये। किसी नेता के अभाव में हड़ताली मज़दूर शीघ्र ही आपे से बाहर हो गये और गाली-गलौज़ और मारपीट तक करने लगे। इस परिस्थित से लाभ उठाकर मिल के सेक्रेटरी ने पुलिस को इत्तिला दे दी कि मिल के दरवाजे पर कुछ लोग दंगा-फिसाद कर रहे हैं, शीघ्र ही पुलिस भेजी जाय। पुलिस ने आकर हल्की-सी लाठी चलाकर भीड़ को तितर-बितर कर दिया और लाल झण्डी वाले सज्जनों को हिरासत में ले लिया। इस तरह बड़ी धूमधाम से प्रारम्भ की गई वह जनरल हड़ताल एक घण्टे भर के गुलगपाड़े में विलीन हो गई।

७

मज़दूर से डाकू

उम्मेद ने सुना कि आज शाम को बाग में मज़दूरों का जल्सा होगा, जिसमें मज़दूरों के भले की बातें सुनाई जायेंगी। छुट्टी का दिन था। सोचा कि चलो, मजदूरों की भलाई की बातें ही सुनेंगे।

जल्से में जाकर उसने व्याख्यान सुने। गहरी फिलासफी उसकी समझ से बाहिर थी। वह मनुष्यता के प्रारम्भिक संस्कारों के साथ पैदा हुआ था। वह जानता था कि मेहनत करके पेट पालना चाहिये, पसीना बहाकर आराम से सोना चाहिये और जिसका नमक खाया उसका काम दिल लगाकर करना चाहिये। व्याख्यानों से उसकी भावनाओं को चोट पहुँची तो वह विरोध में बोलने के लिये खड़ा हो गया। न उसे मिल के मालिक से व्यक्तिगत प्रेम था और न सेक्रेटरी साहब से मुरौवत। खूब ईमानदारी से मेहनत करता था और परिश्रम के अधिकार से प्राप्त हुई तलब पाकर प्रसन्न रहता था। सभा में बोलकर उसे कोई लाभ होगा, या मिलवाले खुश होंगे, उसका उसे स्वप्न में भी ध्यान न था। जिस भावना के कारण उसने भागसिंह के कहने पर भी अपने सेठ के घर पर डाका नहीं डाला था, उसी भावना से प्रेरित होकर उसने सभा में हड़ताल के प्रस्ताव का विरोध किया।

रात के चौथे पहर में एक जमादार ने उम्मेद को मिल में जाकर सूचना दी कि मिल के असिस्टेन्ट सेक्रेटरी बाबू रामनाथ ने फौरन उसे बुलाया है। उम्मेद ने काम दूसरे के सुपुर्द कर दिया और मिल के दफ्तर में पहुँचकर बा० रामनाथ के सामने उपस्थित हुआ। बा० रामनाथ ने उसे अपने पास कुर्सी पर बिठाकर इसप्रकार बातचीत आरम्भ की।

देखो उम्मेदसिंह, आज तुमने मिल के लिये बड़ी खैरख्वाही का काम किया है। सेक्रेटरी साहब इससे बहुत खुश हैं।

इसे मैं अपनी खुशकिस्मती समझता हूँ कि सेक्रेटरी साहब मेरे किसी काम से खुश हैं, पर बाबू जी यह तो बताइये कि मैंने ऐसा खैर-ख्वाही का कौन-सा काम किया है।

तुमने आज के जल्से में हड़ताल की तजवीज़ का विरोध किया था।

जी हाँ, मैंने अपने मज़दूर भाइयों को समझाने की कोशिश की थी कि वह बहकाने वालों की बातों में न आयें और अपने मालिक का काम ईमानदारी से करें। इसमें खैरख्वाही की क्या बात थी, यह तो मेरा कर्त्तव्य था।

ठीक है। तुम्हारे विचार बहुत अच्छे हैं। हम लोग बहुत खुश हैं। तुम्हारे लिये यह बहुत अच्छा मौका है। यदि तुम थोड़ी-सी और कोशिश करो और मजदूरों को समझा-बुझाकर हड़ताल से रोक सको, तो मिल वालों पर तुम्हारा बड़ा अहसान हो जायगा।

मुझ से जो कुछ हो सके, मैं हाज़िर हूँ। जब आपका नमक खाता हूँ तो आपका काम क्यों न करूँगा? मैं उन लोगों से नहीं डरता, जो हड़ताल कराने की धमकी देते फिरते हैं। आप मेरे जिम्मे जो काम लगायेंगे, मैं उसे यथाशक्ति पूरा करूँगा।

तो सुनो। आज शाम छैः बजे से हड़ताल होने की सूचना दी गई है। उस समय तक तुम्हारा एक-एक मिनट मजदूरों को समझाने में

लगना चाहिये। उन्हें तुम सब तरह से समझा सकते हो। साम, दाम, दण्ड और भेद हर एक अस्त्र का प्रयोग करो। यदि वे इस समय मिल का साथ देंगे तो उन्हें लाभ होगा। इनाम भी मिलेंगे और मजदूरी भी बढ़ाई जायगी। और यदि उन्होंने हड़तालवालों का साथ दिया तो उन्हें नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा। इस काम के लिये तुम्हें जितने रुपयों की जरूरत हो, बतला दो। वह तुम्हें खजानची से मिल जायेंगे।

उम्मेद शेष सब बातें तो समझ गया, पर रुपये की क्या आवश्यकता हो सकती है, यह न समझ सका। उसने आश्चर्यान्वित होकर पूछा—

रुपये का क्या करना होगा बाबू जी ?

रुपये का ? कोई मजदूर पैसे से काबू में आ सके तो उसको पैसा दो। और खर्च की जरूरत किसको नहीं पड़ती। यदि तुम्हें रुपया चाहिये तो तुम भी रख सकते हो। यदि कुछ दे-दिलाकर ऐसे बाहर के आदमी तैयार किये जा सकें, जो हड़ताली मजदूरों को ठीक कर सकें, तो उनके रखने में भी कोई हर्ज नहीं। मतलब यह कि कुछ भी करना पड़े, हड़ताल को रोकना चाहिये।

उम्मेद कोई महात्मा नहीं था। वह एक अनपढ़, अक्खड़ और साधारण आदमी था। यह नहीं कि उसका आचरण-शास्त्र बहुत ऊँचा था, परन्तु एक गुण उसमें था। उसकी बुराई में भी सीधापन था। वह जो कुछ करता सीधे ढंग से। यदि सीधी अंगुली से घी न निकले तो वह कनस्तर के ढकने को तोड़ देता, परन्तु अंगुली को टेढ़ा करना उसके स्वभाव के विपरीत था। मालिक का काम इसलिये करना चाहिये कि उसका नमक खाते हैं, बस वह इतना ही जानता था। नमक को हलाल करने में पैसे की भी मदद की जा सकती है, यह बात उसके मस्तक में नहीं आ सकती थी। वह बा० रामनाथ के कथन से कुछ क्षुब्ध-सा हो गया। उसे प्रतीत हुआ जैसे बा० रामनाथ ने उसका तिरस्कार कर दिया। जिस काम को वह केवल नमक का बदला समझ-

कर कर रहा था उसके दाम लगाये जा रहे हैं, यह उसके हृदय को दुख पहुँचाने वाली बात थी। उसने कहा—

बाबू जी, हम ग़रीब हैं, इसलिये आप हमें जलील भी समझते हैं। क्या मैं रुपये के लिये मिल का साथ दे रहा हूँ। मैंने आपका जो नमक खाया है उसका पन निभा रहा हूँ। क्या सब काम लोभ से ही किये जाते हैं?

रामनाथ ने रंग पलटा। उसने कहा—भाई, तुम्हें तो मैं जानता हूँ। भला तुम्हारे बारे में मुझे ऐसा सन्देह भी कैसे हो सकता है। यह तो मैं दूसरों के लिये ही कह रहा था। अगर उन्हें धन का लालच हो तो हम वह भी देने को तैयार हैं। खजांची को हुक्म दे दिया गया है कि इस काम के लिये तुम्हें जितने रुपये की जरूरत हो, वह तुम्हें दे देगा।

उम्मेद ने उदास-सा होकर कहा—

मैं रुपये का क्या करूँगा? और दूसरों के बारे में भी मेरी तो राय है कि जो नौकर मुश्किल के समय में मालिक का साथ नहीं देता, उसकी खुशामद नहीं करनी चाहिये और न उसे रुपया ही देना चाहिये।

बा० रामनाथ ने उठते हुए कहा—अच्छा भाई, जैसा तुम समझो, वैसा ही करो। खजांची को तो हुक्म मिल ही चुका है। तुम जरूरत समझो, उससे ले लेना, न समझो न लेना। छैः बजे से हड़ताल की घोषणा की गई है। तुम्हें छैः बजे से कुछ पहिले ही दरवाजे पर पहुँच जाना चाहिये, ताकि आने वाले मजदूरों को कोई रोक न सके और आज दिन भर तुम कारखाने में मत आना। मजदूरों को समझाने-बुझाने में ही लगे रहना। अब तुम जा सकते हो। मैं दरवाजे पर तुम्हारी शाम को छैः बजे से कुछ पहिले इन्तजार करूँगा।

उम्मेद बोला—आप बेफिक्र रहें! मैं दिन भर में मजदूरों को अच्छी तरह समझा लूँगा और दरवाजे पर भी समय से पहिले हाजिर हो जाऊँगा।

(२)

उम्मेद दिन भर मजदूरों से मिलने-जुलने और समझाने में लगा रहा। कुछ मजदूर आसानी से मान गये, कुछ ने बहस की, और कइयों से उम्मेद की लड़ाई हो गई। उन्होंने उम्मेद को मिलवालों का पिट्ठू खुशामदी आदि उपाधि से विभूषित किया। एक ने दूसरे कहा—यार, अब के उम्मेद हेड-जाबर बनकर रहेगा। इसकी खुशकिस्मती से ही तो यह मौका हाथ लगा है। दूसरे ने कहा—भाई, ठीक है। खुशामदी गधों को कुछ-न-कुछ इनाम तो मिला ही करता है। हमने तो सुना है, मिलवालों ने उम्मेद को १०००) देने का भी वायदा किया है। तीसरे ने कहा—वायदा कैसा, वह मिल भी गये। खुद खजांची ने कई आदमियों से कहा है कि १०००) के नोट उम्मेद को उसने अपने हाथ से दिये हैं।

जितने मुँह उतनी बातें। पानी पर पड़े तेल की न्याईं तरह-तरह के शगूफे मजदूरों में फैल रहे थे।

उम्मेद ने छः बजे से पहिले ही दरवाजे पर पहुँचने का निश्चय किया था। उसने बशीर को भी अपने साथ चलने के लिये तैयार कर लिया था। दोनों में फैसला हो गया था कि उम्मेद की कोठरी पर लगभग साढ़े पांच बजे दोनों साथी मिलेंगे और वहां से मिलकर दोनों साथी दरवाजे पर जायेंगे।

लगभग पाँच बजे उम्मेद मजदूरों से निपटकर सुखदेई के घर की ओर चला। वह प्रायः नित्य ही रात को काम पर जाने से पहिले माँ-बेटी के समाचार पूछने जाया करता था। आज हड़ताल के झगड़े में शायद रात अधिक हो जाय और फुर्सत न मिले, इस विचार से वह पहिले ही उस कर्त्तव्य को निपटा देना चाहता था।

जब से सुखदेई की तबियत खराब हुई है, श्यामा भी काम पर नहीं जाती। मां के ही पास रहती है। उम्मेद के पहुँचने पर सुखदेई चारपाई से उठकर बैठ गई और श्यामा, जो रात के भोजन के लिये चावल

बीन रही थी, चावलों की थाली को नीचे रखकर खड़ी हो गई। अब उसमें वह पहले का-सा संकोच नहीं रहा। जब से भरूचा वाली घटना हुई है, श्यामा का हृदय उम्मेद की ओर पूरी तरह झुक गया है। प्रथम दर्शन के समय जो परस्पर मित्रता का भाव पैदा हुआ था, वह उपकार और आदर भाव के मेल से गहरा हो गया है। अब श्यामा उम्मेद को अपना तथा अपनी माता का वीररक्षक समझती है और खुलकर बातचीत करने लगी है।

उम्मेद प्रायः दिया बले पर उस अपने प्रेम कुटीर में जाता था परन्तु आज सांझ के समय ही आया देखकर मां बेटी को कुछ कौतूहल हुआ। उम्मेद के चेहरे पर कुछ जल्दी के भी चिन्ह थे। वह शीघ्र ही जाने के लिये आया था। उसने दिन भर बातचीत में लगे रहने के कारण सिर के बालों तक को समेटने का समय नहीं पाया था। जिस वेष से रात को मिल में काम किया था, वही अभी तक पहने हुए था। पाजामा और कुर्ता काले कलूटे हो रहे थे, कोट लापरवाही से कन्धे पर फैंका हुआ था। सुखदेई और श्यामा ने उसकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

उम्मेद ने आंखों का अभिप्राय समझकर उसका उत्तर देते हुए कहा—

माँ जी, आज कारखाने में बड़ा झगड़ा उठ खड़ा हुआ है। बहुत से मजदूर कुछ शरारती लोगों की बहकावे में आकर हड़ताल कर देना चाहते हैं। हड़ताल का डंका छैः बजे बजेगा। मैं हड़ताल को पागलपन समझता हूँ। इसलिये दरवाजे पर जाकर भूले हुए भाइयों को समझाने की कोशिश करूँगा। दरवाजे पर जा रहा था, मैंने सोचा तुम लोगों का हाल-चाल पूछता चलूँ।

सुखदेई ने घबराकर पूछा—

बेटा, हड़ताल में कोई लड़ाई-दंगा तो न हो जायगा? तू दरवाजे पर जायगा, तो वे लोग तेरे दुश्मन तो न हो जायेंगे?

उम्मेद ने कहा—

मांजी, होने को तो सब कुछ हो सकता है, पर मैं झगड़े-फिसाद से डरने वाला नहीं हूँ। मेरे दुश्मन हो जायेंगे तो क्या डर है ? मैं कोई बुरा काम करने तो नहीं जा रहा, आप फिक्र न करें।

श्यामा अब तक खड़ी चुपचाप सुन रही थी। उम्मेद की बात से यह जानकर कि मिल पर झगड़ा होने की सम्भावना है, उसके दिल में कुछ घबराहट भी पैदा हुई और कुछ सन्तोष भी हुआ। घबराहट तो इस कारण कि उसे अब उम्मेद को अपना समझने की आदत-सी पड़ती जा रही थी और सन्तोष इसलिये कि स्त्री जिस पुरुष को प्रेम करती है, उसके मुँह से वीरता की बात सुनकर प्रसन्न होती है। वह बोली—

हड़ताल तो मिल में होगी और आप अपनी जान क्यों जोखम में डालेंगे। क्यों न मिल वाले आप अपना इन्तजाम करें ? आप क्यों सिर उखल में डालते हैं।

सुखदेई ने भी लड़की का समर्थन किया, पर उम्मेद अपनी बात पर दृढ़ रहा, उसने उन दोनों को आश्वासन दिया, ईश्वर ने चाहा तो मेरा बाल भी बांका न होगा और यदि कोई कष्ट होगा भी तो जिसका नमक खाया है, उसके लिये वह कष्ट भी सह लूँगा। जब उम्मेद जाने लगा तो सुखदेई ने उसे हृदय से आसीस दी, और ईश्वर से उसके लिये मंगल-कामना की। श्यामा मुँह से तो कुछ न बोल सकी, परन्तु निर्निमेष नेत्रों से उसकी ओर तब तक देखती रही जब तक वह दरवाजे से बाहिर न निकल गया।

सुखदेई के घर का दरवाजा एक ऐसी गली में खुलता था, जो तंग और सुनसान थी। उसमें बहुत से घरों के पिछले भाग थे, जिनके द्वार दूसरी ओर थे। उधर आवाज़ ही बहुत कम थी।

उम्मेद पर सुखदेई की बातों का तो कोई असर न हुआ, परन्तु श्यामा की आँखें खाली न गईं। उन आँखों ने उसके हृदय में एक हलकी-

सी विक्षोभ तथा उदासी की रेखा उत्पन्न कर दी थी। वह दरवाजे से निकल कर अन्यमनस्क-सा जा रहा था। सुखदेई के दरवाजे से कोई पन्द्रह कदम दूरी पर जो मोड़ था, उसके पास पहुँचते ही पीछे से उसके सिर पर लाठी का एक भरपूर हाथ पड़ा। अकस्मात् चोट खाकर उम्मेद एकदम चकरा गया। उसके सिर पर गहरी चोट आई, पैर लड़खड़ा गये, और यदि दीवार इतनी पास न होती और वह उससे सहारा लेकर सँभल न जाता, तो धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ता। परन्तु दीवार पास ही थी, और उसे ज़रा सँभलने का मौका मिल गया। हाथ से सिर की चोट को थामकर उसने उन लठैतों की ओर दृष्टि डाली, तो देखा कि वे संख्या में पाँच हैं। सब मिल के उसके पहचाने हुए मज़दूर हैं, उनके हाथों में लाठियाँ हैं और आँखों में खून। उसने ज़ोर से चिल्लाकर कहा 'हैं, तुम' बस, आगे कुछ न बोल सका, क्योंकि उसी समय एक और लाठी उसके सिर पर पड़ी। वह चक्कर खाकर जमीन पर गिर पड़ा। उसका सिर फट गया था और लहू की धारा बह रही थी। गिर जाने पर भी आततायियों ने दो-तीन लाठी के हाथ उसकी कमर और पीठ पर साफ किये। जब निश्चय हो गया कि अब उसमें प्राण नहीं हैं तो कपड़ों की तलाशी ली, परन्तु उनके आश्चर्य की सीमा न रही, क्योंकि जहाँ उन्हें एक हजार रुपए के नोटों की आशा थी, वहाँ कुछ भी न मिला।

एक ने कहा, मरदूद घर पर रख आया है। दूसरे ने कहा नहीं, इस बुढ़िया के पास धर आया होगा। तीसरे ने, जो उनका मुखिया था, कहा कि बस अब यहाँ से भागना चाहिए, क्योंकि दिन का समय है। बाकी काम रात को किया जायगा।

इधर उम्मेद बेहोशी की हालत में गली के फ़र्श पर पड़ा खून बहा रहा था और उधर मिल के द्वार के ऊपर खिड़की में खड़ा हुआ रामनाथ उसे समय पर न पहुँचा देख गाली दे रहा था।

(३)

हड़ताल का गुलगपाड़ा रात उतरने से पहले ही समाप्त हो गया था। उस समय कोई दस बजे होंगे। हम उन पुराने दोनों षड्यन्त्रकारियों को मि० भरूचा के मकान पर गुप्त मन्त्रणा में व्यस्त देखते हैं। भरूचा और नसीरअली दिनभर की घटनाओं का लेखा तैयार कर रहे थे। दोनों में इस प्रकार बातें हो रही थीं—

भरूचा—तुम्हारे भेजे हुए उन पाँचों आदमियों ने क्या किया ?

नसीरअली—वह लोग दोपहर से ही उस मरदूद की तलाश में थे। ४ बजे के लगभग वह क्वार्टरों से निकल कर सुखदेई बुढ़िया के घर गया था। वहाँ उसे दस-पन्द्रह मिनिट लगे होंगे। जब वह वहाँ से निकल कर गली में उस मोड़ पर पहुँचा, जहाँ से रास्ता सड़क की ओर जाता है तो उन लोगों ने चारों ओर से घेरकर उसे लाठियों से घायल कर दिया। वह वहीं गली में गिर गया, एक कदम भी आगे न जा सका। जीता रहा या मर गया, इसका पता नहीं।

खूब हुआ। बदमाश को ऐसी ही सजा मिलनी चाहिये थी। हाँ, फिर क्या हुआ ?

तब उन लोगों ने उसके कपड़ों की तलाशी ली, पर कुछ भी न मिला। उम्मीद थी कि १०००) के नोट उसके पास मिल जायेंगे, पर मालूम होता है वह कहीं रख आया।

एक हजार रुपये के नोट कैसे ?

वही जो उसे बा० रामनाथ के हुक्म से तुमने खज़ाने से दिये थे।

भरूचा जोर से हँसकर बोला—वाह तुम भी खूब समझे। यार, मैं तो तुम्हें बहुत चालाक समझता था, पर तुम तो निरे बुद्धू हो। वह रुपया मैं उम्मेद को कब देने वाला था, वह पागल तो रुपया लेने में अपनी हतक समझता था, मुझे यह मालूम ही था कि शाम तक उसका खात्मा हो जायगा। तब मैंने वह रुपया निकाल कर अपने पास रख लिया और

रोकड़ में उसके नाम दर्ज कर दिया। सोच लिया अगर वह बदमाश बच गया, तो दूसरी बात है, अन्यथा हम दोनों उस रक़म को बाँट लेंगे।

ताली बजा कर हाजी बोला—वाह भाई, कमाल कर दिया। तुम सचमुच मिल के खजाँची बनने के लायक आदमी हो। तभी तो सेक्रेटरी साहब पर तुम्हारी धाक है।

अच्छा तो अब आगे क्या करना चाहिये।

मैंने एक आदमी यह देखने के लिये लगा दिया है कि उम्मेद का अब क्या होता है? अगर वह मर गया तो किस्सा कटा, अगर नहीं मरा तो सोचना पड़ेगा कि अब उसे और उसके दोस्त बशीर को मिल से अलग कैसे कराया जाय। अब चोट करने का वक्त आ गया है। चोट करनी चाहिये और ऐसी करनी चाहिये कि बच्चा सिर न उठा सके।

इसके बाद बहुत देर तक दोनों आदमी किंकर्त्तव्यता पर विचार करते रहे। रात आधी से अधिक गुज़र चुकी थी, तब दोनों मित्र सेक्रटरी साहब के बँगले की तरफ रवाना हुए।

सेक्रेटरी साहब भी अभी सोये नहीं थे। अपने बँगले पर बा० रामनाथ से हड़ताल के सम्बन्ध में बातचीत कर रहे थे। बाब रामनाथ शाम की घटनाओं का वर्णन कर रहे थे। जब चपरासी ने खबर दी कि खजांची साहब और हाजी साहब हाजिर हुए हैं, तो उन्हें उत्सुकता से अन्दर बुलाया गया, मानो उनकी प्रतीक्षा ही हो रही हो। उनके पहुँचने पर रामनाथ ने सेक्रेटरी साहब से कहा—

लीजिये, यह दोनों भी आपहुँचे। अब पता चल जायगा कि उम्मेदसिंह और काकाराम का क्या हुआ? दोनों ने हड़ताल को रोकने की प्रतिज्ञा की थी, पर उम्मेद शाम से लापता है और काकाराम का तो सुबह से ही कुछ पता नहीं।

सेक्रेटरी साहब ने प्रश्नसूचक दृष्टि से भरूचा की ओर देखा।

भरूचा ने कहा कि—

मुझ से तो वह दोनों आप के हुक्म के मुताबिक रुपया ले गये थे। उम्मेद को एक हज़ार और काकाराम को पाँच सौ रुपए के नोट दे दिये गये थे। जहाँ तक खबर लगी है, प्रतीत होता है कि काकाराम तो ५००) लेकर आज सुबह की गाड़ी से अलीगढ़ चला गया। उम्मेद की बाबत जो खबर चली है, वह हाजी जी आपको सुनायेंगे।

हाजी ने एक बार अपनी मजहबी दाढ़ी पर हाथ फेरा, फिर दिन में पाँच बार की नमाज से पके हुए माथे को मानो खुदा के सामने झुका कर यों कहना प्रारम्भ किया।

हुज़ूर, खजांची साहिब के हुक्म के मुताबिक मैंने अपना सी० आई० डी० चारों ओर फैला दिया था। हरएक आदमी के पीछे एक प्यादा लगा दिया था। सुबह ही खबर चल गई थी कि काकाराम अलीगढ़ की गाड़ी में सवार हो गया है। उसका दफा होना ही ठीक था, समझा कि बला टल गई। उम्मेद दोपहर तक मजदूरों में घूम-घूम कर हड़ताल के खिलाफ बातें करता रहा, पर ज्यों ही उम्मेद ने खजांची साहब से एक हज़ार रुपया लिया कि वह अपने दोस्त बशीर के पास, जो कि हड़तालियों का सरदार बना हुआ था, चला गया। थोड़ी देर पीछे दोनों दोस्त वहाँ से चल दिये। मेरे आदमी उनके पीछे लगे रहे। उन्होंने खबर दी है कि वह दोनों सीधे एक होटल में गये, और वहाँ बैठकर खाना खाया और शराब पी। वहीं से वह दोनों शराब में मस्त मिल की ओर चल दिये। रास्ते में एक बुढ़िया और उसकी लड़की रहती है। वे दोनों मिल में काम करती हैं। उम्मेद और बशीर उसके घर में चले गये। मेरे आदमी गली में उनका इन्तजार करते रहे। थोड़ी देर में दोनों बाहर निकले तो देखा कि दोनों में झगड़ा हो रहा है। बशीर उम्मेद से कह रहा था कि अगर तू अकेला ही सब रुपया हड़प कर भाग जायगा तो मैं तेरी पोल खोल दूंगा और मिलवालों से कहकर पकड़वा दूंगा। उम्मेद रुपया देने से साफ इन्कार कर रहा था

और कह रहा था कि मैं रुपया लेकर भागता हूँ, देखूँ तू मेरा क्या बिगाड़ लेगा। यह कहकर उम्मेद वहाँ से चलने लगा तो उसे बशीर ने पकड़ लिया। इतने में एक मकान से बशीर के चार-पाँच आदमी निकल आये, जो वहाँ पहले से छिपे हुए थे। उनके हाथों में लाठियां थीं, उन्होंने उम्मेद को लाठियों से मार-मार कर बेहोश कर दिया। बशीर ने उसकी पाकेट से सब नोट निकाल लिए और अपने साथियों के साथ भाग निकला। मेरे आदमी गली के एक कोने में छिपे हुए सब देखते रहे और आकर मुझे खबर दे दी। अब तक की खबर आपको सुना दी; आगे जो खबर आयेगी, हुजूर की खिदमत में पेश की जायगी।

यह किस्सा सुनकर सेक्रेटरी और बा० रामनाथ को बड़ा गुस्सा आया। उम्मेद से उन्हें ऐसे धोखे और बेईमानी की उम्मीद न थी। बशीर पर तो वह पहले से ही कुपित थे, क्योंकि नसीरअली ने उसका नाम हड़ताली मजदूरों की सूची में लिखा छोड़ा था। सेक्रेटरी ने कहा कि खैर देखा जायगा। बदमाशों को अपने किये की सजा दी जायगी। कल सुबह मुझे उम्मेद और बशीर दोनों की खबर देना। और देखो, बाबू रामनाथ तुम यह ख्याल रखना कि बशीर पर अभी से कड़ी नजर रहे, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि कल प्रातः उसे गिरफ्तार करवा दिया जाय और उम्मेद अगर मर गया है, तब तो कोई बात नहीं, परन्तु यदि वह जिन्दा बच गया तो उसे ऐसा मज़ा चखाना पड़ेगा जिसे वह जन्म भर न भूले। और नसीरअली, तुम उम्मेद के सामाचार लेकर सुबह आठ बजे मेरे पास आना।

थोड़ी देर तक सलाह मशबिरा होने के पीछे यह कांन्फ्रेन्स समाप्त हो गई।

(४)

हाजी के लठैतों ने उम्मेद को गली में ही पड़ा छोड़ दिया था। कुछ देर तक वह बेहोशी की हालत में पड़ा रहा। जब बशीर को उम्मेद की कोठरी पर इन्तजार करते बहुत देर हो गई और उम्मेद न दिखाई दिया

तो उसने दोस्त को स्वयं तलाश करने का निश्चय किया। उसे मालूम था कि उम्मेद सुखदेई के यहाँ जाया करता है। उसने अनुमान लगाया कि वह शायद अब भी उधर ही गया होगा। उसने गली में पहुँचकर जो रोमांचकारी दृश्य देखा, उसने उसे स्तब्ध-सा कर दिया। लहू के फर्श पर उसका मित्र बेहोश या मुर्दा पड़ा हुआ था। सिर के घाव से खून टपक रहा था और हाथ और घुटने पर भी सख्त चोटें आईं थीं। एक बार तो उसके मुँह से 'हाय, यह क्या हुआ' का शब्द निकला और हाथ-पाँव फूल से गये, परन्तु वह शीघ्र ही सम्भल गया और बैठकर उम्मेद की नाड़ी टटोलने लगा। पहले तो ऐसा मालूम हुआ कि जैसे प्राण-पखेरू उड़ चुके हों, परन्तु कुछ देर के पीछे नब्ज़ की हल्की-सी गति प्रतीत होने लगी। बशीर के हृदय में आशा का संचार हुआ। अब उसे यह चिन्ता हुई कि उम्मेद को उठाकर कहाँ ले जाये। समीप से समीप स्थान, जहाँ उम्मेद को ले जाया जा सके, सुखदेई का घर था। बशीर ने उम्मेद को वहीं ले जाना उचित समझा। बड़ी मुश्किल से उसने उम्मेद के शरीर को कन्धे और दोनों हाथों से सम्भाला और सुखदेई के दरवाजे पर पहुँचकर किवाड़ खोलने के लिए आवाज़ दी।

उम्मेद को लहू में लथपथ और बेहोश देखकर सुखदेई और श्यामा की जो दशा हुई, उसका अनुमान लगाया जा सकता है। पहले तो दोनों उसे देखकर रोने लगीं, परन्तु जब बशीर ने उन्हें दिलासा देते हुए कहा कि घबराने की कोई बात नहीं। नब्ज अभी चल रही है और यदि थोड़ा-सा यत्न किया जाय तो होश आ जायगी, तो दोनों ने सम्भल कर काम शुरू कर दिया। एक चारपाई पर उम्मेद को डाल दिया गया। सुखदेई पंखा झलने लगी और श्यामा बशीर के कथनानुसार गिलास में पानी ले आई।

थोड़ी देर के प्रयत्न से उम्मेद का लहू बहना रुक गया। बशीर ने उस पर कपड़े का पैंड रखकर जोर से पट्टी बाँध दी। मुँह में कुछ पानी डाला गया और पंखे की हल्की-हल्की हवा लगी तो उम्मेद ने धीरे-धीरे

आँखें खोल दीं। श्यामा बेचारी, जो उम्मेद की दशा को देखकर बिल-कुल मुर्दा-सी हो रही थी, अब उसे होश में आया देखकर जीवित-सी हो गई।

लगभग आधी रात तक बशीर अपने मित्र की परिचर्या में लगा रहा। चोट बहुत गहरी आई थी। उम्मेद का लौहमय शरीर ही था, जो उस आघात को सह गया। साधारण शरीर तो इतनी चोट से निर्जीव हो जाता। जब वह कुछ सावधान हो गया, तब बशीर यह कहकर चला गया कि सुबह मिल के डाक्टर को लेकर आऊँगा। रात भर तुम इसकी देखभाल करना। प्यास लगे तो पानी दे देना और सचेत हो जाय तो गर्म दूध पिला देना।

रात भर दोनों ही जागती रहीं। जब दर्द अधिक उठता और बेचैनी बढ़ती तो उम्मेद कराह उठता था। जब ज़रा चैन पड़ जाती, तब आंख लग जाती थी। इसीप्रकार दिन और रात, होश और बेहोशी के परिवर्तनों में दोलायमान होते हुए उम्मेद की वह रात कटी। यन्त्रणा असह्य थी और कष्ट बहुत था, पर उम्मेद उसे धैर्य और साहस से सहन करने का यत्न कर रहा था। श्यामा ने अपनी शक्तिभर उसकी सेवा करने में कोई कसर न छोड़ी, परन्तु उसके हाथ में दवा नहीं थी, केवल दुआ थी, वही रात भर करती रही।

(५)

सुबह उठते ही बशीर के मन में पहला विचार यह आया कि मिल के डाक्टर के पास जाकर उम्मेद का हाल सुनाये और उसे साथ ले जाकर इलाज शुरू करा दे। वह उठा और मुँह-हाथ धोकर कपड़े पहनने लगा। अभी उसने गले में कुर्ता पहना ही था कि दरवाजे पर किसी के पुकारने की आवाज़ सुनाई दी और साथ ही लकड़ी से दरवाज़े पर चोटें पड़ने लगीं। बशीर घबराया-सा होकर दरवाज़े की ओर जा रहा था तो उसके बूढ़े पिता ने टोककर कहा कि बेटा, तू कपड़ा पहन ले। मैं दरवाज़े पर जाकर पूछ आता हूँ कि कौन है। यह कौन पागल है कि अलस सुबह ही

दरवाजे पर हल्ला मचा रखा है। मालूम होता है कि तेरा कोई यार-दोस्त है।

बशीर ने भी यार-दोस्तों को दबी ज़बान से गालियां दीं और अच्छा कहकर कपड़े पहनने लगा। उसके बाप ने जाकर दरवाज़ा खोला तो स्तब्ध-सा रह गया। शरीर को काटो तो रक्त नहीं। उसने दरवाज़े पर ६-७ सिपाहियों के साथ खड़े हुए एक थानेदार को देखा, जो बशीर की गिरफ्तारी का वारन्ट लेकर आया था। बूढ़े के पूछने पर थानेदार ने कहा कि बशीर के खिलाफ रिपोर्ट हुई है कि उसने और उसके गिरोह ने उम्मेद नाम के मज़दूर को इतना मारा है कि वह मरने के क़रीब है। इस जुर्म में बशीर की गिरफ्तारी का वारन्ट है। उसे जल्दी हाजिर करो।

बशीर का बाप जानता था कि बशीर और उम्मेद आपस में गहरे दोस्त हैं। उसे थानेदार की बात बहुत ही झूठी मालूम हुई, इसलिये पुलिस की शान को थोड़ी देर के लिए भूल कर भी उसके मुँह से इतना तो निकल ही गया कि दारोग़ा साहब, आप देख लीजिए, नाम में कोई ग़लती तो नहीं, क्योंकि उम्मेद और बशीर तो गहरे दोस्त हैं।

थानेदार को यह बात बहुत अपमानजनक मालूम हुई। उसने आंखें लाल-लाल करके बूढ़े की ओर देखते हुए कहा—अरे गधे, क्या हम भूल कर सकते हैं ? हम जानते हैं कि वारन्ट बशीर का ही है और हमें यह भी मालूम है कि बशीर इसी घर में रहता है। अब सीधी तरह बशीर को यहाँ भेज दे, नहीं तो हम अन्दर घुस कर तलाशी लेंगे और बशीर के साथ तुझे भी गिरफ्तार कर लेंगे।

उधर बशीर के कानों तक दारोग़ा के चिल्लाने की आवाज़ पहुँच गई और वह दरवाजे पर आ गया था। सिपाहियों के साथ एक मिल का आदमी भी था, उसने बशीर को देखते ही दारोग़ा से कह दिया कि दारोग़ा साहिब, यह मुलजिम है, इसे फौरन गिरफ्तार कर लीजिए।

बशीर अभी कुछ पूछने या कहने भी न पाया था कि सिपाहियों ने

उसके हाथों में हथकड़ियां डाल दीं और उसे लेकर थाने के लिये रवाना हो गए।

जब पुलिस की एक टुकड़ी बशीर को गिरफ़्तार करने के लिये रवाना हुई, उसी समय एक हैडकांस्टेबिल दो सिपाहियों को साथ लेकर उम्मेद का बयान लेने के लिए सुखदेई के घर की ओर रवाना हुआ। वहां जाकर उसने उम्मेद को आधे होश की दशा में पाया। पुलिस ने दरवाज़ा खटखटाया तब पहले तो सुखदेई और श्यामा ने समझा कि बशीर डाक्टर को लेकर आ गया, पर जब पुलिस को देखा तो बहुत घबरा गईं। हैड-कांस्टेबिल ने उन दोनों के बयान कलमबन्द करने की कोशिश की। कब मारा? कैसे मारा? आखिर क्यों कर? वह बेचारी कुछ भी जवाब न दे सकी। उन्होंने केवल इतना बतलाया कि घायल उम्मेद को लेकर हमारे यहाँ उसका दोस्त बशीर आया था और सुबह फिर आने को कह गया था। इस पर हैडकान्स्टेबिल ने शैतानी मुस्कराहट के साथ जवाब दिया, वह शैतान यहाँ क्यों न आयेगा? दोस्त के सारे माल को हड़पने का मनसूबा बाँधकर निकला है। पर साला क़ानून से बच कर कहाँ जायेगा।

मां-बेटी हैडकान्स्टेबिल की मुस्कराहट और व्यंग का कुछ भी अभिप्राय न समझ सकीं, तो भी वह इतना जान गईं कि बशीर पर कोई आफ़त आने वाली है।

उम्मेद की दशा ऐसी नहीं थी कि कोई बयान लिया जाय, इस कारण उसे एक तांगे में डालकर सिपाही लोग सिविल हस्पताल में ले गये।

अब पुलिस मुकदमा तैयार करने में लगी। यह तो पहिले ही तय कर लिया गया कि उम्मेद पर घातक आक्रमण करने और उसके पास से एक हज़ार का नोट छीनने का अपराधी बशीर है। ऐसा तय करने के दो कारण थे। एक तो अपराधी तलाश करने की अपेक्षा तलाश किया-कराया अपराधी पा लेना बहुत ही आसान और लाभदायक काम है।

दूसरे, मिल वालों की यही रिपोर्ट थी और यही आदेश था। मिल की ओर से हाजी नसीरअली साहब खासतौर से इस मुक़दमे के काम में पुलिस की मदद के लिए नियुक्त हुए थे। उन्हीं ने पुलिस के दारोगा को हर तरह से तसल्ली करा दी थी कि बशीर को मुजरिम साबित कर देना कुछ भी मुश्किल नहीं है और अगर बशीर को भारी सजा हो गई तो मिल मालिकों को बड़ा सन्तोष होगा।

पुलिस जब मुक़दमा बनाने लगती है, तब निम्नलिखित चीज़ों की तलाशी होती है। (१) अपराध का कारण (२) सरकारी गवाह (३) मौके के गवाह। इन तीनों चीज़ों के पैदा हो जाने पर फिर क़िस्सा काफी प्रामाणित हो जाता है। बशीर के खिलाफ़ इन तीनों चीजों के पैदा होने में अधिक दिक्कत न हुई। १०००) का बँटवारा इसके लिए काफी कारण था। सरकारी गवाह मिलना भी कुछ कठिन नहीं था। हाजी नसीरअली के जिन आदमियों ने उम्मेद पर आक्रमण किया था, उनमें से एक आदमी को गिरफ़्तार कर लिया गया। उसने माफी मिलने के वायदे पर बयान दे दिया कि बशीर हमारी पार्टी का लीडर था, उसके कहने से हम प्रायः डाके डालते रहते थे। यह आक्रमण भी उसी की प्रेरणा से हुआ था। मण्डली के और आदमियों के भी नाम लिखाये गए, परन्तु क्योंकि वह कल्पना की उपज थी, इसलिये वह फरार कर दिए गये। तीसरी जरूरत थी मौके के गवाहों की। मौके की गवाही के लिए हाजी साहब खुद तशरीफ लाये। आपने बयान दिया कि अचानक मैं उधर से गुज़र रहा था कि मैंने कई आदमियों को लाठियाँ लिए हुए भागते देखा। समय सायंकाल पाँच बजे के लगभग था। उन सब के कपड़ों पर खून के छींटे थे, पर क्योंकि मुझे हड़ताल की वजह से मिल में पहुँचना था, इसलिए आगे जाकर तहकीकात न कर सका। इसप्रकार अपराध का कारण, सरकारी गवाह और मौके के गवाह पैदा कर लिए गये और बशीर पर पुलिस ने धूमधाम से मुक़दमा चला दिया।

मुकदमे में दो ही दिक्कतें थीं। एक तो यह कि उम्मेद ने स्पष्ट

शब्दों में बयान दे दिया था कि उस पर आक्रमण करने वालों में बशीर नहीं था। पर उससे क्या होता था। पुलिस ने निश्चय कर लिया था कि लाठी की पहली ही चोट में उम्मेद के होश गुम हो गये थे; इस कारण उसके लिए आक्रमणकारियों को पहिचानना कठिन था। दूसरी दिक्कत यह थी कि सुखदेई और श्यामा के बयानों से बशीर की सफाई होती थी, परन्तु पुलिस ने सिद्ध करने का यत्न किया कि सम्भव है, बशीर की साजिश में औरतें भी शामिल हों और उन्होंने भी १०००) रुपए में हिस्सा लिया हो। इस कारण मुकदमे का रास्ता बिलकुल साफ हो गया और पुलिस ने बशीर और उसके साथी का बाकायदा चालान कर दिया।

उम्मेद को पुलिस के सिपाहियों ने सरकारी अस्पताल के बड़े बार्ड में ले जाकर डाल दिया। डाक्टरों ने उसके घाव की परीक्षा करके पुलिस के लिए रिपोर्ट लिख दी और फिर उसे उन मरीजों की लम्बी श्रेणी में डाल दिया गया, जो प्रायः अपने शरीर की ढिठाई के कारण ही ऐसे चिकित्सालयों से जीते निकल आते हैं। उस श्रेणी के भाग्य अर्दलियों और कम्पोण्डरों की कृपा पर आश्रित रहते हैं। डाक्टर तो एक बार आया और देखकर चला गया। अर्दली केवल भेंट पर रीझते हैं। जो भेंट न दे सके, उसे कोई नहीं पूछता। उम्मेद स्वयं ही लाचारी की हालत में था और उसकी ख़बर लेने वाला कोई था नहीं। इस कारण वह बेचारा कई मास तक अनाथों की तरह जीवन और मृत्यु के सीमाप्रान्त में भटकता रहा।

कई सप्ताहों की उधेड़बुन के पीछे बशीर पर अभियोग लगाया गया और फिर कई महीनों की पेशियों के पीछे उसे सज़ा दे दी गई। बशीर के बाप ने बहुत हाथ-पाँव मारे, परन्तु ग़रीब आदमी, अंग्रेजी अदालत और बढ़िया बकील के खर्चों को कहाँ तक सह सकता था। जैसे कलकत्ते में काली के मन्दिर की हरेक दहलीज पर माथा नवाना और पैसा चढ़ाना पड़ता है, उसी प्रकार अदालत के मन्दिर की भी दशा है। पैसा

खर्चों तो बात कर सकते हो। बेचारे के पास धरा ही क्या था ? दूसरी ओर मिल और सरकार की पूरी शक्ति थी। बशीर कानून की दृष्टि में अपराधी करार दे दिया गया और हाजी नसीरअली का वह आदमी, जो सरकारी गवाह बना था, माफी देकर छोड़ दिया गया। बशीर को सात साल की सख्त कैद का दण्ड दिया गया।

(६)

बशीर को सज़ा मिलने के कुछ ही दिन पहले उम्मेद अस्पताल से बाहर हुआ। सिर की चोटें बहुत गहरी थीं, उनके भरने में समय लगा। इसी बीच में बुखार और कमज़ोरी ने उसे इस योग्य न छोड़ा कि चल फिर सके। सरकारी अस्पताल में ग़रीबों के लिए चारपाई तो मिल सकती है, परन्तु आराम नहीं मिल सकता। आराम तो उसी को मिलता है जो पत्र-पुष्प चढ़ा सके। उम्मेद बिल्कुल अनाथ था। मिल वालों को रामनाथ और भरूचा ने झूठा विश्वास दिलाया था कि १०००) रुपए उम्मेद को दे दिया गया है और उम्मेद उस रक़म को लेकर भाग जाने की तैयारी कर रहा था, और हड़ताल को बन्द कराने का कोई यत्न नहीं करना चाहता था। उन्होंने उम्मेद का नाम अपने रजिस्टर से खारिज कर दिया। सेक्रेटरी साहब ने तो यहाँ तक कह दिया कि अच्छा हुआ बदमाश को स्वयं ही करनी का फल मिल गया। नहीं तो उसे भी सज़ा दिलाने के लिये बहुत-सा खर्च करना पड़ता।

जिस दिन उम्मेद अस्पताल में पहुँच गया और बशीर हवालात में, उस दिन भरूचा और नसीरअली ने मिलकर खूब रंगरलियां मनाईं। दोनों ने एक-दूसरे की पीठ ठोकी और बधाई दी कि दोनों ने अपने-अपने बदले ले लिये।

उम्मेद अस्पताल से चल कर सीधा सब्जीमण्डी पहुँचा और वहाँ सुखदेई के दरवाजे पर जाकर आवाज़ दी। उसने अस्पताल में पड़े-पड़े न नौकरी की बात सोची थी और न मिल की। उसने तो रात और दिन, होश और बेहोशी में दो व्यक्तियों का चिन्तन किया था। कभी

अपनी मरी हुई माता को याद करता था तो कभी श्यामा को। श्यामा का चित्र उसके हृदय पर अंकित हो गया था। वह उसका दिन का विचार और रात का स्वप्न बन गया था। उसकी बड़ी-बड़ी और भोली-भोली आँखें उम्मेद की कल्पना के सामने निरन्तर चमकती रहतीं और यह चिन्ता उसे रात-दिन बनी रहती थी कि उसका क्या हो रहा होगा। बीमारी के दिनों में उसे कुछ दिनों तक तो यह आशा बनी रही कि श्यामा या उसकी माँ अस्पताल आकर मुझ से मिलेंगी। जब और बीमारों के मिलने वाले लोग आते तो उम्मेद आँखें फाड़-फाड़कर दरवाजे की ओर देखता। कभी कोई बुढ़िया अन्दर घुसती तो समझता कि सुखदेई आई और किसी युवती को आते देखता तो श्यामा का भ्रम करता। देखते-देखते आँखें थक गईं, पर दोनों में से कोई न आई। तब वह निराश हो गया। कभी दुखी होता और कभी क्रोध करता। कभी उन लोगों की आपत्तियों का ध्यान करके चिन्ता के सागर में गोते खाने लगता तो कभी यह सोचकर खिन्न होता कि मनुष्य का प्रेम और प्रेम की आशा—सब झूठे और अस्थिर हैं। कोई किसी का नहीं। मैंने श्यामा से प्रेम किया, यह मेरी भूल थी, क्योंकि उसने तो मुझसे प्रेम किया ही नहीं। यदि प्रेम करती तो क्या मुझसे एक बार भी मिलने न आती?

अस्पताल छोड़ने पर उसका पहला मन्सूबा यही था कि सुखदेई और श्यामा से मिले और अपने मन की बातें कहकर हल्का हो। साँझ का समय था, जब उम्मेद उस कोठरी के दरवाजे पर पहुँचा, जिसमें वह अपने दिल को छोड़ गया था। उसन कई बार द्वार खटखटाया। पहले तो अन्दर से कोई जवाब न मिला। कई बार पुकारने और जोर-जोर से दरवाजे के हिलाने पर एक बूढ़े आदमी ने आकर किवाड़ की सांकल खोली। उम्मेद उस ७० साल के बूढ़े को देखकर कुछ ठिठक-सा गया। बूढ़े को भी एक मैले-कुचैले नवागन्तुक को देखकर आश्चर्य-सा हुआ। उस समय उम्मेद की हालत अजीब हो रही थी। बीमारी ने उसे

बहुत कमजोर कर दिया था। सिर और दाढ़ी-मूंछ के बाल काफी बढ़ गये थे। कपड़े फटकर चिथड़े हो गये थे। पैरों में जो जूता पहिना हुआ था, उसमें से पांव के तले जमीन को छू रहे थे। ऐसी भयानक मूर्ति को देखकर बूढ़े ने पूछा—क्या है ? उम्मेद ने उत्तर दिया—इस कोठरी में एक बुढ़िया कपनी लड़की के साथ रहती थी, वह कहां है ? बूढ़ा बोला—यहाँ कोई बुढ़िया या लड़की नहीं है। यह कोठरी तो मैंने किराये पर ले रखी है।

पर पहले जो इसमें माँ-बेटी रहा करती थीं, वह कहाँ गईं ?

बूढ़े ने जरा तेज होकर कहा—कह तो दिया कि यहाँ कोई बुढ़िया-सुढ़िया नहीं है। पागल कहीं का। तीन महीने से तो यहाँ मैं रहता हूँ। मैंने न यहाँ बुढ़िया का निशान देखा और न उसकी बेटी का।

उम्मेद के सिर पर मानो वज्र गिरा। अब कहाँ जाय और किस से पूछे। उस कोठरी से कुछ दूर एक घोसी का मकान था। उनके यहाँ सुखदेई का मेलजोल था। उम्मेद वहाँ गया और घोसी की औरत से सुखदेई का हालचाल पूछा। घोसी की औरत उम्मेद की शक्ल को देखकर पहले तो बहुत घबराई, क्योंकि जब से उम्मेद वाला कांड हुआ था, तब से उस गली के लोग डाकुओं से बहुत डरते थे, पर जब उम्मेद ने अपना नाम बतलाया, तो घासी की औरत ने उसे ध्यान से बेखकर पहचान लिया कि ऐसा एक आदमी सुखदेई के पास आया करता था। तब उसने उम्मेद को बतलाया कि जिस शाम मारपीट वाली घटना हुई थी, उससे दूसरी ही शाम को मिल के कुछ आदमी आये थे और यह कहकर कि मिल के मालिकों ने तुम्हारे लिए मिल के क्वार्टरों में रहने का इन्तजाम करवा दिया है और कुछ गुज़ारा भी लगा दिया है, सुखदेई और श्यामा को यहाँ से ले गये थे। इसके पीछे उनका कोई पता नहीं चला।

उम्मेद पर मानो वज्र गिरा।

उम्मेद जानता था कि मिल वाले ऐसी निष्काम भावना से ग़रीबों

की मदद नहीं किया करते। इस चाल में उसे भरूचा का हाथ दिखाई दिया। कुछ देर के लिए तो वह किंकर्त्तव्य-विमूढ़-सा हो गया। सोचने लगा कि अब क्या किया जाय, परन्तु कुछ सूझता नहीं था। न जाने कितनी देर तक वहीं गली में दीवार से सहारा लगाये खड़ा रहा।

जब तबीयत जरा सम्भली तो विचारने लगा कि अब कहाँ जाऊँ और क्या करूँ? न उसके रहने को कोई घर था और न सहारा देने को कोई मित्र। जानवर भी अपने सिर छिपाने के लिए घोंसला बना लेते हैं परन्तु इतने वर्षों तक कारखाने में जाबरी का काम करने पर भी उस मनुष्य देहधारी के पास कुछ नहीं था। जैसा खालीहाथ वह मिल में नौकर हुआ था, वैसा ही खाली हाथ बल्कि उससे भी बुरी हालत में वह उस सुनसान और तंग गली में खड़ा था। शरीर क्षीण हो गया था, दिल टूट चुका था, खाने का कोई ठिकाना नहीं था और यह भी मालूम नहीं था कि रात कहां बितानी होगी। परन्तु इन सब बातों की उसे सुध भी नहीं थी। उसे तो एक ही चिन्ता सता रही थी कि श्यामा कहाँ गई? उसे कौन ले गया? और अब वह कहाँ है?

स्वभावतः उसके मन में यह विचार उठा कि मजदूरों के क्वार्टरों में चलकर ख़बर लगाने की कोशिश की जाय और वह सीधा उसी ओर चल दिया, जिधर वह रहा करता था। क्वार्टरों में पहुँचने पर उसने अनुभव किया कि उसमें बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया है, क्योंकि उसके साथी और पड़ोसी तक उसे नहीं पहचानते थे। शाम के अन्धेरे ने उसके रूप को और भी भूँडा और भयानक बना दिया था, उस दुबले-पतले, मैले लम्बी-लम्बी दाढ़ी-मूँछ वाले व्यक्ति में जवान और चुस्त उम्मेद पहिचानना आसान नहीं था। जब उसने स्वयं अपना परिचय दिया, तब मजदूरों ने उसे पहचाना, परन्तु उसने देखा कि वह लोग पहिचान लेने पर उससे और भी दूर हटने की चेष्टा करने लगे। कारण यह था कि उम्मेद के अस्पताल पहुँच जाने पर भरूचा और हाजी के आदमियों ने मजदूरों में यह ख़बर फैला दी कि उम्मेद को काम करने वाले मजदूरों

में इनाम के तौर पर बाँटने के लिए १०००) दिये गए थे, जिन्हें वह और बशीर मिल कर हड़पना चाहते थे। बँटवारे में लड़ाई हो गई, जिस में उम्मेद के चोट आ गई। बशीर के मुकदमे में भी पुलिस ने इसीतरह की शहादतें पेश की थीं। इस कारण मजदूर उम्मेद और बशीर दोनों के ही घोर शत्रु हो गए थे। उम्मेद को देखकर उन्हें घृणा हो रही थी। उसने देखा कि उसका परिचय पाकर मजदूर उससे दूर-दूर हट रहे हैं और दो-दो चार-चार मिलकर कानाफूसी कर रहे हैं। वह जिसके पास जाता, वही टालकर दूसरी ओर को चल देता।

निराश और खिन्न होकर वह मजदूरों के क्वार्टरों से बाहर हुआ। उसे ध्यान आया कि बशीर का घर कहीं समीप ही है। जब बचपन में एक बार और वह इसी निराश्रित दशा में जेल से निकला था और माँ की मृत्यु का समाचार सुनकर अधमुआ-सा हो गया था, तब बशीर के बाप ने ही उसे सहारा दिया था। इस स्मृति ने उसके मन में हलकी-सी आशा का संचार कर दिया और लड़खड़ाते पाँव से बशीर के घर के दरवाजे पर पहुँचकर उसने आवाज दी। बहुत देर तक, कई बार आवाज देने पर भी अन्दर से कोई न बोला। उम्मेद हताश होकर वहाँ से चलने लगा, तब अन्दर से किसी के पाँव की आहट आई। उम्मेद ठहर गया, पाँव की आहट दरवाजे के पास पहुँची, पर दरवाजा नहीं खुला। एक बहुत ही निर्बल और स्त्री-स्वर ने पूछा—

कौन है ?

उम्मेद ने उत्तर दिया—मैं बशीर का दोस्त उम्मेद हूँ। बशीर के वालिद से मिलने आया हूँ। अन्दर से उसी निर्बल स्वर ने और भी अधिक निर्बल होकर, मानो कब्र में पहुँचकर कहा—बशीर के अब्बा उसको सजा मिलने की खबर सुनकर उसी रात···। बस वह स्वर आगे कुछ न कह सका, आँसुओं में डूब गया। उम्मेद को एक जबर्दस्त धक्का लगा, उसका सिर घूम गया। वह दोनों हाथों से उसे थामकर वहीं बैठ गया और बेहोश हो गया।

(७)

जब उम्मेद बेहोशी से उठा तो गहरी रात हो चुकी थी। उसका शरीर सर्दी से स्तब्ध हो गया था। कई राह जातों ने उसे अचेत अवस्था में गली में पड़े देखा और कोई भिखमंगा समझकर राह काटकर निकल गए। अब भी शायद उसकी बेहोशी दूर न होती यदि एक कुत्ता आकर उसके पाँव पर पंजे न चलाता। जहाँ वह पड़ा था, वह असल में उस कुत्ते के रात में आराम करने की जगह थी। उस गली का वह कुत्ता उसी जगह बैठकर रात में ऊँघता और भौंकता था। उसने जब अपने विश्राम-स्थान को घिरा पाया तो उम्मेद के पाँव पर पंजे मारने लगा। उम्मेद की नींद खुल गई और वह अपने-आपको सम्भालकर उठ खड़ा हुआ।

उम्मेद को होश आया, परन्तु वह होश बेहोशी से कहीं अधिक दुःखदायी था। जीवन की सम्पूर्ण दुःखदायी घटनाएँ चलचित्र की तरह उसके हृदय के सामने घूमने लगीं। बचपन में जेल की यातना, स्नेहमयी माता का वियोग, ग़रीबी, फिर अमीरों का अत्याचार, अस्पताल, निर-पराध बशीर को सजा और बशीर के पिता की मौत और अन्त में अपनी दुर्दशा - यह सब स्मृतियाँ हज़ारों बिच्छुओं की तरह घिरकर उसके हृदय में डंक मारने लगीं। जिससे प्यार किया, दुष्टों ने उसी से अलग कर दिया। माँ के प्राण ले लिए, श्यामा को ले भागे, बशीर को जेल भेज दिया और यह किस के अपराध की सज़ा? उम्मेद की आत्मा सन्तुष्ट थी कि मेरा इसमें कोई अपराध नहीं था? फिर यह दुःख और सज़ा किसलिए?

उम्मेद की आत्मा में दुःख की एक हूक उठ रही थी और हृदय में विद्रोह की ज्वाला पैदा हो रही थी। उसके चारों ओर गहरा अन्धेरा था, परन्तु हृदय में दुःख, अशान्ति और संसार के प्रति असन्तोष का दावानल जल रहा था।

वह इस समय किससे असन्तुष्ट था, यह कहना कठिन है, क्योंकि

वह प्रायः संसार भर को अपना शत्रु देख रहा था। वह ग़रीब घर में पैदा हुआ था, क्या यह उसका कसूर था ? उसका पिता उसे बच्चा छोड़-कर मर गया, क्या यह उसका अपराध था ? ज़रा से अपराध पर, दूसरे की जगह उसे पापों के भण्डार जेल में ठूँस दिया गया, क्या इसके लिए वह जुम्मेवार था ? पुलिस ने और जेल वालों ने उस पर और उसकी माता पर जो अत्याचार किये उनके लिए क्या वही उत्तरदाता था ? फिर वह तो जेल से आकर सब कुछ भूल गया था। ईमानदारी से मेहनत करता और सन्तोष से जीता था। मालिक के नमक को पवित्र समझता और धोखे से बचना चाहता था। क्या यह उसका दोष था ? आज जो दशा उसकी हो रही थी, क्या उसके लिये संसार का अन्याय ही उत्तरदाता नहीं था ?

इसप्रकार उसके हृदय में संसार के प्रति और मनुष्य जाति के प्रति विद्रोह पैदा हो रहा था। वह विद्रोह का भाव बहु-व्यापी होता हुआ भी कुछ व्यक्तियों और श्रेणियों के चारों ओर घिर-सा रहा था। बच-पन के दुःखों और स्नेहमयी माँ के वियोग के कारण उसके हृदय में पुलिस और सरकारी महकमों के प्रति द्वेष की आग पैदा हो रही थी। वर्त्तमान आपत्तियों के कारण वह भरूचा और उसके सहायकों का विरोधी बन रहा था। उस समय उस अन्धेरी गली में से जब मुँह लट-काये, लड़खड़ाता हुआ उम्मेद बड़ी सड़क की ओर जा रहा था, तब उसकी आत्मा में एक तूफ़ान मच रहा था। वह जीवन से असन्तुष्ट था, वह संसार से असुन्तुष्ट था और अपने-आप से भी असन्तुष्ट था।

सड़क पर आकर वह खड़ा हो गया और सोचने लगा कि किधर जाऊँ। संसार में उसका कोई भी न था, जिसके पास जाकर अपना दुःख कहता और दिल को हल्का करता। थकान और दुःख के कारण उसका शरीर घूम रहा था। उसने अनुभव किया कि वह बैठना चाहता है। पास ही एक मन्दिर था, उसके बाहर एक चबूतरा था। वह चबूतरे पर जा बैठा और दोनों हाथों पर मुँह रखकर, आँखें बन्द करके

सोचने लगा।

मन्दिर के अन्दर उन दिनों कथा हो रही थी। बनारस के एक पण्डित जी रामायण की कथा कहा करते थे। आज कथा का अन्तिम दिन था। जिस समय उम्मेद चबूतरे पर जाकर बैठा, कथा समाप्त हो रही थी। पण्डित जी के अन्तिम शब्द उसके कानों में पड़े। पण्डित जी कह रहे थे—आज अमावस है। आज की पवित्र रात्रि में रामायण समाप्त हुई। शुभमस्तु। सब का कल्याण हो। श्रीरामचन्द्र जी महा-राज की कृपा से आप सब सुखी रहें, यजमानों की बढ़ती हो, उनकी धर्म में श्रद्धा बनी रहे, धर्म के कामों में उनका दिन दूना, रात चौगुना उत्साह बढ़े।

उम्मेद के कानों पर पण्डित जी के शेष शब्द तो ऐसे पड़े, जैसे ऊसर भूमि पर वर्षा का जल पड़ता है, कोई प्रतिक्रिया पैदा न हुई, पर एक शब्द ने ज़मीन को कुछ खोद-सा दिया। वह शब्द था 'अमावस'। अमावस शब्द ने उसके हृदय में मानो पूर्वजन्म की स्मृति को उद्‌बुद्ध कर दिया। उसे याद आया कि अमावस की रात के साथ उसके जीवन का विशेष सम्बन्ध है। उस दिन को याद रखने का किसी ने वायदा लिया था। किसने लिया था ? कब लिया था ? कुछ देर तक उम्मेद का दिमाग मानो अंधेरे में टटोलता रहा। आखिर याद आ गया और साथ ही उसके हृदय में एक बिजली-सी दौड़ गई। उसे याद आया कि एक घोर अमावस की रात को उसके जेल के प्रेमी भागसिंह ने भरे हुए गले से उससे कहा था—उम्मेद तू नहीं जानता कि मैं तुझे भाई से अधिक प्यार करता हूँ। यदि इतने दिनों तक तुझ से नहीं मिला तो केवल तेरी खातिर। अब तुझे छोड़ता हूँ, यह भी तेरी ख़ातिर है। मुझे यकीन है कि तू मेरे पास आयगा और शीघ्र ही आयगा। इसी आशा में तुझसे अलग होता हूँ। यदि तेरे दिल में कभी मुझ से मिलने का विचार हो तो किसी भी अमावस की रात को ग्यारह बजे इसी स्थान पर हाथ से तीन बार ताली बजाना। तुझे मेरा पता लग जायगा।

भार्गसिंह के वह शब्द, उसी के गम्भीर स्वर में, उम्मेद के कानों में गूंजने लगे। भार्गसिंह ने उस रात, घने सुनसान जंगल में जो-जो बातें कही थीं, वे सभी उम्मेद को याद आयीं। भार्गसिंह ने उससे कहा था कि पैसे वालों का कोई विश्वास नहीं, कोई अपना नहीं। उस दिन उम्मेद ने भार्गसिंह के उस कथन को झूठा समझा था, आज उसे वह सत्य प्रतीत होने लगा। दुनिया की चोटों ने उसे अविश्वासी बना दिया था। उसे यह भी अनुभव होने लगा कि मैं बिल्कुल अकेला नहीं हूँ। ऐसा नहीं कि संसार में मुझे कोई अपना नहीं समझता। भार्गसिंह मुझ से प्यार करता है, मुझे अपना भाई समझता है। वह अपने से पूछने लगा कि आज अमावस की रात है। कोई दस बजे का समय होगा। क्यों न मैं अपने एकमात्र प्रेम करने वाले हितैषी के पास जाकर खुले दिल से कह दूँ कि भाई, तुम सच कहते थे, मैं भूला हुआ था, अब मैं भूल को स्वीकार करता हूँ। मैं भी इसी परिणाम पर पहुँचा हूँ कि शक्ति-सम्पन्न व्यक्ति किसी के मित्र नहीं। वे केवल स्वार्थ के मित्र हैं।

अन्दर से प्रश्न का उत्तर आया—ठीक है, तुझे ऐसा ही करना चाहिए। तूने संसार के साथ ईमानदारी निभाने में कोई कसर नहीं छोड़ी, पर संसार ने तेरा साथ नहीं निभाया। अब यदि तू संसार के शत्रु के साथ मिल जाय तो कोई हर्ज नहीं।

उम्मेद ने इस उत्तर को सुना और उठकर जंगल का रास्ता लिया।

८

डाकू से आजन्म कैदी

उम्मेद को भागसिंह की टोली में आये ठीक एक महीना व्यतीत हो गया। आज दूसरी अमावस है और अपनी हमेशा की पद्धति के अनुसार भागसिंह दिल्ली में आया है। उसका क्षेत्र बहुत लम्बा-चौड़ा है। वह दिल्ली से फीरोजपुर, बहावलपुर, बीकानेर आदि तक फैला हुआ है।

उसका मुख्य केन्द्र दिल्ली में है। महीने में एक बार वह दिल्ली आता है और अपने सब विभागों को देखता है। विभागों का अभिप्राय पाठक शायद न समझें। उन्हें जानना चाहिए कि डाकुओं के बड़े सरदार को अपने जत्थे के साथ बहुत-से महकमे रखने पड़ते हैं। जो माल लूटा जाता है, वह कहाँ रखा और बेचा जाय? उसके लिए एक केन्द्र बनाना पड़ता है। कहीं थोड़ा-बहुत घर भी रखना ही पड़ता है। इन कार्यों के लिए दिल्ली से बढ़िया स्थान मिलना कठिन था। यहाँ डाकू और हत्यारे निःशंक रह सकते थे। डाकुओं में मशहूर था कि दिल्ली में कोई डाकू या खूनी सजा नहीं पा सकता। यदि निचली अदालत में उसे सजा मिल भी जाय तो सेशन में वह सजा बहाल नहीं रह सकती। भारत की राजधानी में दुनिया को पनाह मिलनी चाहिए। डाकू लोग उसी में सिर छिपाने को जगह माँगते थे। भागसिंह ने भी दिल्ली में ही अपनी राजधानी बना रखी थी।

दिल्ली में वह करौलवाग में रहा करता था। उसने एक कोठी ले रखी थी, जिसमें एक सिक्ख-परिवार रहता था। उस कोठी पर सुक्खासिंह एण्ड को० कन्ट्रेक्टर्स का साइनबोर्ड लगा रहता था। पड़ौसी कभी-कभी सुक्खासिंह से पूछते कि आप की ठेकेदारी किस जगह है तो वह कहता था कि मेरा काम प्रायः पंजाब की रियासतों में है और वहाँ मेरा भाई देखभाल के लिये रहता है। सुक्खासिंह चुपचाप अपने आप में रहने वाला प्राणी था। न वह दूसरों की बातों में दखल देता था और न दूसरे उसके कामों में दखल देते थे।

कभी-कभी जब उसका भाई पंजाब से आ जाता, तब कोठी पर चहल-पहल हो जाती थी। दो-चार मिलने वाले आदमी आ जाते थे। कभी-कभी घर की वस्तुओं की खरीद फरोख्त भी होती थी। जिन लोगों का विशेष रूप से आना-जाना था, उनमें से एक जौहरी साहब भी थे, जो चमड़े की पेटी हाथ में लिए आते और देर तक अकेले में सुक्खासिंह के भाई से, जिसे बसाखासिंह के नाम से पुकारा जाता था। परन्तु जो वस्तुतः भार्गसिंह था, सोने चांदी और जवाहरात के सौदों की बातचीत कया करता था। दिल्ली प्रवास में, भार्गसिंह कोट-पैंट डांटे और सिर पर रंगीन सरदारी साफा बाँधे जब कोठी से निकलता था, तब पूरा सरकारी ठेकेदार दिखाई देता था।

दिल्ली में भार्गसिंह के मिलने वालों में एक डाक्टर साहब भी थे। शहर में उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। वह पुराने डाक्टरों में समझे जाते थे। कमाई अच्छी थी। अपना मकान था, मोटर थी और रईसी ठाठ था। सार्वजनिक कामों में बड़ी रुचि रखते थे। शायद ही कोई सार्वजनिक काम ऐसा हो, जिसमें वह शामिल न होते हों। कई सभाओं के प्रधान थे, कइयों के मन्त्री। उपप्रधान तो कोई दर्जन भर सभाओं के थे। राजा और प्रजा दोनों में उनका मान था। बन्दूक और पिस्तौल का लाइसेन्स था और सरकारी जल्सों में आदर के साथ निमन्त्रित किये जाते थे। वह भी प्रायः बसाखासिंह से मिलने आया करते थे। ठेकेदार

के घर में बीमार का होना और डाक्टर का आना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं था।

इस बार बसाखासिंह के साथ एक और आदमी भी आया है, जिसे वहाँ के लोग उम्मेदसिंह के नाम से पुकारते हैं। उसके सिर और चेहरे पर सिक्खों जैसे पूरे बाल तो नहीं, परन्तु दाढ़ी और मूँछ के बाल बढ़े हुए अवश्य हैं। वह पूरे पंजाबी वेष में है। सलवार, लम्बी कमीज, छोटा कोट और रंगीन पगड़ी, यह उसका वेष है। बसाखासिंह ने अपने मित्रों से यह कहकर उसका परिचय दिया कि यह मेरा साझीदार है। ठेके का काम बढ़ जाने से मैंने एक नया साथी तैयार कर लिया है।

जिस मैदान में कई वर्ष पहले उम्मेद की आँखें बाँधकर भागसिंह के सामने ले जाया गया था, वहाँ आज पूरी कौंसिल की बैठक हो रही है। झुरमुटों और झाड़ियों से घिरे हुए बियाबान में कपड़ा बिछा हुआ था, उस पर भागसिंह और उम्मेदसिंह के अतिरिक्त चार और आदमी बैठे थे। उनमें से एक तो वही हमारे पूर्वपरिचित डाक्टर साहब थे, जो इस समय निकर, कोट और हैट में सजे हुए थे। शेष तीन व्यक्ति भागसिंह की पार्टी के थे। उनमें से दो मुसलमान थे, एक हिन्दू। मुसलमानों के नाम करीमा और गुलाब थे। हिन्दू का नाम था मस्ताना। तीनों दिल्ली के रहने वाले थे। करीमा और गुलाब भाई-भाई थे, सदर बाजार में मोटरों की मरम्मत का काम करते थे। मस्ताना का पेशा तो दूध बेचना था, परन्तु उसका असली रोजगार जुए के अड्डे चलाना था।

लड़ाई की कौंसिल हो रही थी। शुरू में भागसिंह ने सब लोगों से उम्मेद का परिचय कराते हुए उसके साहस और निडरपन की प्रशंसा की और साथ ही अपने बहुत पुराने परिचय के ज़ोर पर कहा कि यह बहुत ही विश्वासपात्र आदमी है। इससे हमारी पार्टी के जत्थे को बड़ी मदद मिलेगी।

उम्मेद ने भी उन लोगों की ओर देखा। अँधेरी रात में हरीकेन लालटेन की रोशनी में सूरत को पूरी तरह देखना तो कठिन था, परन्तु उम्मेद ने जो कुछ देखा, उससे सब के बारे में भिन्न-भिन्न सम्मति बना ली। प्रायः पहली नज़र में मनुष्य दूसरे के बारे में एक हल्की-सी राय तो बना ही लेता है। गुलाब और मस्ताना उम्मेद को भले मालूम हुए, करीमा की ओर देखकर उसका जी घबराया और डाक्टर साहब की सूरत ने तो उसे बहुत ही परेशान कर दिया। डाक्टर को उसने अपने कारखाने में कई बार देखा था। वह मरीजों को देखने और सभा-सोसाइटियों के लिए चन्दा माँगने आया करता था।

उन सब ने भी उम्मेद को तीखी आँखों से देखा।

आज की कौंसिल में इस विषय पर विचार किया गया कि दिल्ली में बहुत दिनों से कोई बड़ा काम नहीं हुआ। पार्टी के पास पैसे की कमी हो रही है, शीघ्र ही कोई ऐसा काम करना चाहिए जिससे पार्टी को रकम भी हाथ लगे और दुनिया में सनसनी भी पैदा हो। भागसिंह कभी छोटे हाथ नहीं मारता था, चोरी और राहजनी से उसे घृणा थी। वह सदा बड़ी और शानदार डकैती ही मारा करता था। दिल्ली में अपने साथियों को उसने काम बाँटे हुए थे। डा० डी० राम एक तरह से उसके खुफिया समाचार-विभाग का अध्यक्ष था। वह दिल्ली में आये-गये या बसने वाले धनी लोगों की ख़बर रखता था। शहर का प्रतिष्ठित नागरिक और सरकार का कृपापात्र होने के कारण उसके पास रिवाल्वर और बन्दूक के लाइसेन्स भी थे, जिससे जत्थे को बड़ी मदद मिलती थी। करीमा जत्थे की दिल्ली शाखा का मुखिया था, गुलाब और मस्ताना उसके लेफ़्टिनेन्ट थे। कहाँ और कब डाका डाला जाय, इस पर सब से पहले डा० डी० राम की राय ली गई। डाक्टर ने कहा कि आजकल दिल्ली में तीन मोटी मुर्गियाँ हैं। उनमें से दो यहाँ की हैं और एक बाहर से आई हुई है। दिल्ली की मुर्गियों में से एक तो···फर्म के मालिक हैं और दूसरे···जौहरी हैं। बाहर से आई हुई मुर्गी पहाड़गंज में एक कोठी

किराये पर लेकर ठहरी हुई है। वह रोहतक का एक बनिया है, जो जायदाद खरीदने के लिए यहाँ आया हुआ है। मुझे अपने इलाज के सिलसिले में दो-तीन बार उसके पास जाने का मौका मिला है। मेरा ख्याल है कि वह अपनी तिजोरी में बहुत-सा रुपया रखता है। अब इन तीनों में से जिसे चाहो, अपना शिकार बना सकते हो।

भार्गसिंह ने करीमा की ओर देखा। करीमा और डाक्टर साहब गहरे दोस्त थे। दोनों मानो चोली दामन हो रहे थे। डाक्टर सोचता था, करीमा करता था। करीमा ने कहा कि ऐसे मामलों में मैं कोई दखल नहीं दिया करता। देखभालकर जो राय डाक्टर बनायगा, मैं उसके लिये पूरी तैयारी कर लूँगा।

कुछ देर तक बातचीत होने के पीछे निश्चय हुआ कि अगले महीने की अमावस की रात को रोहतकी लाला के यहाँ डाका डाला जाय। उस दिन भार्गसिंह स्वयं भी दिल्ली में होगा और कुछ अनुभवी आदमियों को बाहर से दिल्ली में लायगा। एक महीने का अन्तर इसलिये दिया गया कि डाके की पूरी तैयारी हो जाय। डाक्टर ने बड़ा जोर दिया कि जब तक उसके दो-चार आदमियों को तोड़ा न जाय, तब तक डाका डालकर भी माल नहीं मिल सकेगा। यह दलील तो उसने प्रत्यक्ष में दी, परन्तु दिल में यह था कि डाके की आमदनी तो सन्दिग्ध होती है, महीने भर में जो फीस की कमाई हो सके, वह तो कर ही लेनी चाहिये। बनिये की औरत बहुत बीमार थी, उससे डाक्टर को बहुत मोटी रक़म मिलने की आशा थी।

दूसरा विचारणीय विषय यह था कि उम्मेदसिंह को कहाँ रखा जाय। पहले महीने वह भार्गसिंह के साथ फीरोज़पुर के जिले में रहा था। भार्गसिंह अभी कुछ और दिन तक अपने साथ रखकर उसे डाका डालने की कला में निपुण बनाना चाहता था, परन्तु उम्मेद के दिल में दूसरी ही धुन थी। वह अपना सबसे पहला काम यह समझता था कि श्यामा की तलाश करे और उसके उड़ाने वाले को सजा दे। पहले तो

भार्गसिंह ने उसे बहुत समझाया कि जब डाकू का पेशा पकड़ा है तो पुराने सब सम्बन्धों को छोड़ देना चाहिये। परन्तु उम्मेद का दिल श्यामा के मामले में जमा हुआ था और भार्गसिंह उम्मेद से प्यार करता था। वह उसकी इच्छा को टाल न सका। उसने उम्मेद को दिल्ली में छोड़ते हुए डाक्टर और करीमा के सुपुर्द किया। श्यामा को तलाश करने में उम्मेद की पूरी मदद करने का काम डाक्टर को सौंपा गया और यदि श्यामा के उद्धार के लिये मदद की जरूरत हो तो करीमा को हुक्म दिया गया कि वह अपने आदमियों के साथ तैयार रहे।

उम्मेद के रहने का प्रबन्ध करौलबाग़ वाली कोठी में हुआ। वह वहाँ सिख वेष और कृपाण बाँधकर ठेकेदार के साझी के तौर पर रहने लगा।

भार्गसिंह को सात दिन पीछे बीकानेर में एक बहुत बड़ा डाका डालना था, इस कारण वह अगले ही दिन दिल्ली से रवाना हो गया। जाते हुए वह दिल्ली की पार्टी को कह गया कि अगर बीकानेर का मामला जबर्दस्त निकला तो उसके लिये दिल्ली से भी कुछ आदमियों को बुलाया जायगा। वे लोग तैयार रहें।

(२)

जब भार्गसिंह दिल्ली में नहीं होता, तब ये लोग प्रायः करीमा के कारखाने में मिलते थे। अमावस के दो दिन पीछे सब लोग एकत्र हुए तो उम्मेद ने करीमा और डाक्टर से श्यामा की तलाश के बारे में बातचीत की। उस बातचीत के समय उम्मेद ने दो बातें अनुभव कीं। उसने देखा कि करीमा उसकी ओर से ज़रा खिंचा हुआ है और डाक्टर उसकी ओर बहुत झुका हुआ है। करीमा का उसने कुछ बिगाड़ा नहीं था और न डाक्टर का कुछ बनाया था। दोनों के एक-दूसरे के विरुद्ध झुकाव को देखकर उसे कुछ आश्चर्य-सा हुआ। करीमा की राय थी कि पहले अगले महीने की डकैती के मामले को पकाया जाय और फिर उम्मेद के काम में हाथ डाला जाय, परन्तु डाक्टर की राय उम्मेद

के काम को शीघ्र ही शुरू करने की थी। उसने कहा कि पहली बात तो यह है कि सरदार हुक्म दे गया है कि उम्मेद के मामले को जल्दी हाथ में ले लिया जाय और यह हम लोग जानते ही हैं कि सरदार की बात को टालना मौत को बुलाना है। दूसरे यह भी देखना है कि जब तक उसके काम में दिलचस्पी न ली जायगी, तब तक एक नया आदमी अपना कैसे बनेगा। यह जरूरी नहीं कि अपनी सारी ताकत उसी मामले में लगा दी जाय, पर एक आदमी को उसके लिये छोड़ देने में कोई हर्ज नहीं। देर तक बातचीत होती रही। पहले तो करीमा अड़ा रहा, परन्तु जब उसने देखा कि गुलाब और मस्ताना की सम्मति का झुकाव भी डाक्टर के प्रस्ताव की ओर है तो वह राज़ी हो गया, पर 'अच्छा' कहते समय उसने उम्मेद की ओर एक ऐसी विषैली आँख से देखा कि वह काँप गया। उम्मेद की सहायता के लिये गुलाब की ड्यूटी लगाई गई। यह भी निश्चय हुआ कि यदि कभी गुलाब को जरूरत हो तो वह मस्ताना की मदद भी ले सकता है। अभी केवल तहकीकात का काम था, इस कारण उसकी देख-रेख डाक्टर साहब ने अपने हाथ में ली।

शीघ्र ही उम्मेद श्यामा और सुखदेई की तलाश में लग गया। गुलाब अपनी कला में खूब निपुण था। वह सूरत बदल सकता था और खुफिया तौर पर खबरें ला सकता था। उसने एक खोमचे में पान बीड़ी और सिगरेट का सामान रखा और प्रतिदिन घण्टे दो घण्टे के लिये मिल के मजदूरों में जाकर बेचना शुरू कर दिया। उम्मेद ने उसे उन लोगों का नाम तथा हुलिया बतला दिया था, जिनसे कुछ पता चल सकता था। पाँच सात दिन में ही उसने उम्मेद के पूर्वपरिचित मजदूरों से मेल-जोल बढ़ा लिया। उसे उम्मेद से मालूम हो चुका था कि मजदूरों में सब से अधिक सीधा और बकवासी उसका पुराना पड़ोसी तिवारी है। एक दिन वह शाम के समय तिवारी के पास पहुँचा, तो देखा कि हज़रत खाना खाकर अपनी कोठरी के बाहर बैठे हैं और

सुर्ती चबा रहे हैं। जाकर जयराम जी की की। उत्तर में तिवारी जी ने भी सिर हिलाते हुए एक पान का बीड़ा बनाने का हुक्म दे दिया। गुलाब जब पान बेचने जाता तो हिन्दू वेष में रहता था। धर्मपरायण तिवारी जी उसके पान के प्रेमी बन गये थे। कहते थे, ससुरा बड़ा मजेदार पान बनाता है। बड़ा सख्त तम्बाकू डालता है। जो लोग तम्बाकू के बगैर पान खाते हैं, वह तो बकरे हैं। सिर्फ पत्ते चबाना तो बकरों का काम है—तम्बाकू बिन पान, जानो ताल बिना गान।

गुलाब ने अपने तम्बोली वेष का नाम सरूपा रखा हुआ था। सरूपा ने एक बढ़िया-सा पान का बीड़ा और उसके साथ एक पुड़िया में सुगन्धित तम्बाकू रखकर दिया। तिवारी जी मानो स्वर्ग में पहुँच गये। बोले—भय्या तेरा कल्याण हो। पैसा कल ले जाना, तिवारी जी सरूपा से सात दिन से पान ले रहे हैं, पर पैसे का हिसाब कल पर ही छोड़ देते हैं। सरूपा भी बहुत अच्छा कहकर चुप हो जाता है। तिवारी जी को खूब प्रसन्न पाकर सरूपा ने इसप्रकार बातचीत का सिलसिला चलाया।

तिवारी जी महाराज, पिछले साल भी मैं कभी-कभी इधर पान-बीड़ी बेचन आया करता था, तब आप से कभी भेंट न हुई। आप तो राजा आदमी हो, पर सब ऐसे नहीं होते।

हाँ भय्या, ठीक कहते हो, हम तो ब्राह्मण हैं न और ब्राह्मण तो संसार का राजा ही है। उसे ब्रह्मा ने अपने मुँह से पैदा किया है। यहाँ बहुत से नीच जाति के लोग भी रहते हैं, कभी उनसे वास्ता पड़ गया होगा।

हाँ महाराज, ऐसा ही मालूम पड़ता है। यहीं कहीं तुम्हारे पड़ोस में उम्मेद नाम का आदमी रहता था, उसने एक महीना भर मुझ से उधार में बीड़ी खरीदीं, पर एक भी पैसा न दिया। अब न जाने कहाँ भाग गया।

तिवारी जी बैठे थे, खड़े हो गये। माथे पर त्रिकुटी भरते हुए बोले—

अरे वही न चुहनवा का। वह बड़ा नीच था। मालिकों से मजदूरों में बाँटने को रक़म लाया और एक कमीनी औरत को देने जा रहा था। बड़ा पाजी था, अच्छा हुआ जो साला पिट गया। उससे पैसा क्या वसूल होता। वह तो जो कुछ कमाता था, उसी रांड के पाँव पर धर देता था।

सरूपा बनावटी क्रोध करता हुआ बोला—

तब तो वह बड़ा ही बदमाश था, तिवारी जी। अच्छा हुआ जो किये की सजा पा गया। भला यह तो बताइये, उस औरत का क्या हुआ?

और क्या होना था। चौहान के अस्पताल पहुँचते ही, वह कमीनी औरत हमारे मिल के खजानची के गले पड़ गई। जैसे उस चौहान का सत्यानाश किया, उसी तरह इस पारसी का भी सत्यानाश करेगी।

गुलाब को इतना पता तो चल गया कि मिल के आदमी भी यही समझते हैं कि श्यामा भरूचा के कब्जे में है। भरूचा ने उसे कहाँ रखा है, यह जानने के लिए उसने तिवारी से बातचीत का सिलसिला आगे चलाया, परन्तु कुछ फल न निकला, क्योंकि भरूचा कहाँ रहता है और उसने श्यामा को कहाँ रखा है, इन बातों का कुछ भी पता तिवारी न बता सका।

दूसरे दिन से सरूपा ने भरूचा का पीछा करना शुरू किया। दिन भर तो भरूचा दफ्तर में काम करता, शाम को जब मिल से निकलता तो सीधा किसी होटल में चला जाता। वहाँ उसके कम से कम दो घण्टे व्यतीत होते थे। पहले कुछ देर तक तो यार-दोस्तों से मिलकर ब्रिज खेलता। खूब कसकर बाजी लगाता था। सभी पक्के जुआरी थे। बढ़-बढ़कर बोलते और खूब हारते-जीतते थे। कुछ दिनों से भरूचा का हाथ नीचा हो रहा था। वह अधिक हारता और कम जीतता था।

ब्रिज के पीछे खाने का दौर चलता था और खाने के बाद पीने का। यह सारा काम रात के नौ या दस बजे पूरा होता था। उस

समय भरूचा पूरे नशे में होता था। उसके बाद वह होटल से निकल जाता था। उसने एक मकान किराये पर ले छोड़ा था, जहाँ उसके सिवा उसका एक पालतू कुत्ता और एक मुसलमान नौकर रहता था, जो घर के काम-काज करता था। नौकर हर रोज़ रात के समय मालिक का बिस्तर बिछाकर सो जाता था और घर को ऐसा ताला लगा देता था, जो बाहर और अन्दर दोनों ओर से बन्द होता और खुलता था। उसकी एक चाबी भरूचा के पास और एक नौकर के पास रहती थी। जब रात को किसी समय भरूचा आता था, तब नौकर प्रायः सोया हुआ और कुत्ता जागता हुआ मिलता था। वह बेचारा अगले पाँव पर मुँह रखे मालिक के आने की प्रतीक्षा किया करता था। किसी-किसी दिन उसे बहुत बड़ी प्रतीक्षा में से गुज़रना पड़ता था। प्रतीक्षा ही प्रतीक्षा में रात गुज़र जाती और मालिक उस समय दरवाज़ा खोलता, जब पूर्व दिशा से उषा की लाली दिखाई देने लगती थी।

गुलाब को होटल का पता लगाने में कुछ कठिनाई न हुई, जिसमें भरूचा शाम का खाना खाया करता था। गुलाब भी एक जन्टलमैन की सूरत बनाकर उस होटल में जा बैठा। भरूचा रात के १२ बजे तक वहाँ जुआ खेलता और शराब पीता रहा। जब खूब नशा चढ़ गया और जेब भी ख़ाली हो गई, तब वह उठा। पहले भरूचा जुए में प्रायः जीतता था, परन्तु अब कुछ दिनों से उसका सितारा मद्धम हो रहा था। वह हारने लगा था। उधर मिल में उसके हिसाब में कुछ गड़बड़ी पकड़ी गई थी, जिसकी तहकीकात हो रही थी। कई हज़ार रुपयों की रक़म लापता थी। उस रक़म की फिक्र में भरूचा जुए में बढ़-बढ़कर बोलता था, ब्रिज में बड़ी स्टेक लगाता और ख़तरे के हल्के में जाकर खेलता था। इसलिए आजकल उसका खेल बिगड़ रहा था। उस दिन भी भरूचा खूब हारा और कुछ खिसियाना-सा होकर होटल से बाहर निकला।

गुलाब नज़र बचाता हुआ उसके पीछे-पीछे चला। भरूचा के पाँव

लड़खड़ा रहे थे, पर जिस रास्ते से वह जा रहा था, वह उसका अभ्यस्त मालूम होता था, क्योंकि अन्धेरी गलियों में भी वह बेखटके लुढ़कता चला गया। सड़क पर पहुँचकर भरूचा ने ताँगा ले लिया और ताँगे वाले को सदर बाजार जाने का हुक्म दिया। गुलाब पहले तो बहुत घबराया कि कहीं चिड़िया हाथ से न उड़ जाय, परन्तु अभी भरूचा का ताँगा दूर न गया होगा कि एक खाली ताँगा आ पहुँचा और गुलाब ने उसमें बैठकर पीछा किया।

भरूचा का ताँगा शिथिलता से जा रहा था। गुलाब को उस तक पहुँचने में देर न लगी। भरूचा ने बारहटूटी पर पहुँचकर ताँगे को छोड़ दिया और दूर तक सड़क पर चलकर एक गली में प्रवेश किया। गुलाब भी उसके पीछे-पीछे गली में घुसा। गली तंग और अन्धेरी थी। उसमें पास की चीज भी साफ दिखाई नहीं देती थी। गुलाब उस अन्धेरे में केवल इतना देख सका कि भरूचा कुछ दूर तक गली में गया और फिर दाईं ओर को मुड़कर उन कई बड़ी-बड़ी हवेलियों में से किसी एक में गायब हो गया, जिनके दरवाजे गुलाब के पहुँचने पर बन्द ही मिले।

इसके आगे गुलाब न पहुँच सका। उसने कई दरवाजों को टटोला पर कहीं कुछ पता न चला। सब अन्दर से बन्द थे। आज के लिये इतना ही काम काफी समझ कर गुलाब चला गया और जो कुछ देखा था, उसकी रिपोर्ट उम्मेद को दे दी।

(३)

अगले दिन दोपहर के समय गुलाब और उम्मेद दोनों मित्र मनिहारों का रूप बनाकर और बाजार से कुछ चूड़ियाँ लेकर उस गली में पहुँचे, जहाँ रात को अन्धेरे में भरूचा गुलाब की आँखों से ओझल हुआ था। भारतीय समाज में मनिहार की स्थिति असाधारण है। जहाँ वायु का प्रवेश नहीं, वहाँ मनिहार चला जाता है। जिस घर में कमाल का पर्दा हो, उसमें मनिहार की आँखें झाँक सकती हैं। जिस कोमल कलाई

को पति के सिवा कोई छू भी नहीं सकता, उसे मनिहार खूब दबा सकता है और देर तक दबा सकता है। भारत के पारिवारिक जीवन में मनिहार की गति अप्रतिहत है। उसे जन्म से ही पवित्र और विश्वासयोग्य समझा जाता है। यही कारण है कि भारत में दूतीकर्म करने के लिये सबसे उपयोगी वेष मनिहारों का है। हिन्दू घरों की सुरक्षित पारिवारिक दीवारों में सेंध लगाने में सबसे अधिक सफलता मनिहारों को ही प्राप्त होती है। ऐसे सुलभ और उपयोगी वेष में दोनों मित्रों को उन बन्द दरवाजे की हवेलियों के अन्दर प्रवेश करने में कुछ कठिनाई न हुई।

पहिली दो हवेलियों में तो कोई खास चीज़ दिखाई न दी। एक का तो दरवाजा ही न खुला। लड़की ने आकर किवाड़ के पीछे से पूछा कि कौन है? यह उत्तर पाकर कि मनिहार है, वह चली गई। कुछ देर तक बहस की आवाज़ अन्दर से आती रही। प्रतीत होता था कि लड़की चूड़ियाँ लेने की ज़िद कर रही थी और घर की बुज़ुर्ग इन्कार कर रही थी। थोड़ी देर प्रतीक्षा के पीछे अन्दर से ही जवाब मिला हम चूड़ियाँ नहीं लेंगे, तुम लोग जाओ।

दूसरी हवेली एक बनिये की थी। तिमंजिला मकान था, पर उसकी ड्योढ़ी निहायत गन्दी थी। एक ओर टूटी हुई खाट पड़ी थी, दूसरी ओर बच्चों की टट्टी का ढेर लगा हुआ था। अन्दर के दरवाजे के सामने एक मैला-कुचैला फटा-पुराना टाट टंगा हुआ था, जिसकी आयु उस हवेली से शायद दो एक महीने छोटी होगी।

वहां "चूड़ियाँ ले लो" इस आवाज का फौरन असर हुआ। पहले लड़की की माँ आई, फिर लड़की की बुआ, दादी सब ड्योढ़ी में जमा हो गईं। सब के कपड़े मैले चिक्कट थे, पर हाथों और गले में सोना लदा हुआ था। वह दिल्ली की आदर्श बनियानियाँ थीं। एक छोटा-सा लड़का भी भागा-भागा आया, जिसके सिर पर रेशमी टोपी थी, कानों में सोने की बालियां थी, आंखों में सुरमा चुपड़ा हुआ था, गले में एक मैला और नाभि तक की लम्बाई का कुर्ता था। शेष सारा शरीर नंगा

था। नाक बह रहा था और पाँव मिट्टी में सने हुए थे। वह दिल्ली के बालक का एक नमूना था। उस घर में चूड़ियों की काफी खरीदारी होती, पर दोनों ही मनिहार अनघड़ थे। अन्दाज़ से हाथ दबा कर चूड़ियाँ चढ़ाना न जानते थे। पहिले तो हाथ बढ़ाने में ही संकोच हुआ और जब चढ़ाने लगे तो दो-चार चूड़ियां तोड़ बैठे। अन्त में वहां से दो-चार भारी भारी गालियाँ खाकर ड्योढ़ी से बाहर निकल आये।

तीसरे मकान का दरवाजा बन्द था। देर तक खटखटाते रहे। पहले तो कोई बोलता ही न था। कोई दस मिनट के पश्चात् अन्दर से जनानी आवाज़ ने पूछा—क्या है? क्यों शोर मचा रहे हो?

मनिहार हैं। चूड़ियां बेचेंगे।

मालकिन सो रही हैं। बड़ी बाई काम से बाहर गई हैं। इस वक्त चूड़ियां नहीं लेंगे। यहां से जाओ।

वे मनिहार ऐसी आसानी से टलने वाले नहीं थे। गुलाब ने कहा—

बाजार में बिल्कुल नये ढंग की चूड़ियाँ आई हैं। यहां हम लोग हमेशा माल बेच जाते हैं, कभी इन्कार नहीं होता। आज ही क्या बात है बड़ी बी।

कुछ देर रुककर जनानी आवाज़ ने उत्तर दिया—तुम्हारी चूड़ियाँ लेंगी, मालकिन। हमें उससे क्या फायदा, जो मुफ्त में तकलीफ उठाकर उन्हें जगायें और अपने सिर पर बला लें। जब तुम हमेशा यहां आते रहते हो, तो तुम्हें यह भी मालूम होगा कि मालिक की ओर से इस दरवाजे के अन्दर किसी का जाना और यहाँ तक मालकिन का आना बिल्कुल बन्द है। भाई, हमें क्या पड़ी है कि हम झगड़े में पड़कर अपने सिर पर आफ़त मोल लें।

उम्मेद का माथा ठनका। उसने सोचा कि यह मामला तहकीकात के योग्य है और यह बुढ़िया भी काम की है। एक तो जरूरत से ज्यादा बोलती है और फिर हरएक काम में फ़ायदा सोचती है। फ़ायदा देखेगी

तो सब कुछ कर डालेगी। उसने कहा—

देखो बड़ी बी, नाराज़ न हो। हम लोगों के फ़ायदे में तुम्हारा भी फ़ायदा होगा। हमलोग तो हमेशा के आने वाले हैं। शायद तुम से कभी भेंट नहीं हुई। माल बिकेगा तो तुम्हारा भी हिस्सा होगा।

हां, मैं अभी महीने भर से नौकरी पर आई हूँ। मुझे पुराना रिवाज़ मालूम नहीं, पर देखो मैं खरी औरत हूँ। लागलपेट नहीं जानती। पीछे के झगड़े से बचती हूँ। मेरा हिस्सा पहले ही रख दो तो मालकिन को जगा दूँगी।

मंजूर है। दरवाजा खोलो। गुलाब ने कहा।

बुढ़िया ने दरवाजा खोल दिया। गुलाब और उम्मेद अन्दर चले गये तो बुढ़िया ने फिर दरवाजा बन्द कर दिया और उन्हें पास की एक कोठरी में ले गई। वहाँ जाकर उसने कहा—

देखो बेटा, मैंने बड़े जोखम का काम किया है। मुझे हुक्म है कि किसी को अन्दर न आने दो। किस्मत की बात है कि आज इस वक्त बड़ी बाई यहाँ नहीं हैं। वह बड़ी मूंजी हैं। अगर वह किसी को यहाँ आता देख ले, तो मुझे और आने वाले को कच्चा ही चबा जाए। वह आज शाम तक आने को कह गई है और ऊपर के कमरे में बाहर से ताला लगा गई है। जब तक वह आये, उससे पहले तुम्हें यहाँ से निकल जाना चाहिये। लाओ, मेरा इनाम, तो मैं तुम्हारी खबर ऊपर तक पहुँचा दूं।

उम्मेद बोला—

तुम तो कहती हो कि ऊपर ताला लगा है, फिर तुम वहाँ खबर कैसे पहुँचाओगी ? और जब वहां कोई जा नहीं सकता, तो खबर पहुं-चाने से भी क्या फायदा ?

बुढ़िया ने एक शैतानी हँसी हँसते हुए कहा—

तो बेटा, तुम समझते हो कि मैंने धूप में ही बाल सफेद किये हैं। वह बड़ी बाई है, तो मैं उसकी भी दादी हूँ। मैंने उस ताले की चोर-

ताली बनवा रखी है। जब वह मूंज़ी चली जाती है, तो मैं दरवाजा खोलकर उस बेचारी अभागिन से बातें कर लेती हूँ और उसका दुखड़ा सुन लेती हूँ।

उम्मेद ने उत्सुकता से पूछा—"वह अभागिन कौन है ?"

बुढ़िया बोली—वाह, खूब हो। कुछ दिये दिलाये बगैर ही सुराग लगाने लगे। अब इससे आगे इनाम लिये बिना मैं एक भी बात न कहूँगी।

दोनों ने देखा कि बुढ़िया घाघ है। वहाँ की परिस्थिति को देखकर दोनों के दिल में संदेह पैदा हो चुका था। उन्होंने समझ लिया कि बुढ़िया को कुछ भेंट दिये बिना काम न चलेगा। गुलाब ने जेब से एक चवन्नी निकाल बुढ़िया के हाथ पर रखी। बुढ़िया चवन्नी को देखकर एक दम चमक उठी—मुए मुंहजले, मुझे फ़क़ीर समझते हैं। निकलो यहाँ से। क्या मैं सिर्फ एक चवन्नी पर अपने मुंह पर कालख लगाऊंगी। काम बिगड़ता देखकर गुलाब ने एक रुपया जेब से निकाला। बुढ़िया शुक्ल देवता के दर्शन से कुछ तृप्त हुई। रुपया अन्टी में देती हुई बोली—खैर, इस वक्त यही सही। जब तुम्हारा माल बिक जायगा, तब और इनाम दे देना। अब मैं ऊपर जाकर उस छोकरी से पूछती हूँ क्या कहती है। जब तक मैं लौटकर न आऊँ तब तक तुम इस बगल वाली कोठरी में दुबके बैठे रहना, बाहर मत निकलना। नहीं तो तुम्हारी जान जायगी और मेरी नौकरी, क्योंकि साथ वाले मकान में रात का पहरेदार अब्दुल्ला रहता है। उसे मालिक बाबू का हुक्म है कि अगर कोई आदमी इजाजत के बगैर अन्दर घुसे तो पहले उसके सिर पर लाठी रसीद करो और फिर पूछो कि तू कौन है? देखना, इस कोठरी से बाहर मुंह न दिखाना, जब तक मैं आवाज़ न दूं।

बुढ़िया उन दोनों को कोठरी में छोड़कर पहले सदर दरवाजे की ओर गई और उसे बन्द कर दिया। फिर सीढ़ियों पर चढ़कर ऊपर गई और कपड़ों में छिपी हुई एक चाबी निकालकर ताले को खोला। ताला

खुलने की आवाज़ सुनकर उस व्यक्ति ने, जो अन्दर रहता था, दरवाजे के पास आकर पहले सूराख में से देखा कि कौन है, जब देखा कि बुढ़िया नौकरानी है तो अन्दर की सांकल खोल दी। बुढ़िया अन्दर चली गई और साँकल को फिर बन्द कर दिया।

अन्दर से जिस व्यक्ति ने सांकल खोली, उसे हम जानते हैं, परन्तु शायद शीघ्र ही पहिचान न सकें। वह श्यामा है, परन्तु इस श्यामा और उस श्यामा में बड़ा भेद है। वह श्यामा स्वतन्त्र मज़दूर थी, यह श्यामा भरूचा की कैदी थी। उस श्यामा के कपड़े मोटे थे, शरीर पर सजावट का कोई सामान नहीं था, पर इस श्यामा के शरीर पर बढ़िया कपड़े और सोने के गहने शोभायमान हो रहे हैं, तो भी वह श्यामा स्वस्थ थी, यह कृश है! उसकी आंखों में चमक थी, इसकी आंखों में डर है।

श्यामा बोली—वह चुडैल कब तक आने को कह गई है।

बुढ़िया ने कहा—उसे चुड़ैल मत कहो बेटी। वह दिल की बुरी नहीं है। उसकी तबियत तेज़ जरूर है और जुबान भी कड़वी है, पर बात तेरे ही भले की कहती है। वह शायद घण्टे भर में आयगी।

श्यामा ने पूछा—सदर दरवाजा तो बन्द ही है। चलो जरा नीचे तक घूम आयें, इस जेल की दीवारों से कुछ तो आज़ादी मिलेगी। मैं अब बहुत तंग आ गई। म रोज़ कहती हूँ, पर वह नहीं मानता। अगर और कुछ दिन तक ऐसा ही रहा तो म कुछ खाकर सो जाऊँगी या अपना सिर दीवार से पटककर मर जाऊँगी। अब मैं इस जेल में ज्यादा दिन तक नहीं रह सकती।

बुढ़िया बोली—अरी पगली, ऐसा नहीं कहते। (कुछ रुक कर) खैर, यह बात पीछे होती रहेगी। इस समय तो इसलिये आई हूँ कि तूने मुझ से कहा था कि ऐसे आदमी की तलाश कर दो, जो शहर को जानता हो और तुम्हारी खबर पहुँचाने का काम कर सके। दो मनिहार आये हैं। तुम जानती हो मनिहारों का काम ही शहर में घूमने का है। तुम चाहो तो मैं उन्हें तुम्हारे पास ला सकती हूँ।

श्यामा उत्सुकता से बोली—जरूर लाओ। मैं तो तुम से नित्य ही कहती हूँ कि किसी आदमी को मेरे पास लाओ, जो मुझे शहर की कोई खबर दे सके और मेरी खबर ले जा सके। उन्हें जल्दी बुला लाओ। देर क्यों कर रही हो?

बुढ़िया ने शैतानी ढंग से मुस्कराते हुए कहा—वाह, क्या जल्दी से कह दिया—जरूर लाओ। उन्हें अन्दर लाने से मेरी क्या हालत होगी, यह भी सोचा है। अगर बड़ी बाई आ गई तो? और अगर अब्दुल्ला को आहट हो गई तो?

श्यामा ने घबराकर कहा—तो फिर क्या कहती हो, आप ही कहती हो लाती हूँ, आप ही कहती हो नहीं ला सकती, मेरी कुछ समझ में नहीं आता।

क्यों समझोगी। मेरे मतलब की बात है न। अपने मतलब की होती तो समझ जाती। पहले कुछ इनाम हाथ पर रखो, तो जान पर आफत मोल लूं। नहीं तो मुझे क्या पड़ी है कि ओखली में सिर दूं।

श्यामा की आँखों में बुढ़िया के प्रति घृणा और द्वेष का भाव दिखाई दिया, पर इस समय उस भाव को दबाना ही उचित समझकर श्यामा कमरे में जाकर एक सन्दूकची में से दो रुपये निकालकर लाई और बुढ़िया के हाथ पर रख दिये।

(४)

मिल के आडीटर ने हिसाब की पड़ताल करके रिपोर्ट की है कि सालभर में कम-से-कम पाँच हजार का गबन हुआ है। उसने यह भी राय दी है कि यदि पिछले वर्षों के हिसाब की फिर से जाँच की जाय तो शायद उनमें भी गबन निकलेगा। इस पर मिल के सेक्रेटरी ने कलकत्ते से हिसाब के विशेषज्ञ बुलवाये हैं, जो ५ साल के हिसाब की पड़ताल कर रहे हैं। मि० भरूचा को उनके सामने अपराधी की तरह बैठकर प्रश्नों के उत्तर देने पड़ते हैं। अब तक कई बड़ी-बड़ी रक़मों की बनावटी रसीदें पकड़ी जा चुकी हैं और उनकी जिम्मेवारी खजानची

पर ही आती है। खजानची ने आक्षेपों का उत्तर देने के लिये पाँच दिन की मुहलत माँगी है।

आज कल भरूचा जुए में बहुत भारी बोल बोलता है। वह चाहता है कि किसी तरह वह रकम पूरी कर दे जो उसने सालभर में खाई है। वह जितना ही भारी बोल बोलता है और जितना ही जान तोड़कर खेलता है, उतना ही हारता है। उस हार के दुःख को भुलाने के लिये बोतल-पर-बोतल पीता है और फिर खेलता है और फिर हारता है।

आज तीसरा दिन है। हाजी नसीरअली के मकान पर भरूचा और हाजी सलाह कर रहे हैं। भरूचा ने अपनी दुरवस्था का वर्णन करके हाजी से सलाह माँगते हुए कहा—

मैंने इतने दिनों तक हर तरह से तुम्हारी मदद की। तुम्हारे जो काम फँसते रहे, उन्हें सुलझाता रहा। जहाँ तक हो सका, रुपये-पैसे से भी तुम्हारी स्कीमों में मददगार रहा, पर तुम्हें मालूम है कि मैं वह रुपया मिल के खजाने से ही लाया करता था। कई सालों तक मैं झूठी रसीदें डालकर रुपया खैंचता रहा। छोटी-छोटी रक़में होने से किसी को सन्देह न हुआ। इस बार कई कारणों से, जिन्हें तुम जानते ही हो, मुझे धन की आवश्यकता अधिक होने लगी। इधर जुए में भी हार-पर-हार होने लगी। इस समय यह हालत है कि लगभग मेरा पाँच हजार रुपये का गबन पकड़ा जा चुका है। या तो रुपया मिल के खजाने में दाखिल करूँ या गबन के मामले में पकड़ा जाऊँ। इस मामले की शोहरत चारों ओर फैल जाने से मुझे उधार पर रुपया मिलने की कोई आशा नहीं। ऐसी हालत में क्या करूँ ? तुम्हारे सिवा मेरा कोई ऐसा दोस्त नहीं जिससे मदद मांगूँ ? अब या तो कहीं से पाँच हजार रुपये दिलवाओ और या कोई और उपाय बतलाओ जिससे जान छूटे।

नसीरअली कुछ देर तक सोचता रहा। फिर बोला—भाई सचमुच तुम बड़ी मुसीबत में फँस गये हो। असल में बात यह है कि तुमने बड़ी-

बड़ी रकमों पर हाथ मारा और यह काम इसलिये करना पड़ा कि तुमने उस औरत को गले में बाँध लिया। जो लोग अय्यारी करते हों, उन्हें कभी औरतों के जाल में उलझना न चाहिये। औरतें और शराब ये दो ही अय्यारों और डाकुओं की शत्रु हैं; यही उन्हें दुश्मनों के चुंगल में फँसाया करती हैं। खैर, मैं बड़ा खुश होता अगर तुम्हारी कोई मदद कर सकता, पर अफसोस है, इस समय कुछ भी नहीं कर सकता। हाँ, एक राय जरूर दे सकता हूँ। मेरी राय है कि तुम इस तहकीकात के झमेले में न पड़ो और यहाँ से रफूचक्कर हो जाओ। भागे बिना तुम्हारा गुज़ारा नहीं। यदि नहीं भागोगे तो सात साल के लिये जेल की हवा खाओगे।

भरूचा बोला—भागने की बात तो मैंने भी सोची थी, पर श्यामा को छोड़ना असम्भव है। उसका क्या करूँ ?

हाजी बड़े उत्साह से बोले—भाई, दोस्त और किस समय के लिए होते हैं। अगर तुम भागने का निश्चय करो तो श्यामा को तुम मेरे पास छोड़ जाओ, क्या मैं दोस्ती का इतना भी हक़ न निभा सकूंगा ?

भरूचा के माथे पर त्योरी चढ़ गई। क्या वह हाजी को नहीं जानता था ? अगर बिल्ली कहे कि मेरे पास चूहे को धरोहर रख जाओ, तो कौन विश्वास करेगा और असल बात यह थी कि भरूचा—शराबी, जुआरी, मक्कार, भरूचा—श्यामा से सचमुच प्यार करता था। उसी के मोह में फँसकर उसने रुपया पानी की तरह बहाया और दलदल में फँसा, और अब उसी का मोह था, जो उसे भागने से रोक रहा था। उसने सिर हिलाते हुए कहा—

दोस्त, यह तो न हो सकेगा। मैं श्यामा को नहीं छोड़ सकता, उसके बिना जिन्दा नहीं रह सकता। तुम जानते ही हो कि आज तक भी वह मुझ से बिगड़ी हुई है। सीधे मुंह बात भी नहीं करती। मैंने उसे सख्त कैद में रख छोड़ा है, नहीं तो वह कभी की भाग गई होती, पर तो भी मेरे दिल की यह हालत है कि मैं उसके बिना नहीं जी सकता।

हाजी ने कहा—

तो उसे भी साथ लेते जाओ।

भरूचा सोचने लगा। बात तो ठीक है। अगर किसी तरह श्यामा को भी साथ ही ले भागूं तो जान छूट सकती है। पर अकेले यह काम कैसे हो सकेगा, किस उपाय से और कब भागना चाहिये और श्यामा को साथ जाने के लिये कैसे मजबूर करना चाहिये। इन सब विषयों पर दोनों दोस्तों में देर तक बातें होती रहीं।

(५)

बुढ़िया ने दरवाज़ा खोलकर उम्मेद को अन्दर कर दिया और कह दिया कि ज्यादा-से-ज्यादा आधे घण्टे तक वह वहाँ रह सकेगा। बुढ़िया ने यह भी कह दिया कि यदि इसी बीच में बड़ी बाई आ गईं तो उम्मेद को उस बगल वाली कोठरी में छुप जाना पड़ेगा, जिसमें पुराना कबाड़ पड़ा रहता था और जिस कोठरी को कभी नहीं खोला जाता था। बुढ़िया को इस सहायता के लिये बहुत बड़े इनाम की आशा दिलाई गई थी।

उम्मेद को वहाँ छोड़कर गुलाब हवेली से निकल गया और उस गली के बाहर कपड़े पर चूड़ियाँ फैलाकर बैठ गया। बुढ़िया ने भी ऊपर की मंजिल का ताला फिर से लगा दिया और चाबी अपनी अन्टी में रख ली। मकान के उस हिस्से में उम्मेद और श्यामा अकेले रह गये।

श्यामा और उम्मेद दोनों ही बदल गये थे। आज की श्यामा उस छोटी-सी कोठरी की श्यामा न थी। आज उसका शरीर बहुमूल्य कपड़ों और गहनों से लदा हुआ था। उस समय के मोटे और फटे हुए कपड़े उसे छोड़कर चले गये थे और अपने साथ ही उस समय की प्रसन्नता और निर्दोष सुन्दरता को लेते गये थे। श्यामा की सेहत बहुत गिरी हुई प्रतीत होती थी, चेहरे पर पीला रंग-सा पुत गया था और आँखों में निर्दोष ज्योति के स्थान पर करुणा का गीलापन झलकने लगा था।

उम्मेद में भी बड़ा परिवर्तन आ गया था। उसने दाढ़ी के बाल बढ़ाकर अपनी शक्ल कुछ रोबीली, परन्तु भूंडी बना ली थी। इस समय उसका मुसलमानी वेष था। वह पहले से अधिक उम्र का प्रौढ़ मनिहार दिखाई देता था। फिर भी दोनों को एक-दूसरे के पहिचानने में देर न लगी। दोनों ने एक दूसरे को देखा, तो जहाँ एक ओर हृदयों में प्रसन्नता की लहर उठी, वहाँ साथ ही बदली हुई दशा पर वेदना और एक-दूसरे की मनोवृत्ति के सम्बन्ध में सन्देह की कसक भी उत्पन्न हुई। दोनों ने एक-दूसरे को आशंका भरी आँखों से देखा। दोनों को एक-दूसरे की आँखों में सन्देह और उत्सुकता के चिन्ह दिखाई दिये।

जब उन्हें देखने वाली पराई आँखें ओझल हो गईं, तो थोड़ी देर के लिये दोनों स्तब्ध खड़े रहे। इससे पूर्व वह अकेले में नहीं मिले थे, कभी खुल कर बातें भी नहीं हुई थीं, हृदय की हृदय से मूक भाषा में बातें बहुत हुईं। आज इस सन्देहपूर्ण वातावरण में दोनों अकेले पड़ गये, तो यह न सूझता था कि बात कहाँ से प्रारम्भ की जाय। पूछने को बहुत कुछ था। उम्मेद तो मानो पूछने के लिये ही जी रहा था, परन्तु जब अवसर आया तो जिह्वा मानो तालुवे से चिपक गई। उसके लिये उस परिस्थिति को समझना भी कठिन हो रहा था। यह तो वह समझ गया कि श्यामा भरूचा की कैदी है, पर कहाँ तक वह स्वेच्छापूर्वक कैदी है, यह जानना उसके लिये कठिन हो रहा था।

कुछ क्षण तक दोनों चुपचाप एक-दूसरे की ओर देखते रहे। पहले श्यामा ने ही धड़कते हुए हृदय से मौन-मुद्रा को तोड़ा। कुर्सी की ओर इशारा करते हुए उसने उम्मेद से बैठने को कहा।

उम्मेद कुछ रूखे स्वर से बोला—

अभी नहीं! जब तक मुझे यह मालूम न हो जाय कि तू किस हैसियत से है और यह सब क्यों है, तब तक मैं बैठ नहीं सकता। श्यामा, तुझे मालूम नहीं कि मैं महीनों तक हस्पताल की खाट पर पड़ा तेरा ही ध्यान किया करता और तुझ से ही मिलने की प्रतीक्षा में जीता

था। जब वापिस आया तो तुझे न पाकर जो मेरी दशा हुई, उसे मैं ही जानता हूँ। यदि अब तक जीवित हूँ, तो केवल इसलिये कि तुझ से मिलकर यह जान लूँ कि तू कहाँ गई और कैसे गई ? बता, जल्दी बता। तू यहाँ किस हैसियत से है, और क्यों है ?

हरेक शब्द के साथ उम्मेद के स्वर में रूखापन बढ़ता गया और उसकी आँखों में उग्रता की झलक गहरी होती गई। श्यामा, जो पहले ही घबराहट से काँप रही थी, इस रूखेपन से बिल्कुल ही परास्त हो गई और 'हाय मेरी अम्मां' कहती हुई हाथों से सिर पकड़कर वहीं बैठ गई और बेहोश हो गई। उम्मेद श्यामा की ऐसी दशा देखकर उसके पास पहुँचा और अपने-आप को रूखेपन के लिये धिक्कारता हुआ उसे सचेत करने का प्रयत्न करने लगा। उसने उसे गोद में उठाकर चारपाई पर डाल दिया और रसोई से पानी लाकर उसके मुँह पर छिड़कने और मुँह में बूँद-बूँद टपकाने लगा। कोई पाँच-सात मिनट में श्यामा को हल्का-सा होश आया, तो उसने अपने सिर को गोद में अनुभव किया। उसे ऐसा भी प्रतीत हुआ कि जैसे कोई उसके माथे और सिर को आहिस्ता-आहिस्ता मल रहा हो और उसका नाम पुकार रहा हो। श्यामा ने उसे सुख-स्वप्न समझा और इस डर से कहीं स्वप्न टूट न जाय, आँखें बन्द ही रखीं।

परन्तु समय जा रहा था। उम्मेद डर रहा था कि कहीं ऐसा न हो कि आधा घण्टा समाप्त हो जाय और बात कुछ भी न हो। श्यामा को हिलता देखकर उसने उसके कान के पास मुँह लेजाकर कहा—

श्यामा, हमारे पास समय बहुत कम है। फिर न जाने कब मिलना हो। मैं तुमसे सुनना चाहता हूँ कि मेरे जाने के पीछे क्या हुआ और अब तुम किस परिस्थिति में हो। यदि होश हो तो उठो और मुझ से बातें करो।

श्यामा ने धीरे-धीरे आँखें खोल दीं। उम्मेद उसकी ओर ही देखता रहा था। दोनों की आँखें मिलीं तो श्यामा ने देखा कि उम्मेद

की आँखों से वह उग्रता और रुखाई जा चुकी थी, जिसे देखकर वह मूर्छित हो गई थी। अब उसे वहाँ अपने लिये प्रेम और सहानुभूति के चिन्ह दिखाई दिए। जैसे बाँध से रुका हुआ जल-प्रवाह रास्ता पाकर सौ गुने वेग से निकल जाता है, उसी प्रकार श्यामा का हृदय में भिंचा हुआ दुःख उम्मेद के हृदय में से सहानुभूति का मार्ग पाकर आँसुओं के रास्ते से बह निकला। श्यामा फूट-फूटकर रोने लगी।

कभी संभलकर, कभी रोकर और कभी हिचकियों के मध्य में से श्यामा ने उम्मेद को जो कहानी सुनाई, वह निम्नलिखित थी—

(६)

जब तुम्हारा दोस्त बशीर तुम्हें उठाकर हमारी कोठरी में लाया, तब हम दोनों के तो मानो प्राण सूख गये। हम दोनों का एकमात्र सहारा तुम बन गये थे। मां बेचारी रोकर कहा करती थी कि बेटी, मेरी डूबती नय्या को संभालने के लिये भगवान् ने मल्लाह भेज दिया है। जब तक तुम बाहर रहा करते, हम लोग तुम्हारी ही चर्चा किया करती। थोड़े ही दिनों में हम अनुभव करने लगी थीं कि मानो तुम हमारी हर एक संकट से रक्षा कर लोगे।

जब तुम्हें बेहोश और घायल हालत में देखा तो हमारे होश उड़ गये। मानो पैरों तले से जमीन निकल गई! मानो सिर पर वज्र गिर पड़ा। बुझे हुए दिलों और काँपते हुए हाथों से जैसी भी हो सकी, परिचर्या शुरू की। रात भर तुम मौत की ड्योढ़ी में पड़े रहे। जब कुछ चैन मालूम हुई, तब तुम्हारा दोस्त यह कहकर चला गया कि वह सुबह डाक्टर को लेकर आयगा।

सुबह जब हम डाक्टर की इन्तजारी कर रहे थे, तब किसी ने दरवाजा खटखटाया। मैंने जाकर दरवाजा खोला तो देखती हूँ कि पुलिस का एक दारोगा कुछ सिपाहियों के साथ खड़ा है। मै डर

गई। वह अन्दर आ गया। उस समय तुम बेहोश थे। मुझ से और मां से तुम्हारे बारे में वह तरह-तरह के सवाल करने लगा, जिनके हमने टूटे-फूटे जवाब दिये। हम उस समय दुःखी भी थे और डरे हुए भी। इस कारण किस सवाल का क्या जवाब दिया, यह भी मालूम नहीं। थोड़ी देर पीछे एक डोली-सी लिये चार-पाँच आदमी आ गये और उस पर डालकर तुम्हें अस्पताल ले गये।

तुम्हारे जाने के समय हम लोगों की जो दशा हुई उसका वर्णन करना कठिन है। मां बेचारी 'हाय बेटा' कहती हुई पछाड़ खाकर गिर पड़ी। मुझे भी कोई सुध-बुध न रही। दरवाजे के साथ सिर टिकाये न जाने कब तक बेहोशी की हालत में खड़ी रही। मानो किसी जल में डूबते हुए को तैरती हुई लकड़ी का सहारा मिल जाय और जब वह आदमी उसके सहारे से किनारे के पास पहुँचने लगे, तो पानी का एक ज़ोर का धक्का आये और उस लकड़ी को छीन ले जाय। उस समय जो दशा उस व्यक्ति की होगी, हम दोनों की तुम्हारे जाने के समय वही हो गई। मां की मानो कमर टूट गई और मेरा तो सर्वस्व लुट गया।

उस दिन हमारे यहाँ चूल्हा न जला। मां स्वयं रोती थी और मुझे पुचकारती थी। मैं भी रो रही थी और माँ को शान्त करने का यत्न कर रही थी। हमें यह खबर पुलिस वालों से मिल चुकी थी कि तुम्हारा दोस्त बशीर गिरफ़्तार हो चुका है। हमें सूझता नहीं था कि क्या करें और किससे कहें। इसी तरह रोते-कलपते वह दिन गुज़र गया और शाम का समय आ गया।

शाम के समय कुछ अन्धेरा हो जाने पर, फिर किसी ने दरवाजा खटखटाया। हमने डर के मारे दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया था। मैं उठकर गई और दरवाजे की दरार में से झाँककर देखा कि कौन है ? दो तीन भले आदमी सफेद कपड़े पहने हुए खड़े दिखाई दिये। मैंने दरवाजा न खोलते हुए अन्दर से ही पूछा—

तुम लोग कौन हो और क्यों आये हो ?

उनमें से एक ने जवाब दिया—

हम लोग मिल की ओर से आये हैं। हमारा एक लाइनजाबर उम्मेदसिंह घायल हो गया है। उसकी इच्छानुसार मिल के सेक्रेटरी ने हमें भेजा है। तुम लोगों के लिये, उम्मेदसिंह की मजदूरी में से मिल की ओर से हर तरह का प्रबन्ध किया जायगा और तुम्हें उम्मेदसिंह का मकान रहने को दिया जायगा।

हम दोनों इससे पूर्व बिलकुल निराशा की दशा में थीं। न हमारे पास मकान का किराया देने को पैसे थे और न खाने के लिये अन्न। मां अशक्त हो गई थी और खजानची के डर के मारे मिल में न जाती थी। तुमसे अपना कष्ट कहते लज्जा आती थी। हम बिलकुल कंगाल हो रहे थे। तुम्हारा सहारा पाकर अपने को समर्थ समझने लगे थे। जब तुम अधमुई दशा में हस्पताल चले गये, तो एक ओर दीन-दशा और दूसरी ओर तुम्हारा वियोग। हम लोग निराश हो चुके थे कि उस आदमी की बात से हृदय में आशा का संचार हो गया। तुमने हमारी फिक्र की, इस बात से हृदय में सन्तोष हुआ और यह भी आशा हुई कि तुमसे मिलना-जुलना होता रहेगा। मैंने उसकी बात माँ से कही। माँ प्रसन्न हुई। उसने मुझसे कहा कि अच्छा तो है। उम्मेद को मैं बेटा मान चुकी हूँ। उसके घर पर रहने में क्या हर्ज है। फिर और कोई सहारा भी तो नहीं। जा उनसे कह दे कि हम तैयार हैं।

मैंने दरवाजे पर जाकर मां की कही हुई बात दुहरा दी। उनके मुखिया ने कहा कि तुम लोग सामान बाँधकर तैयार रहो। हम कोई घण्टे भर में आएँगे और तुम लोगों को ले जाएँगे। वे चले गये और हम दोनों कपड़े-लत्ते सम्भालने में लग गये। वहाँ धरा ही क्या था। कुछ कपड़े थे, वह एक गठरी में बाँध लिये; कुछ बरतन थे, उन्हें एक फटे हुए बोरिया में डाल दिया और आधे घण्टे में तैयार होकर बैठ गये।

जब वे लोग लौटकर आये, तब अच्छी तरह अन्धेरा छा चुका था मैंने दरवाजा खोल दिया। इस बार वे दो झल्ली वालों को भी लेते आये थे हमारी गठरियाँ उठाकर उन्होंने झल्ली वालों के सिर पर रख दीं और चलने को कहा। अब तक हम लोगों के दिल में कुछ उत्साह था, पर जब उस कोठरी को छोड़ने का समय आया तो दिल पर मानो किसी ने धक्का मारा। वह कोठरी छोटी थी, उसी में मैं मां के साथ इतने वर्षों तक रही, उसी में तुम से परिचय हुआ। उसी की एक एक ईंट पर जीवन की याद लिखी हुई थी। मैं छोड़ने के पहले उस कोठरी को देखने लगी तो मुझे उसमें हर तरफ तुम्हारी तस्वीर दिखाई देने लगी। दरवाजे से तुम आया करते थे; खाट के पास तुम बैठा करते थे, चूल्हे के पास आकर मुझसे कुछ-न-कुछ पूछा करते थे; हर तरफ तुम दिखाई दे रहे थे। उस कोठरी को छोड़ना मुझे बुरा प्रतीत होने लगा। मैंने माँ का हाथ पकड़ लिया और कहा—माँ, हम कोठरी को न छोड़ेंगे। हम इनके साथ न जायेंगे। मां आश्चर्यान्वित होकर मेरा मुँह ताकने लगी। उसने समझा लड़की पागल हो गई। भला, उस कोठरी में अब कैसे रहा जा सकता है। जब मिल वाले मेहरबानी करने को तैयार हैं, तो उससे लाभ क्यों न उठाया जाय? मां ने मुझे झिड़ककर कहा—

पगली हो गई क्या? यहां कैसे रहा जा सकता है? चल, सीधी तरह, नहीं तो रह तू यहीं, मैं तो जाती हूँ।

इस क्रोध से मुझे बड़ा दुःख हुआ। मेरी आँखों से आँसुओं की धारा बह निकली और मैंने कपड़े से अपना मुँह छिपा लिया। जी में तो आया कि जाने से इन्कार कर दूँ, कह दूं कि तुम जाओ, मैं नहीं जाती, पर क्या करती। बेचारी बुढ़िया माँ को अकेली कैसे छोड़ती और स्वयं भी अकेली कैसे रहती? टूटी हुई खाटों और दो-एक ऐसी और चीजों को वहीं छोड़कर हम दोनों उन लोगों के पीछे-पीछे उस मीठी याद से भरी हुई कोठरी को छोड़कर चल दिए।

गली से निकलकर हम लोग सड़क पर आये। सड़क पर एक ताँगा खड़ा था। उस पर हमें बिठा दिया गया और आगे की ओर उनमें से एक आदमी बैठ गया। हम से सामान के बारे में उन्होंने कहा कि वह मजदूरों के सिरों पर ही पहुँच जायगा। हमें मालूम था कि मिल के क्वार्टर पास ही हैं, दूर नहीं। ऐसी दशा में ताँगे की सवारी हमारी समझ में नहीं आई। परन्तु उस समय तो हम सोलहों आने उनके वश में थे। क्या करते? सामान को पीछे छोड़ना हमें बहुत ही अखर रहा था, पर जब उन लोगों ने आश्वासन दिलाया कि दूसरा ताँगा करके सामान शीघ्र ही ठिकाने पर पहुँचा दिया जायगा, तो हम लोग चुप हो गये। मां की क्या हालत थी, यह मुझे मालूम नहीं, पर मेरा हृदय तो उस समय जोर से धक-धक कर रहा था।

मेरी घबराहट और भी अधिक बढ़ने लगी, जब मैंने देखा कि ताँगा मिल की ओर न जाकर दूसरी ओर को चला। मैंने मा का इस ओर ध्यान खींचा, पर मां कुछ ऐसी घबरा और सहम-सी गई थी कि कुछ न बोली और मेरा हाथ दबाकर चुप रहने को कहा। मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ दशा में बुत-सी बनी बैठी रही। ताँगा कई सड़कों का चक्कर काटता हुआ एक गली के सामने आ खड़ा हुआ। जो आदमी आगे बैठा था, उसने गली के सामने हम लोगों से उतर जाने के लिये कहा। हम दोनों तांगे से उतरकर उसके पीछे-पीछे चल पड़ीं और इस मकान के दरवाजे पर पहुँच गईं। दरवाजा खुला हुआ, पर अन्दर बिल्कुल अन्धेरा था। हम दोनों बाहर ही ठहर गईं और अन्दर पांव रखने से इन्कार कर दिया। इस पर जो कुछ हुआ, उसे याद करके दिल काँपता है। साथ के आदमी ने मुझ से कहा—चलो, इस घर में तुम्हारे रहने का इन्तजाम किया गया है। मैंने डरकर माँ का हाथ पकड़ लिया था। मा का शरीर हवा से हिलती हुई लता की तरह कांप रहा था। दोनों पत्थर की मूर्तियों की तरह उसी जगह गड़ गईं। समझ में नहीं आता था कि क्या करें। पुकारें तो किसे? जायें तो किधर?

हम दुविधा की हालत में थीं कि उस आदमी ने मेरा दाहिना हाथ ज़ोर से पकड़कर अन्दर की ओर खींच लिया। मैंने तो माँ का हाथ पकड़ा हुआ था। मैंने समझा था कि उससे कुछ सहारा मिलेगा, पर मैंने देखा कि माँ को दूसरे आदमी ने पकड़ लिया है और उसे बाहर की ओर घसीटा जा रहा है। दोनों इकट्ठी ही चिल्लाईं, क्योंकि दो ओर खिचने से हमारे हाथ भी एक-दूसरे से छूट गये थे। हमारी चिल्लाहट किसी ने सुनी या नहीं यह मालूम नहीं, क्योंकि एक क्षणभर में हम दोनों के बीच में इस हवेली का बड़ा दरवाज़ा आकर खड़ा हो गया। मैं अन्दर को घसीट ली गई और माँ बाहर को, बीच में दरवाज़ा बन्द करा दिया गया। माँ की एक तीव्र चीख़ मेरे कानों में गूँज रही थी, जब बाहर की दुनिया मेरे लिये समाप्त-सी हो गई। दरवाज़ा बन्द हो जाने पर मैं रोती चीख़ती और सिर पीटती हुई घसीटकर इस स्थान पर ला डाली गई, जहाँ तुम मुझे देख रहे हो।

उम्मेद की दशा इस वृत्तान्त को सुनते हुए अजीब हो रही थी। उसे क्रोध आ रहा था, जिससे दाँत भिच रहे थे, हाथों की मुट्ठियाँ जोर से बँध रही थीं। परन्तु समय बचाने के लिये अब तक वह चुपचाप सुन रहा था।

अब न रह सका। उसने पूछा—

माँ का क्या हुआ ?

श्यामा ने रोते हुये उत्तर दिया—कुछ पता नहीं कि दुष्टों ने माँ के साथ क्या सलूक किया ?

तुम्हारे साथ यह काण्ड किसने किया ?

मैं अभी बताती हूँ। यहाँ मैं लगभग बेहोशी की हालत में पहुँची थी। माँ के वियोग और खँचातानी ने मुझे अधमुआ कर दिया था। मुझे मालूम नहीं कि रातभर क्या हुआ, पर जब मैं सुबह उठी तो मैंने अपने को इस चारपाई पर और इसी विस्तर पर पड़ा हुआ पाया। मेरे पास उस कुर्सी पर मिल का खजानची भरूचा बैठा हुआ था।

भरूचा के नाम पर उम्मेद श्यामा को छोड़कर उठ खड़ा हुआ, मानो उसके शरीर में बिजली-सी दौड़ गई हो और जलती हुई आँखों से श्यामा को देखता हुआ बोला—तो तब से तू भरूचा के पास है। यह सब कपड़े और सजावट का सामान भरूचा का है। तू भरूचा की है, बस मुझे इतना ही देखना था और इतना ही सुनना था। अब मैं जाता हूँ।

यह कहकर उम्मेद दरवाजे की ओर बढ़ा। श्यामा, जो उम्मेद की गोद में सिर रखे, आँसुओं के साथ अपना वृत्तान्त सुना रही थी, इस आकस्मिक धक्के से पहले तो किंकर्त्तव्यविमूढ़-सी रह गई, पर जब उम्मेद जाने को उद्यत् हुआ, तो उसने उठकर उसका हाथ पकड़ लिया और करुणा स्वर में कहा—

मेरे नाथ, मेरी अधूरी कहानी सुनकर न जाओ। मेरी पूरी कहानी सुन लो, फिर मेरे लिये जो फैसला दोगे, मंजूर करूँगी। अगर बेकसूर समझो, छुड़ाकर ले जाना और अगर दोषी समझो तो अपने हाथ से मारते जाना, पर इस नरक में मुझे अब इसी हालत में छोड़कर न जाओ।

कहानी पीछे सुनूँगा, पहले मेरे एक सवाल का जवाब दे। क्या तू अभी पवित्र है, या भरूचा ने तुझे अपवित्र कर दिया।

श्यामा कुछ कहना चाहती थी कि दरवाजे के खटखटाने का शब्द हुआ। उम्मेद ने जलती हुई आँखों से श्यामा की ओर देखकर कहा—मेरे सवाल का जवाब जल्दी दे। मालूम नहीं फिर किस हालत में मुलाकात हो।

दरवाजे पर धड़ाधड़ धक्के पड़ रहे थे। श्यामा के होश गुम हो रहे थे। उम्मेद ने उसके कन्धे को झिझकोर कर कहा—जवाब दे, नहीं तो अनर्थ हो जायगा।

श्यामा के शरीर से पसीना बह रहा था। पांव थर-थर कांप रहे थे। लड़खड़ाती जबान से बोली—पर मैं तो लाचार थी, कैदी थी, वह शराब पीकर आया और मुझ अचेत को दबा लिया…।

बस और कुछ न बोल सकी। सिर में चक्कर आया, वहीं गिर गई। दरवाज़े पर कुहराम मचा हुआ था। दो जनानी आवाजें पुकार रही थीं और धक्के-पर-धक्का लग रहा था। उम्मेद को उस समय और कुछ न सूझा, वह उसी पुराने सामान से भरी हुई कोठरी में घुस गया, जो नौकरानी ने बतलाई थी। एक पुराने बक्स के पीछे दुबक-कर बैठ गया। जिस कमरे में श्यामा और उम्मेद बातें कर रहे थे, यह कोठरी इसके बगल में ही थी, परन्तु इसका दरवाज़ा दाईं ओर के बरा-मदे में से होकर गया था।

(७)

देर तक दरवाज़े पर खटपट जारी रही। उसके बाद उम्मेद को ऐसा प्रतीत हुआ कि कोई मर्द भी आ पहुँचा और उसने ज़ोर-ज़ोर के कुछ धक्के लगाये। कोई १५ या २० मिनट तक यही सिलसिला जारी रहा, जिसके पीछे उसे प्रतीत हुआ कि जैसे कोई दीवार पर से कूदा और अन्दर से सांकल खोली। नौकरानी जाकर पहरेदार को बुला लाई थी और वह दीवार पर से कूदकर अन्दर पहुँच गया। नौकरानी का विचार था कि बड़ी बाई दो घण्टे में लौटकर आएगी, पर वह आधे घण्टे में ही आ पहुँची। उसे देखकर नौकरानी काँप गई, पर होश कायम रखे। वह समझती थी कि श्यामा ने दरवाज़ा अन्दर से बन्द कर रखा होगा। इसलिए मालकिन को एक मन-गढ़न्त कहानी सुनाती हुई उसके साथ चली। हुज़ूर के जाने के पीछे लड़की ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने और दरवाज़ा खटखटाने लगी। मैं ऊपर गई और बाहर से पूछा तो कहने लगी—दरवाज़ा खोलो, मैं बाहर जाऊँगी। मैंने कहा—बेटी, मैं दरवाज़ा कहाँ से खोलूँ, मेरे पास चाबी कहाँ है। मालकिन आएँगी तो खोलेंगी। पर वह कब सुनती थी, शोर मचाती ही रही। फिर बोली—अच्छा आ जाय तेरी मालकिन तो दोनों को मजा चखा-ऊँगी, दरवाज़ा अन्दर से बन्द कर लूँगी और किसी को नहीं घुसने दूँगी। हुज़ूर लड़की बड़ी मुँहजोर है। क्या किया जाय ?

दरवाज़े पर पहुँचकर बड़ी बाई ने कमर से ताली का गुच्छा निकाला और चाबी लगाकर ताला खोला, धक्का दिया तो, दरवाज़ा अन्दर से बन्द था। जिस कमरे में श्यामा सोती थी उसके और दरवाज़े के बीच में एक खुला दालान था और कमरे के सामने एक बरामदा। एक तो दूरी काफ़ी और फिर दरवाज़े के खटखटाने का शब्द, बड़ी बाई को अन्दर की आहट सुनाई न दी।

दरवाज़ा खुलने पर बड़ी बाई और नौकरानी अन्दर घुसीं और कमरे में गईं, तो श्यामा को बेहोश पड़े हुए पाया। बड़ी बाई घबराई कि कहीं ज़हर खाकर तो नहीं लोट गई, क्योंकि श्यामा प्रायः मर जाने की धमकी देती रहती थी। पास जाकर नब्ज़ और आँखों की पुतली उठाकर देखा तो ज़रा तसल्ली हुई, क्योंकि हालत खराब नहीं थी। पानी के कुछ छींटे डालने और हवा करने से श्यामा को होश आ गए।

यह बड़ी बाई भरूचा की ओर से श्यामा की अधिष्ठात्री थी। उसका काम श्यामा को गँवार से शहरी बनाना, उसे फुसलाकर भरूचा के अनुकूल बनाना और काबू में रखना था। वह ज़ुबान की बहुत मीठी दिल की बेतहाशा स्याह और पूरी कुट्टनी थी।

होश आने पर श्यामा ने चारों ओर देखा तो दृश्य बदल चुका था। उम्मेद की जगह बड़ी बाई, नौकरानी और भयानक रूप वाला चौकीदार दिखाई दिए। उसने एक लम्बे साँस के साथ फिर से आँखें बन्द कर लीं। उन लोगों ने उठाकर श्यामा को पलँग पर डाल दिया। नौकरानी उसे हवा करने लगी। बड़ी बाई नौकरानी को हुक्म देकर अपने कमरे में चली गई और जाते हुए बाहर का ताला लगाती गई।

बड़ी बाई के सुपुर्द भरूचा ने दो काम कर रखे थे। एक तो उसे श्यामा पर पहरा रखना पड़ता था और दूसरे वह उसे भरूचा की ओर से नरम करती रहती थी। श्यामा भरूचा की कैदी थी। जेल में बन्द होने पर कुछ दिन तो उसने बड़ा उत्पात मचाया। रोई-धोई और

भरूचा को बुरा-भला कहा, परन्तु अन्त में हारकर चुप हो जाना पड़ा। सीधी-सादी अनपढ़ स्त्री थी, चालबाजियों से अपरिचित और अभिनय-कला से अनभिज्ञ थी। बड़ी बाई हृदय की बड़ी काली, परन्तु मुँह की खूब मीठी सिद्धहस्त अभिसारिका थी। उसने मधुर बातों से श्यामा को बहुत कुछ वश में कर लिया था। श्यामा उसे भरूचा के बलात्कार के विरुद्ध अपनी ढाल समझती थी।

श्यामा ने भरूचा के जाल का बहुत दिनों तक सामना किया। वह उसके वश में नहीं आई, परन्तु एक बार बड़ी बाई ने सिर दर्द की दवा का बहाना करके शराब पिला दी। शराब की मस्ती में बेचारी सुध-बुध और भलाई-बुराई को भूलकर भरूचा के मायाजाल में फँस गई। अगले दिन उसके हृदय में बड़ा पश्चात्ताप हुआ, परन्तु लाचार थी। सोहबत बुरी चीज होती है। जो काम भरूचा का बलात्कार या धमकियाँ न कर सकीं, वह बड़ी बाई की मीठी बातों ने कर दिया। श्यामा में बुराई के प्रतिरोध की जो शक्ति थी, वह निर्बल होने लगी। वह इस निर्बल मनोवृत्ति की दशा में कई बार भरूचा के मायाजाल में फँस गई, परन्तु अब भी उसका हृदय स्वाभाविक भलाई-बुराई से शून्य नहीं हुआ था, वह खाली समय में अपनी दशा पर पछताती, दुःखी होती और खूब रोती थी। जेल से उसका दिल ऊब गया था। पिंजरे को तोड़कर भागने के उपायों पर बात करती, तो दिल डरने लगता, क्योंकि असमर्थ थी। उसके चारों ओर ईंट और गारे की जबर्दस्त जंजीरें कसी हुई थीं।

यों तो निरन्तर ही उसके हृदय में दुःख और वेदना की ज्वाला जलती रहती थी, परन्तु कभी-कभी वह ज्वालामुखी की तरह फूट पड़ती थी। उस समय वह पागल-सी हो जाती थी और कभी रोती, कभी हँसती, कभी सिर पटकती और कभी बेहोश हो जाती। पांच-सात रोज में एक बार श्यामा की यह दशा हो ही जाती थी, इस कारण बड़ी बाई को आज उसे बेहोश पड़ी देखकर कोई आश्चर्य न हुआ।

बड़ी बाई के चले जाने पर बूढ़ी नौकरानी ने श्यामा के कान में मुँह लगाकर पूछा--

वह आदमी कहाँ है ?

श्यामा ने हाथ के इशारे से बतला दिया।

अब उसे कैसे निकाला जाय ?

अभी रहने दो, रात में देखा जायगा।

बुढ़िया चिन्ता में पड़ गई। अगर कहीं बड़ी बाई उधर जा निकली तो सिर ही कटवा देगी। पर किया भी क्या जाय ? वह मुआ इतनी देर तक क्यों बातें करता रहा ? वह मुंहजली इतनी जल्दी क्यों वापिस आ गई ? मेरी ही क्या अक्ल मारी गई थी कि थोड़े से लोभ से जान पर आफ़त मोल ले ली। बुढ़िया देर तक ऐसे विचार करती रही।

(८)

आज भरूचा नित्य की अपेक्षा कुछ पहले ही आ गया। उसके आने पर नौकरानी उठकर चली गई और भरूचा और बड़ी बाई श्यामा के पास रह गये। आज भरूचा के चेहरे पर घबराहट के चिह्न दिखाई दे रहे थे। मिल के रुपयों के गबन का अभियोग उस पर लग चुका था। उसके दोस्त हाजी ने उसे सलाह दी थी कि सिवा भागने के कोई चारा नहीं। भरूचा ने श्यामा के पास आने से पूर्व बड़ी बाई को सारी स्थिति समझाते हुए कहा कि श्यामा को साथ भगाने के लिए राजी कर लो। श्यामा तो बड़ी बाई की सोने की चिड़िया थी, वह थी तो बड़ी बाई का रोजगार लगा हुआ था। वह भागने का समाचार सुनकर पहले तो बहुत घबराई, परन्तु जब भरूचा ने उसे आश्वासन दिलाया कि श्यामा को भगाने के लिए राजी कर लेने पर उसे बहुत बड़ा इनाम मिलेगा और जहाँ दूसरी जगह बसेंगे, वहाँ भी उसे बुला लिया जायगा, तब वह राजी हो गई।

दोनों आदमी श्यामा के पास आकर कुर्सियों पर बैठ गये। श्यामा उस समय पूरे होश में थी। भरूचा की सूरत देखकर वह काँप गई। वैसे ही

काँप गई, जैसे कैदी जेलर की सूरत देखकर काँप जाता है। शराब, जुआ और दुराचार ने भरूचा के सुन्दर चेहरे को विकृत बना दिया था। उस पर पाप की रेखायें स्पष्ट ही खिची हुई दिखाई देती थीं। वे रेखायें डर और घबराहट से और भी अधिक गहरी हो गई थीं।

बातचीत का सिलसिला बड़ी बाई ने आरम्भ किया। उसने अपने स्वर को अधिक-से-अधिक मीठा बनाकर कहा——

बेटी, बाबू जी का दूसरी जगह तबादला हो गया है। उन्हें बम्बई जाना पड़ेगा। तुझे भी उनके साथ जाने के लिए तैयार हो जाना चाहिए।

श्यामा लेटी थी, उठकर बैठ गई। भरूचा जायगा, इस खबर से उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। साथ ही उसने सोचा कि मैं उसके साथ नहीं जाऊँगी, तो स्वतन्त्रता का रास्ता निकल आयगा। उसने उत्तर दिया——

मैं कहीं जाना नहीं चाहती। वह जाते हैं, तो जायें, मैं यहीं रहना चाहती हूँ। मैं इतने दिनों से कह रही हूँ, मेरी माँ की तलाश कर दो। कोई तलाश करके नहीं देता। मैं उसे तलाश करके उसी के पास रहूँगी। मैं बम्बई या किसी दूसरी जगह नहीं जाऊँगी।

बड़ी बाई ने देखा कि लड़की सीधी बात से रास्ते पर न आएगी। उसने दूसरा पैंतरा बदला। उसने कहा—

अरी बावली, तू तो बिलकुल नासमझ है। क्या तू समझती है कि बाबूजी के जाने पर तू आजाद हो जायगी। यह तो तेरा भ्रम है। उनके जाने पर भी तू यहीं रहेगी, क्योंकि वह बीच-बीच में आते रहेंगे, और तुझसे मिलते रहेंगे और यह भी तो सोच कि अब तू छूटकर जा कहाँ सकती है ? तू अब किसी के काम की नहीं रही। क्या माँ तुझे अपने पास रहने देगी ? क्या अब तू दुनियाँ में जाकर मुँह दिखा सकती है ? अगर तू बाहर जाकर मुँह दिखाएगी, तो तेरी बिरादरी तेरे मुँह पर थूकेगी, और तुझे जाति से अलग कर देगी। जिन पर तू भरोसा करती है, वह तुझे पापिनी का दाग़ लगाकर कुत्तों से नुचवानें को

तैयार हो जाएँगे, अब तो तेरे लिये सिवा बाबूजी के कोई ठिकाना नहीं।

श्यामा का क्रोध बढ़ रहा था। वह चिल्लाते हुए स्वर में भरूचा की ओर देखती हुई बोली—

तो तूने मेरी यह हालत क्यों की ? मेरी मां से अलग करके मुझे यहाँ क्यों कैद कर दिया ? अपनी गन्दी हवस को तृप्त करने के लिये मुझे क्यों गिरा दिया ? अरे दुष्ट, तूने मेरा कुछ भी न छोड़ा। न जिस्म छोड़ा, न इज्जत छोड़ी। तूने मुझे न दीन का रखा, न दुनिया का। हाय ! अब मेरी माँ भी मुझे अपने पास न रख सकेगी। हाय, जो मुझे चाहते थे, वह भी अब मुझसे घृणा करते होंगे। अरे पापी, यह तूने क्या किया ? मुझे बर्बाद कर दिया। हा ! मैं तो जीते-जी मर गई।

श्यामा का गला भर आया और आंखों से आंसू जारी हो गये। वह आगे कुछ न कह सकी और सिर पर हाथ रखकर रोने लगी।

भरूचा एक शैतानी मुस्कराहट के साथ बोला—

अब रोने से क्या फायदा। जो होना था वह हो गया। अगर पहले ही मेरी बात मान ली जाती तो मुझे इतना बखेड़ा न करना पड़ता। हड़ताल, मारपीट, मुकदमा यह सब इसीलिये करना पड़ा कि तू और तेरी मां सीधी तरह मेरी बात को न मानीं। उससे सबक ले और सीधी तरह मेरी बात मान ले। मैं जो चाहता हूँ, वह करके रहता हूँ। फिर चाहे उसमें मुझे कैसे ही उपाय काम में लाने पड़ें। पाप और पुण्य यह शब्द मेरे लिए कोई कीमत नहीं रखते।

भरूचा की बात को काटती हुई बड़ी बाई बोली—

बेटी, अब रोने-धोने से क्या होगा। जो होना था, सो तो हो गया। और बुरा भी क्या हुआ ? बाबू जी ने तुझे कोई तकलीफ़ तो नहीं दी और न आगे देंगे। तू रानियों की तरह रहती है और ऐश

उड़ाती है। यहाँ से छूटकर क्या फ़कीरी करेगी ? यह तेरा पागलपन है। बाबू जी के साथ जाने ही में तेरा कल्याण है।

श्यामा ने कहा—

तुम मुझे बच्चों की तरह बहकाना चाहती हो। एक ओर तो कहती हो कि बाहर जाने से लोग मुझ पर थूकेंगे और दूसरी ओर मुझे बाहर ले जाने की बात पेश करती हो। जब मैं बाहर जाऊँगी, तब क्या लोग मुझे न देखेंगे ? और यदि कहीं मां मिल गई तो वह कितनी दुःखी होगी। ना, मैं कहीं बाहर न जाऊँगी। मैं अपने कलंकी मुख को यहीं दफना दूँगी।

बड़ी बाई सान्त्वना देती हुई बोली—

बेटी इतनी मत घबरा। यहाँ से ले जाने में तुझे कोई भी न देख पायगा। कल रात को जब अन्धेरा खूब गहरा हो जायगा, तब चुपके-से बन्द डोली में तुझे निकाल ले जायंगे। उस वक्त तुझे कोई न देख सकेगा। हम तीनों के सिवा इस बात को कोई भी नहीं जानता। तू बगैर किसी रुकावट के इस बन्द हवेली में से छूटकर खुली हवा में चली जायगी।

हम तीनों के सिवा इस बात को कोई भी नहीं जानता। इस वाक्य ने श्यामा को याद दिला दिया कि कोई चौथा व्यक्ति भी है, जो उनकी बातों को सुन रहा है। उसे कोठरी में बन्द उम्मेद की याद आ गई। उसके साथ ही यह भी विचार मन में दौड़ गया कि मौका तो अच्छा है, एक बार इस जेल से निकल बाहर जाऊँगी तो शायद छुटकारे का कोई उपाय भी निकल आवे। कुछ भी हो, इस मामले को लटकाये रखना अच्छा है, ऐसा सोच कर श्यामा ने कहा—

अच्छा, मैं इस बात पर विचार करके सुबह जबाब दूँगी।

भरूचा ने बाई की ओर देखा। उसने इशारे से उत्तर दिया कि ठीक है, कोई हर्ज नहीं।

भरूचा ने प्रत्यक्ष में कहा—

खैर, सुबह सही, पर तैयारी पूरी रहे, क्योंकि यहाँ से जाना तो होगा ही।

भरूचा के जाने के बाद बड़ी बाई थोड़ी देर तक श्यामा को पुचकारती और दिलासा देती रही· फिर यह कहती हुई कि अच्छा, अब सो जा बेटी, खुदा चाहेगा तो सुबह फिर मिलेंगे, वहाँ से उठ गई। जाती हुई बाहर का ताला लगाती गई।

सन्नाटा हो जाने पर बूढ़ी नौकरानी दबे पांव आई, अन्टी से चाबी निकाल कर ताला खोला और श्यामा के पास गई। उसे आता देखकर उम्मेद, जो श्यामा की चारपाई के पास कुर्सी पर बैठा बातें कर रहा था, उठ खड़ा हुआ। नौकरानी ने हाथ पसारकर दबी आवाज़ से कहा—

बेटी, मेरा इनाम।

श्यामा ने गले से उतारकर सोने का हार उसके हाथ पर रख दिया।

बुढ़िया ने फिर उम्मेद की तरफ हाथ पसारा। उम्मेद ने जब में हाथ डाला, तो खाली थी। वह कुछ अचकचा गया। श्यामा ने ताड़ लिया और फौरन हाथ से एक सोने की चूड़ी निकालकर बुढ़िया के हाथ पर रख दी बुढ़िया ने आशीर्वाद देते हुए, उम्मेद को बाहर चलने का इशारा किया।

(६)

रात आधी के लगभग जा चुकी थी, जब एक खाली बन्द डोली उस मकान के सामने आकर खड़ी हुई, जिसमें भरूचा ने श्यामा को कैद कर रखा था। गली में ऐसा अन्धेरा था, मानो आकाश पर स्याही पुती हो। भरूचा ने मकान के अन्दर जाकर देखा तो श्यामा उसके साथ चलने को बिल्कुल तैयार खड़ी थी। आज सुबह श्यामा ने बड़ी बाई से कह दिया था कि वह खजानची बाबू के साथ चलने को तैयार है। भरूचा को इस

से बड़ा आनन्द हुआ। उसने भागने की पूरी तैयारी कर ली थी और अब श्यामा के लिए पालकी लेकर आ पहुँचा। श्यामा पहले से ही तैयार थी। भरूचा के साथ होली।

दरवाज़े से बाहर आकर श्यामा डोली में बैठ गई। भरूचा तब तक खड़ा रहा, जब तक कहारों ने डोली उठाई। जब वे लोग डोली को उठाकर चल दिये तो भरूचा मकान के पहरेदार को डोली के साथ चलने की आज्ञा देकर स्वयं मकान में पड़े हुए सामान के बारे में नौकरों को निर्देश करने के लिए दरवाज़े के अन्दर जाने लगा। अभी अन्दर पाँव रखा ही था कि पिस्तौल चलने की आवाज हुई और साथ ही डोली का कहार 'हाय मैं मरा' की चिल्लाहट के साथ धम से जमीन पर गिर पड़ा। भरूचा ने लौटकर देखा तो डोली को चार आदमियों से घिरा हुआ पाया। डोली के शेष तीनों कहार गोली के चलते ही डोली को पटककर भाग गये थे। केवल एक पहरेदार था, जो आक्रमणकारियों में से एक से गुत्थम-गुत्था हो रहा था। भरूचा दरवाज़े से निकलकर डोली की ओर भागा। उसकी जेब में भरी हुई पिस्तौल थी। भारतवर्ष का कानून ऐसा ही है। यहां सब चोर, बदमाश और डाकू बेखटके हथियार रखते हैं, आर्म्स ऐक्ट केवल भले मानसों के लिए है। भरूचा के साथ भी सदा भरी पिस्तौल रहा करती थी। उसने पिस्तौल हाथ में लेकर आक्रमण-कारियों की ओर निशाना लगाया।

उधर डोली के भूमि पर रखे जाते ही, आक्रमणकारियों में से एक व्यक्ति ने लपककर डोली का पर्दा उठा दिया और श्यामा को हाथ से पकड़कर बाहर निकाल लिया। शेष तीनों आदमी गली का रास्ता रोके रहे और वह व्यक्ति, जिसने श्यामा को बाहर निकाल लिया था, उसे लेकर गली से बाहर जाने के लिए आगे बढ़ा। ठीक उसी समय भरूचा ने गोली चलाई। वह गोली केवल आक्रमणकारियों को डराने के लिए चलाई गई, क्योंकि अंधेरे में मित्र और शत्रु को पहचानना कठिन था। भरूचा की चलाई गोली डोली के पास से सनसनाती हुई

निकलकर श्यामा की पीठ में जाकर बैठी। गोली पीठ में घुसकर छाती के मर्मस्थल को पार कर गई। श्यामा के मुँह से आवाज़ भी न निकली। वह गोली लगते ही अचेत होकर ज़मीन पर लोट गई। भरूचा ने दूसरी गोली चलाने के लिये हाथ उठाया ही था कि आक्रमणकारियों में से एक ने आकर उसे दबोच लिया। वह दोनों गुत्थम गुत्था होकर जमीन पर गिर गये।

शहर के एक मुहल्ले में दो गोलियाँ चल जाँय और हल्ला न हो यह असम्भव ही है। भारतवर्ष की पुलिस प्रायः घटनास्थल से दूर ही मिला करती है, परन्तु उस रात अकस्मात् बाहर सड़क पर एक सिपाही विद्यमान था। गोलियों का शब्द सुनकर उसने सीटी दे दी, जिसमें आस-पास के दो-तीन और सिपाही आ गये। हल्ले की आवाज़ सुनकर गली के बाहर सड़क पर दस-पाँच राह जाते भी इकट्ठे हो गये थे। लोगों ने देखा कि गली में से दो आदमी भागते हुए निकले और इससे पहले कि पुलिस के सिपाही उन्हें पकड़ते, वह भागकर उस मोटर पर चढ़ गये, जो कोई दस कदम पर खड़ी थी और मोटर को पूरी स्पीड पर भगा दिया। सिपाही सीटी बजाता ही रह गया।

तब सिपाही गली में घुसे। गली में अन्धेरा था, इसलिये एक सिपाही ने जेब में से टार्च निकालकर घटनास्थल पर डाली। उसने यह दृश्य देखा कि डोली के पास दो लाशें पड़ी हैं। एक पुरुष की और दूसरी स्त्री की। स्त्री की लाश के पास एक आदमी घुटने टेके बैठा है। कुछ दूरी पर दो आदमी गुत्थम-गुत्था हो रहे हैं। जो आदमी लाश के पास बैठा था, वह रोशनी के देखते ही उठ बैठा और पथराई हुई-सी आँखों से पुलिस के सिपाहियों की ओर देखने लगा। एक पुलिस के सिपाही ने आगे बढ़कर उसका हाथ पकड़ लिया तो उसने हाथ छुड़ाने का कुछ भी प्रयत्न न किया।

कुछ ही आगे बढ़कर पुलिस के आदमी ने देखा कि ज़मीन पर एक पिस्तौल पड़ी है। वह पिस्तौल भरूचा और आक्रमणकारी की कुश्ती में

भरूचा के हाथ से छूटकर दूर जा पड़ी थी। भरूचा और आक्रमणकारी बराबर की जोड़ में थे, एक-दूसरे से छूट न सके। भरूचा हाथ-पाँव का काफी मजबूत था। जब शराब के नशे में न हो, तो वह आसानी से किसी से मार खाने वाला नहीं था। उसने आक्रमणकारी को दाव पर लाकर दोनों टांगों में ऐसा कस लिया था कि वह न निकल सका और न कमर से छुरा ही निकाल सका। पुलिस के सिपाही को देखकर भरूचा ने चिल्लाकर कहा—देखना गोली मत चलाना। मैंने इस बदमाश को खूब दबोच रखा है। तुम आकर इसे गिरफ्तार कर लो। दोनों सिपाही बहुत सावधानता से आगे बढ़कर उनके पास पहुँचे तो देखा कि सचमुच भरूचा ने जोर की पकड़ की थी। दोनों सिपाहियों ने पहले उसी दशा में भरूचा और दूसरे आदमी की तलाशी ले ली। भरूचा के पास कुछ नहीं निकला, दूसरे आदमी की कमर में छुरा था, जिसे भरूचा ने टांगों के नीचे दबा रखा था। दोनों के हाथ एक-दूसरे के हाथों में रुके हुए थे। छुरा निकाल लेने के बाद सिपाहियों ने दोनों को अलग करके हिरासत में ले लिया। वह आक्रमणकारी कुश्ती में काफी थक गया था, इसलिए छुड़ाकर भागने की चेष्टा न कर सका। इन तीन गिरफ्तार हुए व्यक्तियों को हम पहचानते हैं। जो स्त्री की लाश के पास से पकड़ा गया, वह उम्मेद था, जो भरूचा से उलझा हुआ था, वह करीमा था।

पाठक समझ गये होंगे कि वह घटना किस प्रकार घटित हुई। पहली रात, उस मकान से जाने के पूर्व ही, उम्मेद ने श्यामा को छुटकारे का उपाय बतला दिया था। श्यामा ने उम्मेद की सलाह से ही भरूचा के साथ जाने की अनुमति दे दी थी। उधर उम्मेद ने जाकर अपनी मंडली में सारा मामला पेश किया। करीमा ने पहले तो भार्गसिंह की आज्ञा के बिना हाथ डालने से इन्कार कर दिया, परन्तु फिर डाक्टर साहब, गुलाब और मस्ताना के ज़ोर देने पर मान लिया, क्योंकि अन्यथा श्यामा के हाथ से निकल जाने का भय था। जिन चार आदमियों ने डोली पर आक्रमण किया था, वह करीमा, गुलाब, मस्ताना और उम्मेद थे।

(१०)

स्थानीय समाचार-पत्रों के प्रातः संस्करणों में इस घटना का बहुत सनसनीपूर्ण वृतान्त दिया गया। डाकुओं और नागरिकों में मुठभेड़, दनादन गोलियाँ चल गईं, दो डाकू गिरफ्तार, इन शीर्षकों के नीचे घटना का लम्बा-चौड़ा विवरण दिया गया था, जिसमें बतलाया गया था कि मिल के खजानची मि० भरूचा रात के समय सड़क पर से गुजर रहे थे, तो गोली की आवाज़ सुनी। उसे सुनकर वह घटनास्थल पर पहुँचे, तो मालूम हुआ कि कुछ डाकू एक डोली को घेरे हुए हैं और एक आदमी डोली के पहरेदार से लड़ रहा है। उसी समय उन्होंने देखा कि एक डाकू ने पिस्तौल चलाई, जिसकी गोली से वह औरत, जो डोली में से खींचकर निकाली गई थी, मर गई। डाकू ने औरत के गिरते ही पिस्तौल दूर फेंक दिया और उस औरत के पास बैठकर उसके शरीर पर से जेवर उतारने लगा। मि० भरूचा बड़ी वीरता से डाकुओं को भगाने की चेष्टा करने लगे। इसी यत्न में एक डाकू ने उन पर भी आक्रमण कर दिया। परन्तु मि० भरूचा बड़ी वीरता से उसके साथ लड़ते रहे। इसी स्थिति में पुलिस मौके पर पहुँच गई और डाकुओं को गिरफ्तार कर लिया। शेष दो डाकू मौका पाकर फरार हो गये। मालूम हुआ कि वह उस मोटर में बैठकर भाग गये, जो सड़क पर खड़ी थी। मि० भरूचा के हलकी-सी चोटें आई हैं। सारे शहर में उनकी वीरता की प्रशंसा हो रही है।

कहना नहीं होगा, समाचार पत्रों ने यह वृतान्त भरूचा के उस बयान से ही तैयार किया था, जो उसने पुलिस के सामने दिया था।

पुलिस ने इसी बयान के आधार पर तहकीकात शुरू की। करीमा और उम्मेद गिरफ्तार हो गये थे। उनमें से उम्मेद श्यामा की लाश के पास पाया गया था और भरूचा ने अपने बयान में कहा था कि उम्मेद की गोली से श्यामा मारी गई, इस कारण मुख्य अपराधी वही माना गया। करीमा पर डकैती का अभियोग लगाया गया। भरूचा सरकार की ओर से प्रधान गवाह बना।

कुछ दिनों बाद उम्मेद को पता चला कि करीमा सरकारी गवाह बन गया है। पहले दोनों को पास-पास की कोठरियों में रखा गया था, परन्तु सरकारी गवाह बनने की आशा होने पर करीमा को किले में ले जाकर रखा गया। करीमा ने इस मामले में उम्मेद को ही दोषी ठहराया और यह भी इशारा दिया कि मामला बहुत गहरा है और शेष भेद वह पीछे प्रकट करेगा।

यह सब समाचार सुनकर भार्गसिंह भागा हुआ दिल्ली आया। उसने डाक्टर साहब को बीच में डालकर बहुत यत्न किया कि करीमा अपना बयान वापस ले और उम्मेद बच जाय, परन्तु शहादत बड़ी पक्की थी। उम्मेद का इन्कार किसी काम न आया। परन्तु क्योंकि पिस्तौल उम्मेद के हाथ से बरामद नहीं हुई थी, इस कारण उसे फांसी की सजा नहीं मिल सकी। सेशन की कचहरी से उसे आजन्म कारागार की सजा मिली।

करीमा को पुलिस की हिरासत में ही रखा गया, क्योंकि उससे अभी बड़े षडयन्त्र का भेद मालम होने की आशा थी।

६

हत्या

उम्मेद को सजा होने के बाद शीघ्र ही सुलतानपुर की सेन्ट्रल जेल में भेज दिया गया। मुकदमे के दिनों में वह दिल्ली-जेल में रहा। दिल्ली-जेल की उसने लगभग वही दशा पाई, जो बचपन में देखी थी। वैसा ही भटियारखाने का-सा दफ्तर, वही रद्दी बदबूदार खाना और वही भिन-भिनाती हुई मक्खियों की भीड़। कहीं-कहीं थोड़े-बहुत सुधार हो गये, परन्तु उनसे जेल की दशा में कोई परिवर्तन नहीं आया। अस्पताल की जालीदार बारकें बन गई थीं, परन्तु उनमें भी वही असह्य बदबू थी, जो शेष बारकों में। प्रबन्ध भी वैसा ही रद्दी था, जैसा कई वर्ष पहले।

उम्मेद अपनी कोठरी में बैठा जीवन की व्यतीत घटनाओं पर विचार कर रहा था कि पीली वर्दी वाले एक नम्बरदार ने सूचना दी कि शाम को चालान जायगा, जल्दी तैयार हो जाओ। वहाँ तैयार होने को क्या रखा था? जेल के कपड़े मिल ही गये थे। उनके सिवा उम्मेद के पास और क्या रखा था। उसने नम्बरदार से कहा—

भाई, यहाँ तैयार ही बैठे हैं। जब कहोगे, उठकर चल देंगे।

नम्बरदार शैतानी मुस्कराहट से मुस्कराया। कहने लगा—किसे बहकाते हो यार! मोटे आसामी हो, हिस्सा बाँटे बिना काम न चलेगा।

उम्मेद कई महीने से जेल में था। इस कारण वहाँ की भाषा को बहुत कुछ समझ गया था। प्रायः सभी कैदी अपने पास कुछ-न-कुछ रक़म रखते हैं। जब एक जेल से दूसरी जेल में जाने का समय आता है, तब वे उस रकम को छिपाकर ले जाते हैं। छिपाने के कई स्थान होते हैं। पुराने घाघ नक़दी को मुँह में रख लेते हैं। मुँह में, जीभ की जड़ में, नमक की डली रखकर तथा अन्य कई साधनों से वे लोग ऐसा गढ़ा बना लेते हैं कि उसमें रुपये या गिन्नी मजे में छिपाये जा सकते हैं। जूते की तह में, केशों में और कभी पाजामे के कमरबन्द में भी सिक्का छिपाने का यत्न किया जाता है। हरएक कैदी की जेल से जाते या आते हुए तलाशी होती है। उस तलाशी में नक़द निकल आये तो सजा होती है। नम्बरदार लोग कैदियों की तलाशी लेते हैं। यदि पहले उन्हें खुश कर दिया जाय तो तलाशी में कुछ नहीं निकलता। अन्यथा चोरी पकड़ी जाती है और सजा मिलती ही है। नम्बरदार का इशारा इधर ही था।

उम्मेद को उस मुस्कराहट से रंज हुआ। उसका दिल श्यामा की मृत्यु के पीछे बिल्कुल मुर्झा गया था। मुकद्दमे में भी उसने कोई विशेष दिलचस्पी नहीं ली थी। जज के सामने उसका चेहरा मानो निरन्तर कहता रहता था कि तुम जो चाहो करो, मुझे कोई चिन्ता नहीं। चोट-पर-चोट और निराशा-पर-निराशा ने उसके हृदय से जीने की इच्छा और उत्साह को मानो निचोड़कर निकाल दिया था। अब वह प्राण धारण अवश्य किये था, परन्तु जीवित नहीं था। नम्बरदार की मुस्कराहट को एक वर्ष पूर्व वह शांति से बर्दाश्त न कर सकता परन्तु अब व उसे भी पी गया। बोला—

मानना न मानना तुम्हारा काम है। मैंने तुमसे सच ही कह दिया है कि मेरे पास बांटने को कुछ नहीं है। नम्बरदार को निश्चय हो गया कि मूंजी पूरा घाघ है। ऐसे देने वाला नहीं है। वह यह कहता हुआ आगे चला गया कि बहुत अच्छा, देखा जायगा। बच्चा जी, समझते क्या हो,

पेट से भी निकाल लूंगा ।

उम्मेद के लहू में कुछ गर्मी आ रही थी, परन्तु इससे पूर्व कि वह कुछ कहता, नम्बरदार आगे बढ़ गया ।

थोड़ी देर बाद सुलतानपुर जाने वाले क़ैदियों की दफ्तर में बुलाहट हुई । सब क़ैदियों के पास जेल के वेष के अतिरिक्त एक टिकट भी था । टिकट जेल में कागज को कहते हैं, जिस पर हरेक क़ैदी का जेल का पूरा इतिहास लिखा रहता है । क़ैदी की जन्मतिथि, पिता का नाम, शरीर का कोई विशेष चिन्ह तथा पहली सजाओं के पश्चात् वर्त्तमान अपराध और सजा का ब्यौरा दिया जाता है । उसके नीचे जेल निवास का इतिहास प्रारम्भ होता है । जो काम कराया जाय, वह दर्ज होता है । जो इनाम या दंड मिले, उसका भी उल्लेख होता है । वह टिकट क़ैदी को सम्हाल-कर रखना पड़ता है । जेल में क़ैदी को अपना चित्रगुप्त आप ही बनना पड़ता है ।

५० के लगभग क़ैदी सुलतानपुर सेन्ट्रल जेल में भेजे जा रहे थे । वह सब बड़ी सजा पाये हुए लोग थे । डिस्ट्रिक्ट जेल में सात साल से बड़ी सजा पाये हुए लोग नहीं रखे जाते थे, ऐसे क़ैदी किसी सेन्ट्रल जेल में भेज दिये जाते हैं ।

चालान में जाने वाले क़ैदी लाइन में खड़े कर दिये गये और उनकी तलाशी होने लगी । नम्बरदार उनके कपड़ों को टटोल-टटोलकर रिपोर्ट करने लगे । जो पहले से अपना हिस्सा दे चुके थे, उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी । नम्बरदार ने देख-भालकर रिपोर्ट कर दी—ठीक है । कोई चीज नहीं । उम्मेद की तलाशी उसी नम्बरदार ने ली, जिसने उसे नोटिस दिया था कि बहुत अच्छा, देखा जायगा । उसने उम्मेद के बाल टटोले, मुंह खोलकर अन्दर अंगुली डालकर घुमाई, गले को ठीक बजा-कर देखा, कपड़ों का एक-एक सूत छान मारा, जूते के तले में सूराख कर डाले, पर कुछ भी न मिला । मानो नम्बरदार की आँखों में उम्मेद घोर अपराधी सिद्ध हो रहा था । नम्बरदार तलाशी लेता जाता था,

और बीच-बीच में जहरीली आँखों से उम्मेद को देखता जाता था। जब पोर-पोर की तलाशी ले लेने पर भी कुछ न मिला, तो उसने दरोगा की ओर देखकर कहा—

हजूर, यह बड़ा बदमाश कैदी है। या तो इसने रक़म कहीं छिपा दी है या किसी कैदी को दे दी है। अपने पास नहीं रखी।

दरोगा ने कहा—क्यों बे······बतलाता क्यों नहीं कि रक़म कहाँ छुपाई है ?

उम्मेद पहले ही सुलग रहा था, अब तो जल उठा। क्रोध से कांपते हुए स्वर में बोला—

कौन कहता है मेरे पास रक़म है। जो कहता है वह झूठा है।

दरोगा को इतनी बर्दास्त कहाँ। कस कर एक थप्पड़ उम्मेद के मुंह पर दिया। दोनों ओर से नम्बरदारों ने दोनों हाथ पकड़ लिये। बेचारा खून का घूँट-सा पीकर रह गया। परन्तु दरोगा साहब का गुस्सा इतने पर भी न उतरा। उन्होंने फौरन उम्मेद का टिकट लेकर उस पर लिख दिया कि गुस्ताख और खतरनाक है, कड़ी बन्दिश में रखा जाय।

सब कैदियों के हाथों में हथकड़ी और पैरों में बेड़ी डालकर उन्हें सिपाहियों के साथ पैदल स्टेशन के लिये रवाना करा गया। कई कैदी पुराने थे, उन्हें बेड़ी पहनकर चलने की आदत थी, पर उम्मेद के लिए यह अनुभव बिल्कुल नया था। चलने के समय जब बेड़ी खिचती थी, तो अपने साथ पैरों के गोश्त को घसीटकर लाती प्रतीत होती थी। हुक्म था कि कैदी जल्दी-जल्दी चलें, पर जिन कैदियों ने पहली बार बेड़ियाँ पहनी थीं, उनसे चला नहीं जाता था। आहिस्ता चलने पर सिपाही की ओर से पहिले मां-बहिन की पाँच-सात गालियों का उपहार मिलता था और यदि उस पर चीं-चपड़ करे तो पुलिस का डंडा पीठ पर पड़ता था। पुराने कैदी तो बेड़ियों को रस्सियों की तरह घसीटते हुए मस्तानी चाल से चले जाते थे, परन्तु नयों की आफत थी।

जो पीड़ा थी, उसे जाहिर भी नहीं कर सकते थे।

उम्मेद आज बहुत दुःखी था। हथकड़ी बेड़ी पहने हुए जेल के भूंडे कपड़ों में शहर से होकर गुजरना बहुत ही लज्जाजनक प्रतीत होता है। उसने कई अपराध किये, परन्तु वह अपराधी नहीं था। वह परिस्थितियों का और समाज की विषमताओं का शिकार था। उसे जुर्म में मजा नहीं आता था और न वह उस दशा में पहुँचा था कि समाज का तिरस्कार उसे तिरस्कार प्रतीत न हो। वह उस लम्बी लाइन में सिर नीचा किये, स्टेशन की ओर चला जाता था और दिल में ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि हे प्रभु, पृथ्वी में गड्ढ़ा कर दे, ताकि मैं उसमें समा जाऊँ। दरोगा के थप्पड़ के निशान उसके मुँह पर अब तक भी बने हुए थे।

बहुत देर तक वह इसी योग-निद्रा में चलता रहा। वह निद्रा तब टूटी, जब उस कैदी ने, जो उम्मेद के पीछे चल रहा था, पाँव की ठोकर मारकर उसे चेतन करने का यत्न किया। उम्मेद ने चौंककर पीछे देखा। वह एक पठान कैदी था, जो फीरोजपुर के इलाके से बदलकर दिल्ली आया था और अब सुलतानपुर सेन्ट्रल जेल को भेजा जा रहा था। उसे जेल में कालेखाँ के नाम से पुकारा जाता था। उम्मेद ने कुछ नाराजगी से और कुछ उत्सुकता से काले की ओर देखा। काले उम्मेद की खिजलाहट को देखकर ठठाकर हस पड़ा। उम्मेद को वह हँसी बहुत बुरी लगी, पर वह कुछ बोला नहीं। अपने ध्यान म मस्त होकर फिर उसी तरह चलने लगा।

कालेखाँ ने कोई दस कदम चलकर फिर उम्मेद के पाँव में अपने पाँव की ठोकर लगाई। इस बार उम्मेद को गुस्सा आ गया। उसने पीछे पलटकर कालेखाँ को एक फड़कती हुई गाली दी। कालेखाँ और जोर से हँस पड़ा और अपने साथ चलने वाले कैदी की तरफ देखकर बोला—देख ले, मैं जीत गया। तू कहता था कि इसके मुँह में जुबान ही नहीं है, मैंने कहा था कि है। अपनी आँखों से देख ले, कितनी लम्बी शैतान-की-सी जुबान है। उम्मेद को ठोकर पर तो गुस्सा था ही,

इस उपहास पर और भी अधिक गुस्सा चढ़ गया। उसका खून तेजी से चलने लगा, यहाँ तक कि आँखों में दिखाई देने लगा। कालेखाँ ने इस पर एक और कहकहा लगाया और उम्मेद की तरफ इशारा करके साथी के कान में कुछ कहा। इस पर उम्मेद का पारा थर्मामीटर की ऊपरली सीमा तक पहुँच गया, और उसने चिल्लाकर कहा—बदमाश, पाजी··· यह आवाज इतनी ऊँची हो गई कि आगे चलने वाले वार्डर तक भी पहुँची। उसने पीछे आकर डपटकर पूछा कि यह कौन बदमाश गालियाँ बक रहा था ?

कालेखाँ फौरन बोल उठा—जमादार साहब ! यह आदमी, जो हमारे आगे जा रहा है, हम लोगों को और जमादारों को गालियाँ देता है। सिपाही ने पूछा—क्यों बे, गाली क्यों बक रहा था। और इससे पहले कि उम्मेद के मुँह से कोई उत्तर निकलता, सिपाही का डण्डा उम्मेद की पीठ पर पड़ा। कालेखाँ और उसके बहुत से साथी खूब ज़ोर से हँसने लगे। उम्मेद के शरीर से मानो क्रोध की चिनगारियाँ निकल रही थीं, परन्तु उसे चारों ओर कोई सहायक न दिखाई दिया और हाथ-पाँव हथकड़ी-बेड़ियों में ग्रस्त थे। लाचार दशा में फिर उसी तरह गर्दन झुकाये चलने लगा।

पंक्ति में जो कैदी उम्मेद के साथ-साथ चल रहा था, उसकी उम्र लगभग ५० वर्ष की होगी। वह हिसार जिले का मध्यम श्रेणी का राईं जमींदार था। ज़मीन के मामले में रिश्तेदारों से झगड़ा हो गया, जिसमें लाठी चल गई और दोनों ओर के आदमी मारे गये और घायल हुए। विरोधी दल का एक आदमी अल्लादिया के हाथ से भी मारा गया। अल्लादिया को सात साल की सख्त कैद का दण्ड हुआ, जिसमें से केवल तीन महीने व्यतीत हुए थे। शेष दिन काटने के लिए उसे सुल्तानपुर भेजा जा रहा था। जेल में आए तो अभी थोड़े ही दिन हुए थे, परन्तु अनुभवी आदमी था और दुनिया को समझता था। उसे उम्मेद की दशा पर दया आ रही थी। कालेखाँ और उसके साथियों की हरकतों

पर उसे रञ्ज हो रहा था। उसने उम्मेद के पास होकर धीरे-धीरे कहा—

अरे लड़के, तू क्या पागल है जो ऐसे उदास होकर चल रहा है और ज़रा-ज़रा-सी बात पर गुस्सा करता है। ऐसे फ़िक्र करेगा तो थोड़े ही दिनों में मर जाएगा। जेल आया है तो आदमियों की तरह रह। हिम्मत कर। जेल में आराम से रहने का एक ही उसूल है—कम खाना और गम खाना। गम को दबाए बिना ज़िन्दगी कैसे काट सकेगा ?

उम्मेद क्रोध, चिन्ता और ग्लानि से भरा हुआ चला जा रहा था कि यह शब्द उसके कान में पड़े। इनमें उसे कुछ सहानुभूति का अनुभव हुआ। उसने कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से अल्लादिया की ओर देखकर कहा—

तुम्हारा कहना तो ठीक है मियाँ जी, कि इस तरह ज़िन्दगी भर की जेल कैसे कटेगी, पर क्या करूँ, ऐसी दगाबाजी और बेइज्जती बर्दाश्त नहीं की जाती। तुम्हीं बताओ, मुझे क्या करना चाहिये ? अल्लादिया और उम्मेद को आहिस्ता-आहिस्ता बात करते देखकर कालेखाँ और उसके साथियों ने आवाजें कसना आरम्भ किया। जेल में देर तक रहने के कारण शरारत और निर्दय बदमाशी उनके स्वभाव का एक हिस्सा बन गई थी। वह एक प्रकार से सर्वथा निष्काम थी। उम्मेद ने उनका कुछ नहीं बिगाड़ा था और न पहला परिचय ही था, परन्तु उनके हृदय में यह इच्छा पैदा हो रही थी कि उम्मेद को चिढ़ाकर प्रसन्नता प्राप्त करें। अभी तक उसे नया अकेला बटेरा समझकर वे उसे पीड़ा पहुँचाकर मज़ा लेने का यत्न कर रहे थे, अब अल्लादिया को उससे बातें करते देखकर उनके मन में द्वेष पैदा होने लगा। उस द्वेष को वह कड़वे शब्दों में प्रकट करने लगे।

एक ने दूसरे से कहा—वाह भई, खुदा मिलाई जोड़ी, एक गंजा, दूसरा कोढ़ी।

दूसरे ने आवाज कसी जोड़ा क्या फबता है। सुलतानपुर में जाकर निकाह पढ़ा जायगा।

अभी यह सिलसिला चल ही रहा था कि दिल्ली का स्टेशन आ पहुँचा। सब कैदी घेर-घारकर तीसरे दर्जे के एक ही डिब्बे में ठूँस दिए गए। जिस डिब्बे में मुश्किल से ३० की जगह थी उसमें ४५ आदमी भर दिए गये और ऊपर से ताला जड़ दिया गया। गाड़ी ने सीटी दी और फक-फक करती हुई रवाना हो गई। इस प्रकार उम्मेद अपनी उम्र में पहली बार अपनी जन्मपुरी दिल्ली से बन्दी बनकर बाहर रवाना हुआ।

पंजाब के कई हिस्सों को वीर-भूमि कहा जा सकता है। माँझा और मालवा उनमें से मुख्य हैं। इन इलाकों का पानी और अन्न खूब जानदार होते हैं। दूर देश का यात्री उस प्रदेश के निवासियों की लम्बी और मज़बूत बनावट को देखकर आश्चर्य में आ जाता है। भूमि उपजाऊ है और नदियों व नहरों का पानी पुष्कल है। जरा से इशारे से खेत अनाज उगल देते हैं। किसान लोग अच्छे समृद्ध, स्वस्थ और निश्चिन्त दिखाई देते हैं।

उन प्रदेशों में दो चीजों की बहार है। जुर्म खूब होते हैं और फौज में भर्ती भी खूब होती है। वहाँ के ग्रामों में प्रायः सिखों या अराइयों की बस्ती है। दोनों ही जातियाँ लड़ाकू और बहादुर हैं। इन लोगों की जबान पीछे चलती है और हाथ पहले। घर-घर में तेज धारदार गँडासे तैयार रहते हैं। जरा-जरा-सी बात पर संगीन मार-पीट हो जाती है। न वे अपनी जान की बड़ी कीमत लगाते हैं और न दूसरे की। पंजाब की वीरता और लड़ाकूपन की जो कीर्ति या अपकीर्ति है, वह मुख्यतः इन्हीं इलाकों के निवासियों के कारण हैं।

तीसरी जाति, जो इन विशेषताओं में बराबर या शायद कुछ बढ़कर है, वह पठान जाति है। पंजाब के सीमाप्रांत पर पठानों की बहुत बड़ी बस्ती है। वे लोग वीरता में तो शायद अन्य पंजाबियों से बढ़कर नहीं

होते, परन्तु उनके आवेग बहुत उग्र होते हैं।

पंजाब में जितने फ़ौजदारी के जुर्म होते हैं, बर्मा को छोड़कर उतने शायद ही किसी प्रांत में होते हों। ऊपर बतलाये हुए तीन गिरोहों का लड़ाकूपन ही उसका मुख्य कारण है। वहाँ के जेल में प्रायः ऐसे लोग मिलते हैं, जिन्हें अपराधियों के आचारशास्त्र में महापुरुष कहा जा सके। ऐसे-ऐसे क़ैदी मिलेंगे जिन्हें ९० या १०० साल की सजा मिल चुकी है। उनका जीवन ही जेल में कटा है और वे जेल को और जेल के अधिकारियों को खिलवाड़ समझते हैं।

गुरु गोविन्दसिंह ने पंजाब के ग्रामों से ऐसे ही जांबाज जवानों को फौज में भर्ती करके वह वीर सेना तैयार की थी, जिसने पंजाब में सिख-राज्य की स्थापना की थी। बहादुरी मनोवृत्ति का एक ऐसा प्रवाह है, जो यदि ठीक रास्ते पर चले, तो नहर के पानी की तरह जाति के कल्याण का कारण होता है और यदि ठीक रास्ता न पाकर वह किनारों को तोड़कर बहने लगे तो वह अपराध रूप में परिणित हो जाता है। यही कारण है कि पंजाब के जेलखाने और ब्रिटिश सरकार के लश्कर—दोनों ही सिखों तथा पंजाबी मुसलमानों से भरे हुए हैं।

लड़ाकू प्रदेश के जेल-निवासी सिख छोटे जल को छोटा गुरुद्वारा और सेन्ट्रल जेल को बड़ा गुरुद्वारा के नाम से पुकारते हैं। वे कहते हैं कि सिख लड़का तब तक लड़की ही रहता है, जब तक वह कम से कम एक बार जेलरूपी गुरुद्वारे की यात्रा न कर आये। सुलतानपुर की सेंट्रल जेल जेल-यात्रियों की भाषा में पंजाब का सबसे बड़ा गुरुद्वारा था। उम्मेद जिस जत्थे के साथ सुलतानपुर जा रहा था, उसमें बहुत से पुराने घाघ भी थे। उनमें से कई तो सात-सात जेलों की हवा खा चुके थे। वे लोग बड़े गुरुद्वारे की यात्रा की आशा में बड़े प्रसन्न थे। बेचारा उम्मेद जब मुसीबत की घड़ियाँ काट रहा था, तब वे पुराने घाघ तरह-तरह के राग गाकर अपना दिल बहला रहे

थे। एक तो बाहर की हवा और दूसरे बड़े जेल में जाने की खुशी—पुराने कैदी खुशी से उछले पड़ते थे।

बेचारे उम्मेद की दशा दयनीय थी। पैरों में बेड़ी ही काफी कष्ट देने वाली चीज थी, उसे पहनकर सोना बिल्कुल असम्भव प्रतीत होता था। फिर हाथ में जो हथकड़ी पड़ी हुई थी, वह तो बहुत ही परेशान कर देने वाली थी। सब के एक-एक हाथ में हथकड़ियाँ डालकर उन्हें जंजीर से बाँध दिया गया था। हिलें तो सब और लेटें तो सब। उम्मेद को रात में पेशाब की हाजत हुई। कुछ देर तक तो वह दबाये रहा, पर जब असह्य हो गई तो उसने सिपाही से कहा। सिपाही ने नजर दौड़ाई तो देखा कि उस डिब्बे से संडास ही नदारद है। सिपाही ने दो-एक गालियाँ उम्मेद ही को दीं, क्योंकि उसने ऐसी बेजा इच्छा जाहिर की थी और तीन-चार गालियाँ रेलवालों को दीं, क्योंकि सिपाही महाराज को ख्याल आ गया कि यदि मुझे पेशाब जाना हुआ तो क्या करूँगा? परन्तु क्या हो सकता था? उस कैदी को आसानी से डिब्बे से बाहर ले जाया नहीं जा सकता और डिब्बे में पेशाब या टट्टी करने के लिए जगह नहीं थी, इसलिए उम्मेद को तथा अन्य कैदियों को रात भर प्रकृति से लड़ाई लड़नी पड़ी।

हाँ, एक बात देखकर उम्मेद को आश्चर्य हुआ। कई बहुत पुराने कैदियों की मौज थी। गाड़ी के चलते ही सिपाहियों ने उनकी हथकड़ियाँ खोल दीं, केवल बेड़ियाँ पड़ी हुई थीं और वे लोग बेड़ियों की उतनी भी कीमत नहीं लगाते थे, जितनी कीमत पैर में बँधी हुई मूंज की रस्सी की लगाई जाती है। वे लोग सिपाहियों के साथ ताश खेलते थे, गाते थे, स्टेशनों पर खाने की चीजें खरीदकर मिलकर खाते थे और जब जरूरत होती, सिपाही के साथ स्टेशन पर उतरकर दूसरे डिब्बे में जाकर फारग हो आते थे। एक बार जब देर तक गाड़ी के खड़े होने का अन्देशा नहीं था, तब उम्मेद ने आश्चर्य-चकित होकर यह भी देखा कि सिपाही और पुराने कैदी मिलकर शराब पी रहे हैं। उस समय तो

उन्मेद व्यवहार की भिन्नता को न समझ सका, परन्तु सुलतानपुर पहुँच कर थोड़े ही दिनों में मालूम हो गया कि पैसा सब कुछ करा सकता है और सरकार के महकमों में जितनी पोल है, उतनी कहीं नहीं।

खुदा-खुदा करके काफला सुलतानपुर पहुँचा। प्रातःकाल दस बजे के लगभग गाड़ी के दरवाजे खुले और कैदियों की लाइन स्टेशन पर लगाई गई और उनकी जाब्ते से गिनती पूरी की गई। जेल स्टेशन से लगभग डेढ़ मील दूर था। जैसे वे लोग दिल्ली जेल से स्टेशन तक आए थे, उसी प्रकार उन्हें स्टेशन से सेन्ट्रल जेल तक पहुँचाया गया। हथकड़ी बेड़ी के कारण हाथ-पाँव में पीड़ा, रात भर नींद न आने से बेचैनी, भूख और धूप इनमें से एक-एक ही पर्याप्त था, पर यहाँ तो चारों इकट्ठे हो रहे थे। साधारण कैदियों के प्राण होंठों पर घूम रहे थे, पर लाचारी थी। उस धूप और गर्द में रास्ते की खाक छानते हुए जेल तक चलना ही पड़ा।

दिन के लगभग बारह बजे जब सूर्य अपने पूरे जोश से तप रहा था, मनुष्य जाति के अभागे भाग का वह जत्था, भूखी, प्यासी और परेशान हालत में उस बड़े गुरुद्वारे के बड़े द्वार पर पहुँच गया।

सुलतानपुर का जेल बिलकुल नया बना था। इमारत भी बिलकुल नए ढंग की थी, खूब मजबूत, हवादार और सुरक्षित। कोठरियाँ और बारकों के फर्श दो-दो फीट गहरे और पक्के थे। हवा का खूब प्रबन्ध था। बाहर के कोट और अन्दर की कोठरियों के मध्य में पाँच दीवारें पड़ती थीं। जेल-विभाग ने इस जेल को सफाई, सेहत और मजबूती में एक आदर्श बनाने का यत्न किया था। सारे जेल में पन्द्रह बारगें थीं, चारों ओर घेरे थे और उन सब घेरों का दरवाजा अन्दर के उस बुर्ज की ओर खुलता था, जिसे चक्कर के नाम से पुकारा जाता था। वह बुर्ज तिमन्जला था। सब से निचले मंजिल में एक गोल कमरा था, जिसे दफ्तर का आन्तरिक कार्यालय कह सकते हैं और जेल के हैड-वार्डर की राजधानी भी। बुर्ज की बीच की मंजिल में पानी का टांक

था और सब से ऊपरली मंजिल में टीन का शैड था, जिसकी छत में एक घन्टा लगा हुआ था। वह जेल का अलार्म बैल था। उस शैड में चौबीस घन्टे पहरा रहता था। बारगों के द्वार उस बुर्ज से लगभग पचास कदम की दूरी पर थे।

उम्मेद को एक ऐसी बारग में रखा गया, जिसमें कई कोठरियाँ थीं। उस बारग का नम्बर ७ था। उम्मेद की कोठरी का नम्बर ११ था। जो कैदी दिल्ली-जेल से गये थे, उनमें से अधिकतर इसी बारग में रखे गये थे। अल्लादिया को १० नम्बर और कालेखाँ को १६ नम्बर की कोठरी मिली। १२, १३, १४ और १५ नम्बर की कोठरियों में चार सिख कैदी थे, जो अभी हाल ही में मान्टगुमरी से छूटकर आये थे। यह याद रखनें योग्य बात है कि जब से उम्मेद भागसिंह की पार्टी में शामिल हुआ था, उसने केस रख लिये थे और वह भी सिख ही समझा जाता था।

जेल में हरेक कैदी के साथ उसकी फाइल भी आती है। उम्मेदसिंह के साथ जो फाइल गई, उसमें इतना ही दर्ज था कि वह एक बड़े मशहूर डाकुओं के गिरोह का सरगना है और खूनी है, इसलिये उस पर खास नजर रखी जाय। उसके जेली टिकट पर यह भी दर्ज था कि गुस्ताख़ व बद दिमाग है, कड़ी निगरानी में रहे। जब उम्मेद ड्योढ़ी पर पहुँचा तो उसकी बहुत कड़ी तलाशी ली गई, परन्तु कोई भी ऐसी वस्तु उसके पास न मिली, जो जेल के नियमों के विरुद्ध हो। होना तो यह चाहिए था कि यह बात उसके पक्ष में पड़ती और जेल के अधिकारी उसे भला-मानुस समझते, परन्तु हुआ उलटा ही। उसकी निर्दोषिता का किसी को भी निश्चय न हुआ। जब डाकुओं के गिरोह का सरगना है, तो वह जेल की रिवाज को खूब जानता होगा। उसे मालूम होना चाहिए था कि पैसे के बगैर जेल में किसी का जीवन नहीं कट सकता। फिर भी उम्मेद के पास पैसा नहीं निकला, तब यही समझा गया कि आसामी बेहद धूर्त है। इसकी तह तक पहुँचना कठिन है।

जेल में पैसा प्रधान है। पैसे के बिना हल्की-से-हल्की सजा पाया हुआ व्यक्ति भी दुःखी रहेगा और पैसे के साथ मृत्यु-दण्ड का अधिकारी भी सुख से जीवन व्यतीत करेगा। सबको पैसा चाहिए। मेजर साहब से लेकर नम्बरदार तक धन के गुलाम हैं।

हाँ, एक वस्तु धन से ऊँची जरूर है और वह है दबंगपन। कष्ट से डरे नहीं और किसी से दबे नहीं; पूरा बदमाश हो और भलमनसाहत को थूककर फेंक दे। ऐसा आदमी पैसे के बिना भी भारतीय जेलों में कुछ समय तक सुख पा सकता है। टेढ़ जान शंका सब काहू, वक्र चन्द्रमा ग्रसे न राहू। ऐसे जांबाज को छेड़ते हुए सभी डरते हैं।

उम्मेद दोनों में से एक भी नहीं था। न उसके पास पैसा था और न अभी वह ठेठ गुनहगार था। उसकी अभी यह दशा थी कि उसकी आत्मा में भले-बुरे की भावना विद्यमान थी, परन्तु परिस्थितियाँ उसे अपराधी बनाती जा रही थीं। परिस्थिति पर हावी होने की शक्ति न रहने के कारण वह पाप की खाई में लुढ़कता जा रहा था, परन्तु अभी वह सर्वांश में अपराधी नहीं बना था। वह भलाई और बुराई के मध्य की दहलीज पर खड़ा था, न इतना भला था कि बुराई को परास्त कर देता, न इतना बुरा ही बना था कि बुराई को निभा सकता। उसकी दशा त्रिशंकु की-सी हो रही थी।

जेल का सुपरिन्टेन्डेन्ट मेजर नियामतखाँ जेल-विभाग में अपनी दृढ़ और कठोर नियन्त्रण के लिये प्रसिद्ध था। उसका रंग काला स्याह तवे जैसा था। कद नाटा, शरीर गठा हुआ, हमेशा अंग्रेजी कपड़ों में तना रहता था। जब जेल में दौरा लगाने आता, तब दायाँ हाथ पेंट की जेब में रखता था, बाँये हाथ में एक छोटी-सी छड़ी रहती थी, जो इशारा करने के लिये उँगली का काम देती थी। लोगों का ख्याल था कि जेब वाले हाथ में भरी हुई पिस्तौल रहती है, परन्तु इस समाचार की कभी तस्दीक नहीं हो सकी। जेल में राउण्ड लगाते समय बहुत ही कम बोलता था। आम कैदियों पर मेजर का काफी दबदबा था। निजी जीवन में

मेजर नियामतखाँ काफी खुशदिल और रसिक मशहूर था। अरबी और फारसी का अच्छा पण्डित था। दोस्तों में प्रसिद्ध था कि मेजर जो कुछ कमाता है, उसकी शानदार बीवी सब स्वाहा कर डालती है।

दरोगा का नाम राय साहब नत्थूराम था। नत्थूराम जेल-विभाग का पुराना घाघ था। जुबान का मीठा, पर अन्दर से पैनी छुरी से भी तेज था। राय साहब के जानने वालों में मशहूर था कि जिस पर वह मुस्करा दें, उसकी जेब झाड़ लेते हैं, पर जिस पर त्योरी चढ़ा दें, उसके तो प्राणों को ही चूस लेते हैं।

ये दोनों अफसर तो ड्योढ़ी के बादशाह थे, परन्तु जेल का असली बादशाह रहमतुल्ला था, जिसका ओहदा चीफ हैडवार्डर का था। उसके बाप दादा भी जेल महकमे में काम करते थे। वह आम तौर पर वार्डरों में बैठकर कहा करता था कि ये जो बड़े-बड़े अफसर बनकर आते हैं, जेल के काम को क्या जानें ? वह तो इस काम में निरे उल्लू हैं। मेरी रग-रग में जेल का खून रमा हुआ है। कैदियों की नब्ज को मैं जानता हूँ। अभी यह मुझ से बीस साल पढ़ें, तो इन्हें जेल का काम समझ में आ सकता है। रहमतुल्ला खूब लम्बा-चौड़ा हट्टा-कट्टा आदमी था। उम्र लगभग पचास साल की होगी। जेल की नौकरी में पच्चीस साल बिता चुका था। लम्बी दाढ़ी, ऊँचा कद, तेज आवाज और गालियों का अक्षय-भण्डार, बस यही उसकी विशेषताएँ थीं। पूरे तानाशाही ढंग पर हुकूमत करता था। निडर होकर विचरता और निःशंक होकर गाली बकता और सख्तियाँ करता था। दरोगा और कुछ दूर तक मेजर को भी उससे दबना पड़ता था।

हेडवार्डर से दबने के कारण अनेक थे, पर उनमें से सबसे बड़ा यह था कि वह मेजर और दरोगा का अन्नदाता था। भला सरकार से जो तनख्वाह मिलती है, उससे जेल के अधिकारियों का क्या बनता है। जेल-विभाग में रहकर जो आदमी तलब पर रहे, उसे जेल की परिभाषा में 'गधा' कहते हैं। जेल के कर्मचारी की तनख्वाह अगर १००) हो तो

आमदनी ५००) की होनी ही चाहिए। वह कैसे? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जैसे, सरकार के सब विभागों में, उसी तरह। पुलिस के अधिकारी केवल २००) माहवार तनख्वाह में जमीनें और जायदादें कैसे खरीद लेते हैं? रेलवे के इंजिनियर केवल पाँच-छै-सौ के वेतन में लाखों कैसे जोड़ लेते हैं? उसी प्रकार जेल के अधिकारी भी थोड़े वेतन में बहुत कमा लेते हैं।

कमाने के कई ढंग हैं। किचन, गोदाम और अस्पताल के महकमों से कमाने का तरीका तो बहुत सीधा है। माल घटिया खरीदा गया और दाम बढ़िया के लगा दिये। बचत खरीदने वालों के हाथ में रही। एक हजार कम्बल मँगवाये गये, दो हजार रजिस्टरों में दर्ज किये गये और एक हजार कम्बलों को आधे-आधे में से फाड़कर दो हजार बना दिये गये। किचन में सामान थोड़ा भेजा गया, ज्यादा दर्ज किया गया और बचा हुआ माल जेल के देवताओं के अर्पण हो गया। इस प्रकार के सैंकड़ों ढंग हैं, जिनसे रुपये और माल के रूप में कैदियों के हिस्से का धन जेल के अधिकारियों तक पहुँच जाता है। गोदाम से सामान और जेल के बाग से सब्जी आदि का जेल के अधिकारियों के घरों में पहुँचना तो नियम-सा बन गया है, जिसकी कोई सफाई देने की जरूरत नहीं रहती। इन सब उपायों से कमाई करने में प्रायः सभी जेल अधिकारी सहमत रहते हैं और बचत को हिसाब से बाँट लेते हैं। इस जायज आमदनी में ज्यादा दखल देने का तो प्रायः इन्सपेक्टर जनरल भी साहस नहीं करता, क्योंकि कैदियों का विश्वास है कि उसे भी फोकट की आय का काफी हिस्सा पहुँचता है।

यह तो आमदनी का वह तरीका है, जो स्पष्ट और प्रत्यक्ष है, परन्तु एक दूसरा तरीका भी है, जो यद्यपि जेल-विभाग में बिलकुल जायज माना जाता है, तो भी प्रत्यक्ष रूप में नहीं वर्ता जाता। वह तरीका कैदियों से रिश्वत लेने का है और उसमें ऊँचे अधिकारियों का काम हैडवार्डर के बिना नहीं चल सकता।

(४)

आज सब नये आए हुए कैदी मेजर साहब के सामने हाजिर होंगे। उनकी डाक्टरी परीक्षा की जायगी और उनके लिये मशक्कत तय की जायगी। सुबह जेल खुलते ही हैडवार्डर साहब धूम-धाम से तशरीफ लाये। कालेखाँ दिल्ली से आये हुए चालान का मुखिया समझा गया और रहमतुल्ला ने उसी से बातचीत आरम्भ की। इस विषय पर बहस होने लगी कि कौन कितनी दक्षिणा दे सकता है। मशक्कत दक्षिणा के अनुसार ही लगाई जाती है। किसी ने ५०) पेश किये तो किसी ने केवल १०) देने की ही शक्ति प्रकट की। सभी ने कुछ-न-कुछ दिया। अल्लादिया ने सबसे बड़ी रक़म दी, क्योंकि वह पैसे वाला आदमी था। उम्मेद से पैसा वसूल करने का काम अल्लादिया के सुपुर्द किया गया। उम्मेद के पास कुछ भी नहीं था। उसने अल्लादिया से स्पष्ट कह दिया कि मेरे पास कुछ भी नहीं है और मैं देने की कोई जरूरत भी नहीं समझता। मैं अपनी मेहनत करूँगा और मौज में रहूँगा। अल्लादिया ने उम्मेद की बात को नर्म करके रहमतुल्ला से कह दिया कि बेचारा गरीब है, उसके पास कुछ भी नहीं है। उसे छोड़ दो। पर रहमतुल्ला ऐसी आसानी से टलने वाला नहीं था। उसने उत्तर दिया—

ऐसे ग़रीब आदमी बहुत देखे हैं। डकैती और कत्ल में सजा पाकर आया है और ऐसा सीधा बनता है। बदमाश कहीं का। मैं तो इसके पेट में से पैसा निकाल लूँगा—यह है किस हवा में।

कालेखाँ न रहमतुल्ला को काफी भर दिया था और विश्वास दिला दिया था कि उसके पास बहुत रुपया है, पर वह उसे निकालना नहीं चाहता। रहमतुल्ला की क्रोध भरी बात सुनकर अल्लादिया चुप हो गया, पर उसके दिल में उम्मेद के भविष्य के सम्बन्ध में बहुत सन्देह पैदा हो गये।

डाक्टरी परीक्षा होने लगी। उम्मेद को आश्चर्य हुआ कि जो लोग रिश्वत का रुपया दे चुके थे वह सब किसी न किसी रोग से ग्रस्त पाये

गये। किसी की छाती कमजोर निकली, तो किसी का दिल बीमार निकला। कालेखाँ जैसा हट्टा-कट्टा आदमी अनीमिया (कमजोरी) का मरीज़ माना गया। और उसे केवल मूंज बटाई का काम दिया गया। अल्लादिया बूढ़ा था, इस कारण उसके लिये दूध और मक्खन की भी सिफारिश की गई। डाक्टरी परीक्षा में यह भी लिखा गया कि उसे अस्पताल में रखा जाय तो अच्छा है। उम्मेद और पाँच-सात और कैदियों ने कुछ भेंट नहीं चढ़ाई थी, इसलिये उनकी सेहत बहुत अच्छी पाई गई और उन्हें चक्की में सोलह सेर आटा पीसने का काम दिया गया।

दूसरे दिन उम्मेद को पीसने लिये सोलह सेर गेहूँ मिल गये। उसने अब तक कभी चक्की नहीं चलाई थी, सोलह सेर गेहूँ देखकर वह घबरा गया, परन्तु जब पुराने कैदियों को सोलह सेर गेहूँ उठाकर हँसते-हँसते जाते देखा, तब हिम्मत बँध गई और वह भी उठाकर अपनी कोठरी में पहुँच गया और पीसना प्रारम्भ कर दिया। थोड़ी देर तक कुछ कठिनाई प्रतीत नहीं हुई और कई दिनों की सुस्ती के पीछे व्यायाम होने से शरीर में कुछ स्फूर्ति-सी भी मालूम होने लगी, परन्तु कोई घन्टा भर पीसने के बाद हाथ में छाले पड़ गये और कन्धे दुखने लगे। दो घन्टे के पीछे तो पीसना कठिन प्रतीत होने लगा, परन्तु अभी काम बहुत-सा पड़ा था, इसलिये उम्मेद पीसता गया। तीन घन्टे में लगभग आठ सेर गेहूँ तो पिस गये, पर हाथों में आंवले पड़ गये और शरीर टूट गया। लाचार होकर उम्मेद चक्की को छोड़कर थोड़ी देर के लिये सुस्ताने बैठ गया।

अभी उसे आराम से बैठे पांच मिनट भी न हुए होंगे कि बाहर से चीफ हैडवार्डर का कर्कश स्वर सुनाई दिया—

अबे............क्या यह तेरी सुसराल है जो बैठा-बैठा आराम कर रहा है। काम क्यों नहीं करता ?

उम्मेद तीन घन्टे काम करके थक गया था और अभी और काम

करने का विचार कर रहा था, इसलिये उसे गालियों की लताड़ बहुत ही बुरी मालूम हुई। जी में आया कि जवाब में कोई सख्त-सी बात कह दे, परन्तु अपनी लाचारी देखकर चुप रह गया और कुछ न बोला। चीफ हैडवार्डर इस उपेक्षा से और भी अधिक भड़क उठा और चिल्ला-कर बोला—

अबे पाजी, उठता है कि नहीं ? या लकड़ी देकर ही उठाना पड़ेगा।

उम्मेद फिर भी कुछ न बोला। तब चीफ हैडवार्डर खिसियाना-सा होकर यह कहता हुआ वहाँ से चला गया कि बहुत अच्छा बच्चा जी, आज काम के दिखाने के वक्त सब कसर निकाल ली जायगी।

उम्मेद ने सोच रखा था कि यथाशक्ति मशक्कत पूरी करने की कोशिश करेगा, पर रहमतुल्ला के अपशब्दों ने उसे जला दिया। फिर उसने कुछ न किया, कम्बल डालकर लेट गया और खर्राटे भरने लगा।

काम दिखाने के समय हैडवार्डर ने अपनी धमकी को पूरा किया। उसने काम लिखने वाले बाबू के खूब कान भरे और दरोगा साहब के सामने पेशी करने का हुक्म दे दिया। शाम को दरोगा साहब के सामने पेशी की गई। वहाँ भी हैडवार्डर हाजिर थे। उम्मेद के साथ आठ-दस आदमी और भी पेश थे। रहमतुल्ला ने दरोगा को बतला रखा था कि आसामी मोटा है, जरा दवानें से रस छोड़ेगा। दरोगा ने उम्मेद पर पहले तो बहुत मोटी-मोटी दस-बीस गन्दी गालियों की बौछार की, फिर उसकी माँ-बहिन तक को याद किया और अन्त में चार दिन की खड़ी हथकड़ी का हुक्म दे दिया।

थोड़े ही दिनों में बड़ा परिवर्तन आ रहा था। प्रारम्भ में उसमें बर्दास्त की शक्ति नहीं थी। अपमान के प्रति उसके हृदय में शीघ्र ही विक्षोभ पैदा होता था और हाथ-पाँव हृदय का साथ देने लगते थे, परन्तु इस बार के जेल के अनुभव ने उस पर एक नया ही असर डाला था। अपमान की कील इतनी घुस गई थी कि वेदना के बाहर निकलने के

मार्ग बन्द-से हो गये थे। हरएक अपमान पर उसके शरीर में बिजली-सी दौड़ जाती थी, उसका हृदय उबल उठता था और दाँत भिच जाते थे, परन्तु मुँह बन्द रहता था। उसकी मुट्ठी बन्द हो जाती थी, परन्तु हाथ नहीं उठता था। उसके दिल में विष का ऐसा गहरा तालाब भरता जाता था जो ऊपर से बिल्कुल शान्त दिखाई देता था। दरोगा की गालियों को और सजा को उसने चुपचाप सुन लिया और कुछ भी न बोला। सजा मिल जाने पर चीफ हैडवार्डर ने उसकी ओर एक व्यंगभरी दृष्टि फेंकते हुए कहा—

अब होश ठिकाने आ जायेंगे। चार दिन में पीसकर रख दूंगा। गुस्ताख कहीं का।

अगले दिन सुबह आठ बजे उम्मेद को खड़ी हथकड़ी लगा दी गई। शायद बहुत से पाठक खड़ी हथकड़ी को न समझते हों, इसलिये संक्षेप में उसका वर्णन कर देना उपयोगी होगा। एक खम्बे में हथकड़ी इतनी ऊँचाई पर बाँध दी जाती है कि जिसे सजा दी गई है, उसे खड़ा करके और उसके हाथों को सिर से ऊँचा उठाकर यदि हथकड़ी में जकड़ा जाय तो खड़ा होने वाले की एड़ियाँ जमीन से कुछ उठी रहें। हाथों को हथ-कड़ी में जकड़कर अपराधी को खड़ा कर दिया जाता है और प्रायः आठ घण्टे तक उसी हालत में रखा जाता है। किसी पर जेल के शाहन्शाह चीफ हैडवार्डर की कृपा दृष्टि हो गई तो चार घण्टे के बाद उसे थोड़ा-सा आराम दे दिया जाता है, परन्तु यदि कोप-दृष्टि बनी रही तो निरन्तर आठ घण्टे उसी दशा में खड़ा रखा जाता है और आठ घण्टे समाप्त होने पर भी खोलने में दस या पन्द्रह मिनट की देर लग ही जाती है। उस बेचारे की जो हालत होती है, वर्णन की अपेक्षा उसका अनुमान लगाना ही बेहतर होगा। प्रायः कैदी इस दशा में बेहोश हो जाते हैं। पानी मांगे तो समय पर पानी नहीं मिलता और अधिक चिल्लाये तो गाली, घूसा और लाठी से पूजा की जाती है। ऐसी सजा में कैदी सर्वथा जेल के सन्तरियों के हाथ का शिकार बन जाता है।

उम्मेद पर चीफ हैडवार्डर की विशेष कोपदृष्टि थी। उसे विश्वास था कि उम्मेद के पास रुपया है या कम से कम वह दिला सकता है, परन्तु दिलाता नहीं। उसने यह भी निश्चय किया हुआ था कि रुपया निकालने का एक मात्र उपाय उम्मेद को कष्ट देना है। उम्मेद को खड़ी हथकड़ी का उग्रतम रूप देखना पड़ा। एक ही दिन में उसके पाँव काँप गये हाथ, छाती, में दर्द होने लगा, शरीर की जीवन-शक्ति मानो निकल सी गई। पहला समय होता तो शायद वह छटपटाता और अपने दुःख को मुँह से प्रकट करता, परन्तु दुनिया के कड़वे अनुभवों ने उसकी आत्मा को मानो किसी गहरी खन्दक में डाल दिया हो। आग और अन्धकार उसके हृदय के चारों ओर फिरते ही प्रतीत होते थे। उम्मेद बदल रहा था। वेदना और क्रोध की भीषण भावना उसकी अन्तरात्मा के रंग में परिवर्तन कर रही थी।

चार दिन की खड़ी हथकड़ी जब समाप्त हुई तो वह उम्मेद, जो अब तक परिस्थितियों से बाधित होकर अपराध करता था, अपराधी बन चुका था। उसके हृदय में चीफ हैडवार्डर, दरोगा, मेजर, सरकार और मनुष्य जाति के प्रति एक घोर प्रतिहिंसा की आग जल उठी थी। उन चार दिनों की मौन वेदना में यदि कुछ अनुभव किया तो यह कि न्याय और दया केवल दिल बहलाने के शब्द हैं। उनमें कुछ सच्चाई नहीं। उन चार दिनों में सारे जीवन के अनुभव उसकी आँखों के सामने से गुजर गये। उसे संसार और समाज अन्याय और अत्याचार का अड्डा-सा दिखाई देने लगा। उसने महसूस किया कि संसार में कमजोर का कोई नहीं। समाज उसी का साथ देता है, जिसके हाथ में हन्टर है। सरकार में उसी को संरक्षता मिलती है, जो पैसे से न्याय को खरीद सकता है। संसार और समाज के प्रति घोर विद्वेष और घृणा की अग्नि उसके हृदय में हाहाकार करने लगी। बड़े से बड़े संकटों और कांडों में भी जिस मनुष्यता ने उसका साथ नहीं छोड़ा था, वह कड़वे अनुभवों के कोड़े खाकर भागने को उद्यत हो गई।

(५)

खड़ी हथकड़ी से छूटने पर उम्मेद अपनी उसी बारग में वापस चला गया। वह जेल में अभी नया था। सिवा दिल्ली के कैदियों के और किसी से परिचित नहीं था और दिल्ली के कैदी चारों ओर बिखरे हुए थे। जो उसके समीप थे, उनमें अल्लादिया के सिवा कोई उससे बोलना तक पसन्द नहीं करता। वे उसके कष्ट को देखकर हँसते थे। और एक छिपा हुआ आनन्द लेते थे। खड़ी हथकड़ी की सजा के दिनों में उसे सबसे अलग चौदह नम्बर की बारग में रख दिया गया था। पुरानी बारग में वापस आ जाने पर उसे फिर रोज़ाना पिसाई का काम मिलने लगा। उम्मेद भी लाचार होकर मर खपकर उस काम को करता था। चीफ हैडवार्डर ने नम्बरदारों को समझा छोड़ा था कि उम्मेद के पीसे हुए आटे को तौलते हुए ध्यान रखा जाय और कुछ कम ही तोला जाय। इस कारण थोड़ी बहुत गाली-गलौज तो उम्मेद को रोज़ ही सहनी पड़ती थी। वह उसे सुनकर अन्दर से छटपटा उठता था परन्तु बाहर से बिल्कुल चुपचाप खड़ा रहता था, मानो कुछ सुना ही नहीं। घटनाचक्र ने उसे अन्दर ही अन्दर खौलना और चिढ़ना सिखा दिया था।

जीवन इसी कड़वी नीरसता के साथ व्यतीत हो रहा था और उम्मेद के हृदय में यह अनुभव प्रतिदिन दृढ़ हो रहा था कि मैं संसार में सर्वथा अकेला हूँ कि एक दिन उसे ड्योढ़ी से बुलावा आया। बुलावा लाने वाले ने उम्मेद से कहा कि तेरा भाई आया है, जरा जल्दी चल। उम्मेद को ताज्जुब हुआ। वह तो इस निश्चय पर पहुँच चुका था कि उसका संसार में कोई नहीं है, फिर यह भाई कहाँ से आ पहुँचा। अस्तु, ड्योढ़ी पर जाने से हरएक कैदी प्रसन्न होता है, क्योंकि नई शक्लें देखने को मिलती हैं और मनुष्य अपने-आपको बाहर की दुनिया के कुछ समीप अनुभव करने लगता है। उम्मेद भी बड़ी उत्सुकता ले ड्योढ़ी में जा पहुँचा।

ड्योढ़ी में भागसिंह उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उम्मेद को उसे देखकर बेहद खुशी हुई। इतनी खुशी हुई, जितनी खोए हुए बच्चे को

मां से मिलने पर होती है। उम्मेद उसके कन्धे पर सिर रखकर रोने लगा। ऐसे कैदियों की मुलाकात खुली जगह में कई अधिकारियों के सामने होती है। इस कारण कैदी अपने पूरे सुख-दुःख की बातें सम्बन्धियों को नहीं सुना सकते, परन्तु भागसिंह बड़ा अनुभवी और जांदार आदमी था। उसने आते ही फलों की एक टोकरी दरोगा साहब की भेंट चढ़ा दी थी और एक-एक रुपया उन सन्तरियों के हाथ में रख दिया जो मुलाकात के समय उपस्थित रहने वाले थे। इस कारण भागसिंह को उम्मेद से देर तक और अलग बातचीत करने में दिक्कत न हुई। भागसिंह ने जेल में यह बताया था कि मैं यू० पी० के बांदा जिले में पुलिस का इन्सपेक्टर हूँ। उम्मेद मेरा भाई है। आवारगी में पड़कर जेल में पहुँच गया है। मैं उसे समझा-बुझाकर सीधे रास्ते पर लाना चाहता हूँ। एक पैसे वाले आदमी को देखकर जेल के कठोर कानून भी मोम हो जाया करते हैं। दरोगा ने भागसिंह को उम्मेद से बातें करने की खुली छुट्टी दे दी। उम्मेद ने आँखों में आँसू भरकर अपनी दुःख कहानी भागसिंह को सुनाई और अन्त में राय पूछी कि मुझे यहाँ किस तरह निर्वाह करना चाहिए। भागसिंह के दिल पर उम्मेद की कष्टकथा सुनकर बड़ा धक्का पहुँचा। उसने उम्मेद से सिक्ख कैदियों के नाम पूछे और जब उसने कुछ नाम बतलाये तो भागसिंह को आश्चर्य हुआ कि इन बहादुर सिक्खों के रहते उम्मेद अकेलापन अनुभव करता है ? बात यह है कि जेल की दुनिया ही निराली है। इसमें कोई किसी की सुध नहीं लेता। ऐसे कैदी बहुत कम होते हैं जो दूसरों की चिन्ता में अपना लहू सुखायें। जब तक खास परिचय ही न हो, तब तक दीवार के पीछे क्या होता है, इसे देखने वाला जेल में उल्लू समझा जाता है। उम्मेद के पड़ौसी सिख भागसिंह के पुराने परिचित थे। कोई बीस साला था, तो कोई पच्चीस साला, सब बहादुर और निडर थे, परन्तु उम्मेद का परिचय न होने से उसकी ओर ध्यान नहीं देते थे।

जेल की ड्योढ़ी में मेजर साहब की अरदली में एक सिक्ख नम्बर-दार था। भागसिंह ने उससे अलग मिलकर अन्दर के सिक्खों के लिए उम्मेद के बारे में खास सन्देसा भेजा। सन्देशा इतना ही था कि भागसिंह आया था, वह कह गया है कि उम्मेद अपना आदमी है, उसका खास ख्याल रखना। जेल के अन्दर इतना सन्देशा पहुँचाने के बदले में उस नम्बरदार ने भागसिंह के सुपुर्द यह काम किया कि तुम मेरे घर पर यह खबर पहुँचा देना कि मेरा मिलने को जी चाहता है। घर के लोग आकर मिल जाएँ और खर्च के लिए कुछ रुपया भी लेते आवें। उसने यह भी कहलाया कि अगर बहुत शीघ्र किसी आदमी के हाथ ५०) जेलर के पास न पहुँच जायँगे तो मेरी ड्योढ़ी की नौकरी छिन जायगी और मुझे पतरा चलाने पर लगा दिया जायगा, इसलिए ५०) अत्यन्त शीघ्र भेज दें।

(६)

चार दिन से जेल में खूब सफाई का काम हो रहा है, क्योंकि लाहौर से जेलों के आई० जी० साहब (सबसे बड़ा अफ़सर इन्सपेक्टर जनरल) पधारने वाले हैं। दीवारों पर सफेदी हो रही है, जमीनों पर पोचा फिर रहा है, कैदियों के कपड़े बदले जा रहे हैं। रद्दी गेहूँ की बोरियाँ गुदाम के अन्दर के कमरे में डाली जा रही हैं और बाजार से अच्छे गेहूँ की बोरियाँ लाकर आगे धरी जा रही हैं। जिन कैदियों के पास जेल-अधिकारियों की कृपा से जेल के नियमों के विरुद्ध कुछ सामान था, वह ड्योढ़ी में पहुँचाया जा रहा था। सारांश यह कि लीपा-पोती का काम जोर से जारी था, ताकि आई० जी० साहब यह देख लें कि जेल में सब अच्छा है।

एक दिन सोमवार के प्रातःकाल आठ बजे ड्योढ़ी में घन्टे पर एक टकोर दी गई, जिसका अभिप्राय था कि साहब अन्दर आ रहे हैं। एक-दम तार-बर्की-सी दौड़ गई। हरएक आदमी मुस्तैद हो गया और कैदियों को हुक्म दिया गया कि कोठरियों में तैयार रहो और साहब के आने

पर खड़े हो जाओ । सारा जेल बन्द था । हरेक कैदी शलाखों के पीछे खड़ा था, ताकि अफसर पर कोई हाथ न छोड़ दे ।

आई० जी० अंग्रेज था और हिन्दुस्तानी कम समझता था । कैदियों के सामने जाकर कहता था—टुमारा क्या हाल ऐ । और प्रायः जवाब सुने बिना ही आगे निकल जाता था । अगर कैदी ने झटपट जवाब दे दिया तो सुपरिन्टेन्डेन्ट या दरोगा की ओर देखकर पूछता था 'क्या बोलटा ऐ ।'

जब से भागसिंह ने सिफारिश की, तब से सिख कैदी उम्मेद के दोस्त बन गये थे । वे पुराने घाघ थे । उन्हीं ने उम्मेद को समझाया कि बड़ा अच्छा मौका है जब आई० जी० आयें, तब अपनी शिकायतें उनसे कह देना । बदमाश चीफ हैडवार्डर की खूब बुराई करना और साहब से रहम की प्रार्थना करना । यद्यपि उम्मेद को प्रार्थना की बात अच्छी नहीं लगी । तो भी उसने हितैषियों की बात को मान लेना ही उचित समझा ।

थोड़ी देर बाद वह शाही-जुलूस बारग नम्बर सात में पहुँच गया । सबसे आगे चीफ हैडवार्डर रहमतुल्ला जा रहा था । वह आँखों से हरएक कैदी को घूरता जाता था कि खबरदार, अगर कोई शिकायत की बात मुंह पर लाये तो चमड़ी उधेड़ दूंगा । उसके पीछे दो लट्ठबन्द सिपाही थे । सिपाहियों से कोई दस कदम पीछे आई० जी० साहब झूमते हुए चले जा रहे थे । उनके सिर पर एक शानदार छत्र शोभायमान था, जो एक बहुत लम्बे-चौड़े पीली बर्दी वाले पठान के हाथ में पकड़ा हुआ था । आई० जी० के पीछे भीगी बिल्ली की तरह दुबके हुए मेजर, दरोगा, कई नायब दरोगा, दसों जमादार और बीसियों नम्बरदार लाइन बाँधे चले जा रहे थे । समझा जाता था कि यह सब समारोह साहब की रक्षा के लिये हैं ।

आई० जी० साहब उम्मेद की कोठरी के सामने तशरीफ लाये । उम्मेद कोठरी के सींखचेदार दरवाजे के पास खड़ा था । साहब के सामने

आते ही उसने कहा—

साहब, मैं कुछ कहना चाहता हूँ।

साहब ठिठक गया। उसने पूछा—

वैल टुम क्या बोलता है ?

उम्मेद ने कहा—हजूर ये लोग मुझे दिक करते हैं, पैसे माँगते हैं, और जब नहीं देता तो.........।

उम्मेद की बात मुँह में ही कट गई और साहब आगे निकल गया। साहब ने मेजर से पूछा—

वो आडमी क्या माँगटा ऐ।

मेजर ने जवाब दिया—हजूर वह कह रहा था कि आपकी इनायत से बहुत खुश हूँ! कोई कष्ट नहीं। साहब बहुत खुश हुआ।

आगे गया तो सिक्ख कैदियों की कोठरियाँ थीं। उन सिक्खों को बड़ा साहब पहचानता था वे चारों आदमी कुछ महीने हुए रानीमण्डी जेल की कोठरियों से सुरंग लगाकर भाग गये थे। दो दिन के पीछे एक नदी के किनारे शराब पीते हुए सब पकड़े गये और गिरफ्तार करके जेल में लाये गये। उन्हें भागने के अपराध में दो-दो साल सख्त जेल की सजा दी गई। जिसकी पचास साल की सजा थी, अब उसकी बावन की हो गई। वह कैदी उस दो साल की फुलझड़ी पर मुस्कराया और हथकड़ी बेड़ी पहनकर सुलतानपुर जेल में दाखिल हो गया।

साहब उस कैदी को देखकर ठहर गया और बोला—वैल टुम यहाँ आ गया ऐ। क्या टुम फिर भागना माँगटा ऐ ?

कैदी पुराना खुर्राट था। बोला—हजूर, भागना तो माँगता है, पर भागने को जी नहीं चाहता। बाहर रोटी वक्त पर नहीं मिलती।

साहब ने उसका मतलब समझ लिया और मेजर से अंगरेजी में कहा कि इसे बतला दो कि तुम यहाँ से नहीं भाग सकते। यह जेल बहुत मजबूत बनाया गया है। यहाँ से भागना नामुमकिन है।

मेजर ने बात दुहरा दी। कैदी हारने वाला नहीं था। बोला—

साहब, दुनिया में नामुमकिन कुछ भी नहीं है। भागा तो यहाँ से भी जा सकता है।

साहब के माथे पर त्योरी आ गई। बोला—

Nonsense. This jail quite inpregnable. Is it not ?

(बेहूदा बात है। यह जेल तोड़ा नहीं जा सकता। क्या यह ठीक नहीं है ?)

जेलर ने उत्तर दिया—Yes, it is Sir. He is a fool.

(हाँ, आपका कहना ठीक है। वह तो बेवकूफ है)

कैदी 'फूल' शब्द को समझता था। उसने चमककर कहा—

खैर, कौन फूल है और कौन पत्थर, देखा जायगा।

साहब आगे निकल गया। जो नम्बरदार और जमादार साथ चल रहे थे, उन्होंने मुश्किल से हंसी रोकी। पास की कोठरी में जो कैदी था, उसने हीरासिंह की बात सुन ली थी। साहब अभी दो कदम ही आगे बढ़ा होगा कि उसने ऊँचे स्वर में कहा—वाह शेर, खूब, कहा।

मेजर, दरोगा और चीफ हैडवार्डर दाँत भींचकर रह गये। यहाँ इन चारों कैदियों के नामों से परिचित करा देना आवश्यक है। उम्मेद ग्यारह नम्बर की कोठरी में रहता था। बारह नम्बर की कोठरी में हीरासिंह, तेरह नम्बर में जवाहरसिंह, चौदह नम्बर में रतनसिंह और पन्द्रह नम्बर में नानकसिंह को बन्द किया जाता था। कोठरी नम्बर सोलह में कालेखाँ को रखा गया था। वह एक तरह से चारों सिक्खों पर पहरेदार का काम करता था।

आई० जी० साहब का राउण्ड खतम होने से पहले ही हीरासिंह और साहब की झपट का समाचार सारे जेल में हवा की तरह फैल गया। तरह-तरह की चेमेगोइयाँ होने लगीं। किसी ने कहा—हीरासिंह ने

बतंगड़ तो बहुत बड़ा हाँक दिया है, पर सुलतानपुर जेल से भागना बिलकुल नामुमकिन है। दूसरे ने कहा कि नहीं भाई, यह हीरासिंह और उसकी पार्टी के बड़ी बला के आदमी हैं। कुछ-न-कुछ करके दिखायेंगे। ड्योढ़ी पर जाकर साहब ने सुपरिन्टेन्डेन्ट और दरोगा से हीरासिंह और उसके साथियों के बारे में बातें कीं और उन्हें सावधान रहने की प्रेरणा की। उन दोनों अधिकारियों ने अपने अफसरों को विश्वास दिलाया कि हीरासिंह की बकवास फिजूल है। यहाँ से हवा भी चाहे तो भागकर नहीं जा सकती। उसे जाने के लिये इजाजत लेनी पड़ेगी।

साहब जेल का सुन्दर लिफाफा देखकर चला गया। वह रिपोर्ट में लिख गया कि जेल की सफाई अनुकरणीय है, नियन्त्रण कमाल का है, सुपरिन्टेन्डेन्ट और जेलर का प्रबन्ध बहुत अच्छा है। जाते हुए हुक्म दे गया कि सब कैदियों को एक-एक दिन की माफी दे दी जाय।

साहब के जाने के बाद जेल के अधिकारियों का दरबार लगा। मेजर साहब की हाजिरी में दरोगा, असिस्टेन्ट दरोगा और चीफ हैडवार्डर बुलाये गये। एक मेजर साहब बैठे थे, शेष सब खड़े थे। यह जेल का नियम है। सुपरिन्टेन्डेन्ट के सामने कोई कर्मचारी कुर्सी पर नहीं बैठ सकता।

मेजर साहब ने जेलर की ओर देखकर कहा —

राय साहब, आज हीरासिंह ने जो चैलेंज दिया है, इसका उसे ऐसा जवाब मिलना चाहिये कि उम्र भर याद रखे। इस बदमाश की यह हिमाक़त। अब की ऐसा सबक देना चाहिए कि फिर सिर उठाने लायक न रहे।

दरोगा साहब बोले—मेजरसाहब, आप ज़रा फिक्र न करें। मैं इस मरदूद का दिमाग ऐसा सीधा करूँगा कि तोबाह कर देगा। अपने को समझता क्या है? सिर्फ आपका हुक्म चाहिये। आपके पास अगर कोई शिकायत आये तो आप उस पर कान न दीजियेगा। फिर देखिये, अगर सात दिन में हीरासिंह के साथी नाक न रगड़ दें।

मेजर—यों तो मेरी इजाजत है कि आप उस पार्टी को सीधा कर दीजिये, पर यह तो बतलाइए कि आप करना क्या चाहते हैं ?

दरोगा—हजूर, मेरी स्कीम तो बहुत सीधी-सादी है। पहला काम तो यह करूँगा कि उन चारों आदमियों को अलग तेरह नम्बर की बारग में बन्द करूँगा, जहाँ उनके पास किसी सिक्ख या हिन्दू कैदी का आना-जाना असम्भव हो। उस बारग पर केवल पठानों का पहरा रखा जायगा। आप जानते हैं, पठान सिक्खों के जानी दुश्मन हैं। वह उन पर ऐसी कड़ी नजर रखेंगे कि बारग में परिन्दा भी न फटकने पायगा। चारों बदमाशों को रातदिन कोठरियों में बन्द रखा जायगा। उनका साथी, वह जो उम्मेद नाम का बदमाश है, उसे भी उनके साथ ही बन्द कर दिया जायगा। ऐसी दशा में उनके भागने का कोई डर नहीं रहेगा।

मेजर साहब दरोगा की अक्लमन्दी के कायल थे। खुशी से उछल पड़े। कहने लगे—ठीक है, जो इन्तजाम तुमने सोचा है, उसके हो जाने पर उनके फरिश्ते भी जेल से न भाग सकेंगे। उल्लू कहीं के। क्या मुझे भी मेजर भल्ला समझ लिया है कि आँखों में धूल झोंककर भाग जायँगे।

मेजर भल्ला उस जेल का सुपरिन्टेन्डेन्ट था, जिसमें से हीरासिंह और उसके साथी एक बार भाग चुके थे।

उसी शाम को पाँचो आदमी दूसरी संगीन बैरक में बदल दिये गये और उन पर पठान नम्बरदारों का कड़ा पहरा बिठा दिया गया।

(६)

रात के बारह बजे थे। जेल भर में गहरा सन्नाटा था। केवल बुर्ज पर से थोड़ी-थोड़ी देर के पीछे आवाज आती थी—बारग नम्बर ए······क। उत्तर मिलता था—सब अच्छा·····आ······। इसी प्रकार चौदह बारगों के पहरेदारों को पुकारा जाता था। ठीक उत्तर मिलने पर बुर्जवाला आदमी कहता था—शाबास। वाह मेरे शेर, थोड़ी

देर तक इस तरह की आवाजें आतीं और फिर सन्नाटा हो जाता। सब कैदी, दिन भर के थके-माँदे, कम्बलों पर पड़े सो रहे थे। पहरेदार आधी जागती और आधी सोती-सी दशा में ऊँघ रहे थे और जेल के अधिकारी बेफिक्री से चारपाइयों पर आराम कर रहे थे।

सब जगह शान्ति थी, परन्तु बारग नम्बर तेरह में चैन कहाँ? वहाँ चारों सिख कैदी जाग रहे थे और अपनी-अपनी कोठी के सलाखों-दार दरवाजे के पास खड़े परस्पर बातें कर रहे थे। उस समय बारग में गुलामहुसैन नम्बरदार का पहरा था। गुलामहुसेन पंजाबी मुसलमान था। पंजाब के जेलजीवन की यह एक मजेदार बात है कि वहाँ पंजाबी मुसलमानों की सहानुभूति पठानों की अपेक्षा सिखों के साथ अधिक रहती है। पठान नम्बरदारों का उग्र स्वभाव ही इसमें विशेष कारण है। वह सबको एक ही लाठी से हाँकते हैं, हिन्दू हो या मुसलमान।

गुलामहुसैन हीरासिंह की कोठरी के दरवाजे पर खड़ा था। दोनों के कान और मुँह पास-पास थे। गुलामहुसेन दबी जबान से कह रहा था—

पर मेरी ड्यूटी आज से सातवें दिन फिर यहीं पर होगी। उस दिन कोई काम न होना चाहिये। या तो उससे पहले दिन हो या पीछे। नहीं तो बेईमान रहमतुल्ला मेरी चमड़ी उधेड़ देगा। हीरासिंह ने जवाब दिया—

हम आज से छठी रात को ही काम कर डालेंगे। तुम कुछ भी चिन्ता न करो। तुम पर आँच न आने पायेगी।

गुलामहुसैन—तो फिर लाओ रुपया। कम से कम १००) में पाँच गज तार आ सकेगी।

हीरासिंह ने आश्चर्य से पूछा—१००) रुपये? इतने का क्या होगा? तार तो मुश्किल से एक रुपये की होगी।

गुलामहुसैन—तार तो एक रुपए की होगी, पर अन्दर आने के लिए तो निन्नानवे रुपए से कम न लगेगा। कुछ ज्यादा ही लगे तो

ताज्जुब नहीं।

हीरासिंह—भाई, तुम तो बहुत महंगा सौदा करते हो। लो ५०)ले लो और तार मँगवा दो।

गुलामहुसैन—हीरासिंह, जानते हो, तार मँगाने में जान की बाजी लगानी पड़ेगी। अगर पकड़ा गया तो सजा पाऊँगा और न जाने किस दोजख में पटक दिया जाऊँगा। नम्बरदारी और माफी तो छिन ही जायगी। क्या इतना खतरा वैसे ही उठा लूंगा। जब रुपयों से दस आदमियों के मुँह बन्द कर दूंगा, तब कहीं काम बनेगा।

हीरासिंह—अच्छा, सौ रुपया ही लो। पर देखो, काम कल रात से पहले हो जाना चाहिए। चौकन्ने रहकर काम करना। किसी को खबर न लगने पाये।

हीरासिंह और उसकी पार्टी आई० जी० साहब की ललकार का जवाब देने पर तुल गई है। वह भागकर सिद्ध कर देगी कि हिम्मत वालों के लिए कोई भी किला अभेद्य नहीं है।

हीरासिंह ने अपने गले पर हाथ की थपड़ी दी और एक-एक करके छः मोहरें उगल दीं। गुलामहुसैन उन मोहरों को लेकर पहरे पर जा बैठा।

दूसरे रोज सुबह गुलामहुसैन अपने दोस्त चन्दनसिंह सिपाही की तलाश में निकला। पुराने नम्बरदारों को जेल में घूमने की आजादी होती है। थोड़ी देर तलाश करने पर गोदाम के पास चन्दनसिंह मिल गया। गुलाम उसे एकान्त में ले गया।

गुलाम ने कहा—भाई, आज एक काम आ पड़ा है। तुम्हारी मदद से ही हो सकेगा। बहुत खतरे का भी नहीं है, बोलो, करोगे ?

चन्दन—यार, पहले काम तो बताओ तुम्हारा यह क्या तरीका है कि न हवा, न बादल, यों ही बरसने लगे। आखिर यह तो कहो कि काम क्या है ?

गुलाम—काम जरा-सा है और दाम बहुत है। काम तो इतना है

कि पाँच गज मोटी लोहे को काटने वाली तार लाकर मुझे दे दो। चीज तो रुपये-दो रुपये की होगी पर दाम मिलेंगे १०) रुपये। बोलो, मंजूर है।

चन्दन—वाह दोस्त, तुमने तो गला काटने का अच्छा तरीका निकाल लिया। लोहा काटने की तार जेल में लाना तो भाई, जोखम का काम है। पकड़ा गया तो नौकरी तो जायगी ही, साथ ही दो-चार साल के लिये तुम लोगों के साथ जेल में भी बन्द होना पड़ेगा। दस रुपये में यह काम नहीं हो सकता।

गुलाम—अच्छा भाई १५) दिला देंगे। बस, अब चुप हो जाओ। १५) कम नहीं हैं।

चन्दन—१५) तो बहुत कम हैं २५) दिलवाओ तो कोशिश करूं।

थोड़ी-सी बहस के बाद २०) पर सौदा तय हुआ। गुलाम ने २०) अन्टी से निकालकर चन्दन को दे दिये और सारे मामले को गुप्त रखने का वायदा लेकर यह भी बतला दिया कि तार की जरूरत हीरासिंह को है।

चन्दनसिंह ने उसी दिन तार लाने का वायदा किया और यह भी बतला दिया कि शाम को सात बजे गुलामहुसैन को एक कागज में लिपटा हुआ तार का बंडल रसोई घर में बोरियों के पीछे पड़ा हुआ मिल जायगा।

गुलामहुसैन बात का पक्का निकला। रात को नौ बजे तार की पुड़िया हीरासिंह के हाथों में पहुँच गई। हीरासिंह ने एक-एक गज के टुकड़े जवाहरसिंह, रत्नसिंह, नानकसिंह और उम्मेद को बाँट दिये। एक टुकड़ा अपने पास रखा। उसी रात दरवाजे की शलाखों को ऐन लोहे की चौखट के पास से घिसने का काम जारी हो गया। रात भर तार से रगड़कर शलाख को कमजोर करने की कोशिश करते और सुबह होने से पहले तार को लपेटकर अपने केसों में छिपा लेते।

पाँच रातें इस काम में गुजर गईं। परिणाम काफी अच्छा निकला।

शलाखें चारों ओर से इतनी काफी घिस गई थीं कि अब हाथ के धक्के से टूट सकतीं थीं। उधर जेल वालों की ओर से बहुत कड़ा पहरा था। रात और दिन बारग पर नज़र रहती थी। कैदी एक घण्टे के लिए भी बाहर नहीं निकाले जाते थे। खाने का सामान कोठरी के अन्दर ही पहुँचा दिया जाता था। वह शैतान कैदी कालेखाँ खास रियायत देकर समय से पहले नम्बरदार बना दिया गया था और उसका विशेष पहरा इन पाँचों सिख कैदियों पर था।

कालेखाँ यों ही दिल का काफी काला था। पर उम्मेद से तो मानो उसे विशेष चिढ़ हो गई थी। वह उसे जहरीली आँखों से देखने लगा था। चीफ हैडवार्डर की मेरहबानी से अब उसे ऐसा मौका मिल गया कि वह उम्मेद पर अपने अकारण द्वेष की अड़ांस निकाल सके। यों तो वह सभी कैदियों से बहुत कड़ाई और रुखाई का व्यवहार करता था। परन्तु उम्मेद पर तो मानो वह अत्याचार बरसा रहा था।

कोठरी में रहने वाले कैदियों के लिए रात को उनकी कोठरी में ही टट्टी का पतरा रख दिया जाता। पतरा लोहे की छोटी-सी चिलमची को कहते हैं, जो ऊपर से खुली होती है। सुबह उन लोगों को उसी में शौचादि करना होता है। वह पतरा जेल के खुलते ही उठा दिया जाता था। कालेखाँ ने मेहतर को खास हिदायत कर दी थी कि आम तौर पर दस बजे से पहले उम्मेद की कोठरी में से पतरा न उठाया करे। यह भी समझा दिया था कि यदि अकस्मात् कोई अफसर आ जाय तो कह देना कि सुबह को तो पतरा उठा दिया था, पर यह दूसरी बार उम्मेद के कहने पर ही रखा गया है।

रोटी देने वाले को कालेखाँ ने समझा दिया था कि जो रोटी खूब जली हुई हो, वह उम्मेद को दी जाय और साग या दाल बहुत ही कम दिया जाय।

इन और ऐसी ही अन्य कठोर आज्ञाओं के लिये कालेखाँ ने चीफ हैडवार्डर से अनुमति ले ली थी। दोनों ही बिना किसी कारण के उम्मेद

से जले बैठे थे।

उम्मेद इन सब अत्याचारों को चुपचाप सह रहा था, पर पाठक कहीं इस चुपचाप को शान्ति का चिन्ह न समझें। जीवन भर में उसका हृदय इतना अशांत कभी नहीं हुआ, जितना इस समय था। उसके दिल में क्रोध और घृणा का तूफान लहरें मार रहा था। उसने जीवन में जान-बूझकर किसी का बुरा करने की चेष्टा न की, पर उसे सदा समाज की संस्थाओं के अत्याचारों का शिकार ही बनना पड़ा। उसके हृदय-पट पर अत्याचारों का एक लम्बा नाटक-सा चित्रित हो गया था, जिसमें कई पात्र स्पष्ट और कई अस्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे। बचपन, जवानी और समय से पूर्व आई हुई प्रौढ़ता के सब दृश्य उसकी आँखों के सामने से गुजर जाते थे और वह सब उसके मुँह में कड़वा स्वाद और आत्मा में कड़वी हूक छोड़ जाते थे। सुलतानपुर जेल में आकर, केवल इसलिये कि वह रिश्वत नहीं दे सका, उस पर जो अकथनीय अत्याचार हो रहे थे, उन्होंने ही उसे दीवाना-सा बना दिया था। वह संसार से बेजार हो रहा था, वह जीवन से तंग आ गया था, क्योंकि उसे भूत, वर्त्तमान और भविष्य तीनों में अन्धकार-ही-अन्धकार दिखाई दे रहा था। उसकी चुप्पी का यह कारण नहीं था कि वह सब कष्टों को शान्ति और सन्तोष से सह रहा था, प्रत्युत यह था कि उन कष्टों के वर्णन के लिये उसके पास शब्द नहीं थे। भावों की उग्रता ने मानो उसके सब द्वार बन्द कर दिये थे। ज्वालामुखी के पेट में लावा लहरें मार रहा था, उसे केवल रास्ता मिलने भर की देर थी, पर लावा इतना अधिक और गाढ़ा था कि छोटे द्वार से होकर उसका निकलना सम्भव नहीं था।

कालेखाँ इस समय अपने उग्रतम रूप में था; वह उम्मेद को कष्ट भी देता था और दिनरात गालियों की बौछार भी करता था। उम्मेद को कष्ट देकर उसे एक विशेष प्रकार का आनन्द मिलता था। उम्मेद का क्रोध भी उसी में केन्द्रित होता जा रहा था। वह उसकी नजरों में माता को धक्का देने वाले सिपाही, बचपन में बेंत लगाने वाले जेली, कारखाने

में अत्याचार करने वाले भरूचा और सुलतानपुर के सब जेल अधिकारियों का प्रतिनिधि-सा दिखाई दे रहा था। वह कालेखाँ की ओर देखता, उसकी गालियों को सुनता, उसके दिये हुए कष्टों का अनुभव करता और दाँत भींचकर रह जाता।

(७)

जेल के चीफ हैडवार्डर रहमतुल्ला का वर्णन पाठक पढ़ चुके हैं। वह नाम को तो केवल चीफ हैडवार्डर ही था, परन्तु असल में वह वहाँ का पूरा तानाशाह था। उसकी हेकड़ी के आगे सबको हार माननी पड़ती थी। दरोगा और सुपरन्टेन्डेन्ट को उसी के इशारे पर नाचना पड़ता था, क्योंकि वह उनका अन्नदाता था। दरोगा की तनख्वाह सिर्फ १५०) माहवार थी, पर पन्द्रह साल की सर्विस में एक लाख रुपया जमा कर चुका था। सुपरिन्टेन्डेन्ट साहब ४००)तलब पाते थे, पर १०००)माहवार खर्च करते थे। यह सब रहमतुल्ला की कृपा का फल था। जिसकी इतनी ताकत हो, उसकी शान भी वैसी ही होनी चाहिये। सुलतानपुर जेल के चीफ हैडवार्डर की शान कुछ कम नहीं थी। जब चाबियों का गुच्छा हाथ में लेकर दो-चार वार्डरों के साथ वह निकलता था, तो उसकी चाल में वह मस्ती होती थी, वह अभिमान होता था कि शायद किसी सम्राट् की चाल में न हो।

यह दशा घर के दरवाजे के बाहर तक रहती थी। घर के अन्दर पहुँचकर नकशा ही बदल जाता था। रहमतुल्ला की उम्र इस समय कोई पचास साल की होगी। बीस साल की उम्र में उसकी पहली शादी हुई थी। किस्मत से बीबी बहुत अच्छी मिली। मीठे स्वभाव की थी और शरीफ। पच्चीस साल तक जीवित रही। रहमतुल्ला का मिजाज तेज था, तो उसका नर्म। वह छुरी था, तो यह पानी। कहाँ तक काटता, अच्छी निभ जाती थी। रहमतुल्ला उस पर काफी सख्तियाँ करता था, पर वह सब सह लेती और पड़ी रहती थी। जेल की नौकरियों में जो एक फटकार प्रायः सब कर्मचारियों पर पड़ा करती है, वह रहमतुल्ला पर भी

थी। उसके कोई संतान नहीं हुई। पर सन्तान के बिना बहिश्त कहाँ? रहमतुल्ला ने सन्तान की फिक्र में दूसरी शादी कर डाली। उस समय उसकी आयु पैंतीस साल की थी। दूसरी बीवी शादी के वक्त भी आधी बीमार थी, शादी के पीछे बीमारी और बढ़ गई। आठ साल जीवित रही, पर बीमारी से छुटकारा न मिला। रहमतुल्ला ने इलाज पर सैंकड़ों रुपया खर्च कर दिया, पर न तो दूसरी बीवी को रोग ने छोड़ा और न बच्चा हुआ। मियाँ रहमतुल्ला फिर बहिश्त की ड्योढ़ी के बाहर ही रह गये। आठ साल के बाद दूसरी बीवी मर गई। पहली बेचारी ने ये आठ साल बड़े धीरज से विताये। रहमतुल्ला और बीमार दोनों की सेवा करती रही। दूसरी बीवी के मरने पर रहमतुल्ला ने कानों पर हाथ रखा और अहद किया कि अब बच्चा हो या न हो, दूसरी शादी न करूँगा।

रहमतुल्ला की उम्र जब चौवालीस साल की हुई तो उसकी बीबी मर गई। घर सूना हो गया। चारों ओर से रिश्तेदारों ने भी जोर दिया तो तीसरी शादी की तैयारी हो गई। रहमतुल्ला के दाढ़ी मूंछ के बहुत से बाल पक गये थे। कई दिनों तक उन पर जर्मन खिजाब का प्रयोग होता रहा, तो कुछ काले और कुछ भूरे हो गये। शादी हो गई। दुल-हिन की उम्र शादी के समय सोलह साल की थी।

पचास साल का खाविंद, सोलह साल की बीबी। थोड़े ही दिनों में तराजू के पलड़े बदल गये। जो रहमतुल्ला बेचारी पहली बीबी पर रात दिन हावी रहता था, वह इस नई बीबी के सामने थर-थर काँपता था, तीसरी बीवी शरीर की खूब हृष्ट-पुष्ट थी और जुबान की तेज़। उसने थोड़े ही दिनों में चीफ हैडवार्डर साहब की सारी शेखी झाड़ दी। आप घर के दरवाजे पर पहुँचकर बहुत सावधान हो जाते थे, क्योंकि ऐसी दशा में, जब पैर थर-थर काँप रहे हों, घर में घुसते शर्म आती थी। अपने डर को दबाकर, पैरों को मजबूत करके, यह सोचते हुए घर में घुसते थे कि आज मैं उससे किसी तरह न हारूँगा, वह अपने को समझती

क्या है, पर जब सामने जाते और उसकी शेरनी की-सी आँखें देखते, तो सब मनसूबे ढीले पड़ जाते और भीगी बिल्ली की तरह घर के कोने में दुबक जाते।

आज जुम्मे का दिन है। रहमतुल्ला शाम की नमाज के लिए शहर जायगा। बीबी की फरमायश थी कि एक ऊँची एड़ी का बढ़िया शू उसके लिए आना चाहिए। रहमतुल्ला का हाथ इस समय तंग था। तनख्वाह ख़तम हो चुकी थी और कैदियों से रक़म के शीघ्र वसूल होने की आशा नहीं थी। वह शू की फरमायश को टाल रहा था। बीबी का पारा उबलने की सीमा तक पहुँच रहा था। वह चीखकर कह रही थी—

पैसा कहाँ से आये, इसकी मुझे पर्वाह नहीं, कहीं से ला, पर मुझे आज शाम तक शू चाहिये। अफसरों का पेट भरने को तो खुले पैसे आ जाते हैं और मेरे लिए खर्च करते हुए बुखार चढ़ने लगता है। मैं ऐसी बहानेबाज़ी नहीं चलने दूँगी। शू लाना ही पड़ेगा। रहमतुल्ला के घर की दीवार दूसरे वार्डर के घर से मिली हुई थी। बीबी की चिल्लाहट दूर तक का दौरा लगा रही थी। रहमतुल्ला डर रहा था कि और लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे। उसने दबी हुई ज़ुबान से कहा—

पर तू इतना क्यों शोर मचाती है, आहिस्ता क्यों नहीं बोलती ?

बीबी ने आवाज़ को और बढ़ाकर कहा—

शोर मचाऊँगी और खूब मचाऊँगी। मैं आहिस्ता क्यों बोलूँ ? जिसे सुनना हो, सुन लो कि यह मरदुआ मुझे कंगालों और फकीरों की तरह रखने के लिए ब्याहकर लाया है।

रहमतुल्ला को गुस्सा आ रहा था। क्या यह औरत मुझे जलील ही करना चाहती है ? इसकी हिम्मत बहुत बढ़ी जाती है। आज इसका दिमाग ठीक ही कर देना चाहिये। उसने तेज़ होकर कहा —

देख बदज़ात, सीधी तरह चुप हो जा, नहीं तो अच्छा न होगा। अगर अब ज़ुबान से एक बात भी निकालेगी, तो मारते-ही-मारते भुर्ता बना दूँगा।

बीबी बैठी थी, खड़ी हो गई। चण्डी का रूप धारण करती हुई बोली—

तू मुझे मारेगा? है, इतनी हिम्मत कि हाथ उठाये। बुड्ढा कहीं का। एक धक्का दूँगी तो पानी न मांगेगा। आ तो इधर। यह तो सीधी ललकार थी। अब पीछे हटने में सख्त हतक होगी, पर रहमतुल्ला का जी घबरा रहा था। यह मैंने क्या कह डाला। अड़ोस-पड़ोस के लोग सुनेंगे या देखेंगे तो क्या कहेंगे?

पर सोचने का समय नहीं था। बीवी की आँखों से खून बरस रहा था। वह लड़ने को तैयार खड़ी थी। अब पीछे हटें तो शान डूबती है, हाथ उठाये तो डर लगता है। वह एक क्षण तक सहमा-सा खड़ा रह गया और सोचने लगा कि क्या करूँ, पर बीबी की आँखें सोचने कहाँ देती थीं। उनमें क्रोध और गुस्ताख़ी भरी हुई थी और बीबी का हाथ मारने या मार को रोकने के लिए उठ रहा था कि बाहर के दरवाज़े पर खटखटाने की आवाज़ आई। किसी अपराधी को फाँसी लगने का समय आ गया हो, रस्सी तख्ता सब तैयार हो, केवल अफसर के इशारे का इन्तज़ार हो कि इतने में उसके माफ़ीनामे का परवाना आ जाय, जो मानसिक दशा उस अपराधी की होनी चाहिये, रहमतुल्ला की उस समय वही दशा हुई। उसने सन्तोष का सांस लिया और यह कहता हुआ दरवाज़े की ओर चल दिया कि—देखूँ, यह दरवाज़ा कौन खटखटा रहा है।

पर्दे का घर था। बीबी दाँतों से होंठ काटती हुई पर्दे के पीछे चली गई।

दरवाज़ा खोला तो वहाँ चन्दनसिंह को खड़ा पाया। रहमतुल्ला ने अपनी मानसिक दशा को छिपाते हुए, काफी शान को बटोकर कहा—

क्या है ? इस वक्त क्यों आये हो ?

चन्दनसिंह ने होठों पर अँगुली रखते हुए धीरे से कहा—बहुत जरूरी और खुफिया बात है। अन्दर चलिये तो बतलाऊँ।

दोनों अन्दर चले गये और दरवाजा बन्द कर दिया। सेहन में चारपाई पड़ी थी, उस पर हैडवार्डर बैठ गया। चन्दनसिंह नीचे बैठा। दोनों में बातें होने लगीं—

चन्दनसिंह ने कहा कि हजूर, मैं आपको एक बहुत ही भारी खबर देने आया हूँ। पर दो शर्तें हैं। एक तो अगर उस मामले में मेरा कोई हिस्सा निकले, तो मेरा कसूर माफ करा दिया जाय और दूसरी यह कि उस खबर के देने से मुझ पर जो खतरे आएँगे, उनसे मुझे बचाने का वायदा किया जाय और पूरा इनाम भी मिले।

रहमतुल्लाखाँ ने उत्सुकता से पूछा—

ऐसी क्या खबर लाये हो ? सुनें तो सही।

पर जनाब, सुनाऊँगा तभी, जब आप मुझ से दोनों बातों का वायदा करेंगे।

अच्छा किया वायदा। पर याद रखना अगर खबर मार्के की न निकली या झूठी निकली तो चमड़ी उधेड़ दूँगा।

रहमतुल्ला खां के लिए वायदा शब्द की कोई कीमत नहीं थी। उसे तो काम से मतलब था। पर चन्दनसिंह के चेहरे और शब्दों से उसने अनुमान लगा लिया था कि मामला संगीन है। वह उन लोगों में से था, जो वायदा इसलिए करते हैं कि उसे तोड़ा जा सके।

चन्दनसिंह वायदे से खुश होकर बोला—

तो सुनिये। आज रात को पाँच कैदी भागने वाले हैं।

रहमतुल्ला के शरीर से मानो बिजली की बैटरी छू गई हो। एकदम चौकन्ना होकर बैठ गया और अधीरता से बोला—

पाँच कैदी···भागने वाले हैं···। कौन-कौन ?

वही हीरासिंह की पार्टी वाले। रहमतुल्ला के माथे पर त्यौरी की

रेखा खेलने लगी।

सुलतानपुर जेल से भागेंगे। नामुमकिन। यहाँ फँसकर तो हवा भी वगैर इजाजत के बाहर नहीं जा सकती। मैं अभी उन्हें ठीक किये देता हूँ। शैतानों को काल-कोठरी में न डलवा दूँ तो नाम नहीं।

चन्दनसिंह बड़ा धूर्त था। वह इस उद्देश्य से खबर देने नहीं आया था कि हीरासिंह की पार्टी के लोग न भाग सकें। इससे तो कुछ काम नहीं बनता था। उसने कहा—

लेकिन हजूर, अभी उनको बाँध देने से क्या होगा? इससे तो कुछ भी फायदा न होगा।

वह क्यों?

मान लो, आपने उन्हें किसी ऐसी जगह बन्द करा दिया, जहाँ से वह न भाग सके तो यह कैसे साबित होगा कि वह भागना चाहते थे और फिर आपकी कारगुजारी भी कैसे साबित हो सकेगी।

रहमतुल्ला खां पर इस दलील का असर पड़ा। वह कुछ सोचकर बोला—

ठीक है, तो तुम क्या राय देते हो?

मेरी यह राय है कि आप हीरासिंह को यह जाहिर कर दें कि आपको उसके भागने की तैयारी की खबर लग गई है। वह डर जायगा। तब आप उससे मोटी रक़म वसूल कर सकेंगे। वह मूज़ी बहुत पैसे वाला है। उसके और उसके साथियों के पास कई सौ गिन्नियाँ जमा हैं। वे उसकी मर्जी से ही निकल सकती हैं। पहले गिन्नियाँ निकलवा लीजिये और उसे भागने दीजिए।

क्या कहा, उसे भाग जाने दूँ? अगर भाग जाने दूँगा तो कर्नल साहब मेरा गला काट देगा। वह बड़ा हरामी है। और मेरी उम्र भर की नौकरी पर पानी फिर जायगा।

आप समझे नहीं हुजूर! मेरा मतलब यह नहीं कि उन्हें बिलकुल भाग जाने दीजिए। उनसे सौदा कर लीजिए। रुपया मिल जाने दीजिए

और उन्हें कोठरियों से बाहर भी हो जाने दीजिए। कोठरी से निकलते ही तो बाहर हो नहीं जायेंगे। कई दीवारें लाँघनी पड़ेंगी और फिर इतना ऊँचा कोट भी पड़ा हुआ है। उनके हाथ-पैर में हथकड़ियाँ होंगी, इस कारण जल्दी भाग भी न सकेंगे। आप उन्हें कोठरियों से निकल जाने दें और कोट पर गिरफ्तार कर लें। इससे दोनों काम निकल जायेंगे, रुपया भी मिल जायगा और गिरफ्तारी के बाद सरकार से वाहवाही भी।

धूर्त चन्दनसिंह की यह बात आहिस्ता-आहिस्ता चीफ हैडवार्डर के सिर में घुसने लगी। यह हो तो सकता है। एक ही ढेले में दो पक्षियों का शिकार क्यों न किया जाय? परन्तु मामला बहुत संगीन था। चीफ हैडवार्डर की जानकारी में कैदी भाग जाय, यह तो जेल के कानून के अनुसार बहुत भारी जुर्म है। जेल की कहावत है कि जेल में दाँये हाथ को बायें हाथ का भी यकीन न करना चाहिए। कुछ देर तक रहमतुल्ला विचार में पड़ा रहा। फिर पूछा—

तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि हीरासिंह वगैरह भागना चाहते हैं?

चन्दनसिंह ने जवाब दिया—

मुझसे खुद हीरासिंह ने कहा था।

वे किस तरह भागने की तैयारी कर रहे हैं? कौन-कौन साथी हैं और कोठरियों का ताला किस तरह तोड़ा जायगा? यह सब कुछ मुझे सिलसिले से बता दे, तो तुझे इनाम मिलेगा।

यह तो मुझे कुछ भी मालूम नहीं। मुझे हीरासिंह ने सिक्ख समझकर यह जानने के लिये भेद दे दिया था कि आज रात उनकी बारग में किसका पहरा होगा? मैं उससे यह वायदा कर आया हूँ कि उसे रात के पहरेदारों के नाम बतला दूँगा। मुझे जो कुछ मालूम हुआ था वह आपको बतला दिया। अब आप मालिक हैं।

रहमतुल्ला सोच में पड़ गया। आजकल उसे रुपये की सख्त जरूरत थी। बीबी का तक़ाजा भी ताज़ा था। वह डर रहा था कि चन्दनसिंह

के जाते ही बीवी फिर तलवार खींचकर खड़ी हो जायगी। अगर हीरासिंह से कुछ रुपया ऐंठा जा सके, तो काम बन जाय। दूसरी ओर नौकरी जाने का डर था। अगर कहीं भेद खुल गया तो बुढ़ापा खराब हो जायगा। कुछ देर तक चुप रहकर वह चन्दनसिंह से बोला—

अच्छा तो देख, तेरे और मेरे सिवा और किसी को इस बात का राज़ मालूम न होना चाहिए। अगर इस बात की हवा भी बाहर निकली तो देख लेना, तेरी गरदन उतार दूँगा। मामला बहुत ज़िम्मेदारी का है। अगर ज़रा-सी भी भूल हो गई तो दोनों बर्बाद हो जाएँगे।

चन्दनसिंह ने उत्तर दिया—

खाँसाहब! आप फिक्र न करें। जान जाती रहे, पर बात बाहर न जायगी।

अच्छा तो एक काम कर। तू हीरासिंह के पास जाकर ऐसा ज़ाहिर कर कि पोल खुल गई है और तेरी और उन सबकी जान का खतरा है। वह इससे जरूर घबरा जायगा। तब तू उसे समझा देना कि अगर वह एक हजार रुपया मुझे दे सके तो मैं रोक-टोक नहीं करूँगा। उसके काम के आदमी रात की ड्यूटी पर लगा दूँगा और वह भाग सकेगा।

यह और ऐसी बहुत-सी बातें चन्दन को समझाकर और फिर एक बार सब बातों को गुप्त रखने का वायदा लेकर रहमतुल्ला ने उसे रवाना किया।

चन्दन के जाने पर रहमतुल्ला की बीवी पर्दे से बाहर आ गई। उसने खाविंद से पूछा—

क्या बात थी? ऐसी धीरे-धीरे कानों में क्या सलाह हो रही थी?

रहमतुल्ला अब खुश था। वह अब अपनी जवान बीवी को खुश कर सकेगा। आज रुपये मिल गए तो शाम को वह अपनी बीवी के लिए

एक की जगह दस चीजें ला सकेगा। वह बोला—

एक चण्डूल फँसने वाला है। आज फँस गया तो भारी रक़म हाथ आ जायगी। तुम्हारी फरमायश भी पूरी हो जायगी।

यह जो आदमी खबर लाया था, वह तो सिक्ख जैसा था।

हाँ, इसका नाम चन्दनसिंह है। पर मेरा बहुत मोतबर आदमी है।

होगा, पर मैं तो समझती हूँ कि काफिर से मुसलमान को कभी फैज नहीं पहुँच सकता। इस आदमी से कहीं धोखा न मिल जाय।

रहमतुल्ला को बीबी की इस बात में हिमाकत मालूम हुई। जिस बात को समझती नहीं, उसमें बोलती क्यों है? पर कुछ कहने से झगड़ा बढ़ेगा और शेरनी अपने पंजे फैला लेगी, इसलिए रहमतुल्ला कोने में टँगे हुए चाबियों के बड़े गुच्छे को लेकर दरवाजे से बाहर निकल गया। अभी ड्योढ़ी में जाने का समय नहीं था, परन्तु बीबी से छूटने का दूसरा कोई उपाय भी नहीं था।

(८)

हीरासिंह चटाई पर पड़ा-पड़ा भागने की स्कीम बना रहा था कि चन्दनसिंह ने आवाज दी। वह हीरासिंह की कोठरी की चाबी ले आया था और कोठरी में घुसकर दरवाजे में फिर से ताला लगाकर अन्दर चला गया था। हीरासिंह चन्दनसिंह को कोठरी में देख घबराकर उठा और यह कहते हुए कि अरे, तू तो चोर की तरह भीतर घुस आया। आज क्या नई बात लाया है? चटाई का आधा हिस्सा उसने चन्दनसिंह को बैठने के लिए दे दिया।

चन्दनसिंह चटाई पर बैठ गया। हीरासिंह उत्सुकता से उसकी ओर देखने लगा। चन्दनसिंह जेल में बहुत खतरनाक तरीके का चालाक समझा जाता था।

चन्दनसिंह ने बहुत दबी जबान से कहना प्रारम्भ किया—

हीरासिंह! काम तो बिगड़ गया।

हीरासिंह की घबराहट बढ़ गई। उसने पूछा—

क्यों, क्या हुआ ?

चन्दन ने और भी अधिक संजीदा बनकर कहा—

तुम लोगों के भागने की कोशिश की खबर उस पाजी रहमतुल्ला को लग गई।

हीरासिंह ऊँचे पहाड़ की चोटी पर से गिरा। भागने की तैयारी पूरी हो चुकी थी और सारा प्रोग्राम तय हो चुका था। इस समय यह क्या आफत आई ? उसने पूछा—यह कैसे हुआ ?

चन्दनसिंह ने उत्तर दिया—मालूम होता है, कालेखाँ को किसी तरह खबर लग गई, क्योंकि वही यहाँ की खास ड्यूटी पर है। आज हैडक्वार्टर ने मुझे बुलाकर पूछा तो मैंने साफ इन्कार कर दिया कि मुझे कुछ मालूम नहीं।

हीरासिंह गहरी चिन्ता में पड़ गया। बोला—यह तो बहुत बुरा हुआ। काम सब तैयार था। इस बदमाश कालेखाँ ने सब गुड़-गोबर कर दिया। खैर, भाग सकें या नहीं, पर इस कालेखाँ को पूरी सज़ा दिये बिना न छोड़ूँगा। बच्चा जी मुझ से बचकर कहाँ जायगा। एक बार···! चन्दनसिंह ने बात काटकर कहा—कालेखाँ पर गुस्सा तो फिर निकाल लेना, पर अभी तो यह सोचना है कि भागने का क्या ढंग बनाया जाय ?

हीरासिंह बोला—जब उस भेड़िये को हमारे मनसूबे की खबर लग गई है तो भागना कैसे हो सकेगा ?

भेड़िये के सामने गोश्त का टुकड़ा फेंककर।

क्या मतलब ?

तू तो निरा बुद्धू है, जो इतना भी नहीं समझता। कुछ दे-दिलाकर उसका मुँह बन्द किया जा सकता है।

तू कैसे जानता है ?

मुझ से उस शैतान की कौन-सी बात छिपी है। उसके बहुत-से काम

तो मेरी मार्फत ही होते हैं। वह पैसे का गुलाम है, टुकड़े के पीछे दुम हिलाने वाला कुत्ता है; सामने टुकड़ा फेंक देने से उसकी आँखें बन्द हो जाएँगी।

हीरासिंह विचार में पड़ गया। जेल में सब से बड़ा जुर्म वहाँ से भागने का समझा जाता है। गिनती पूरी रहे तो सब ठीक है, परन्तु गिनती में कसर पड़ते ही आफत मच जाती है। वे जेल के अधिकारी निकम्मे समझे जाते हैं, जिनके समय में कोई कैदी भाग जाय। हीरासिंह जानता था कि रहमतुल्ला यदि रुपया लेकर आँखें बन्द कर लेगा तो वह एक तरह से जान पर खेल जायगा। उसे यह भी सन्देह था कि यह धूर्त बात पर पक्का नहीं रहेगा। इन मन में उठते हुए विचार-तरंगों को दबाकर उसने चन्दनसिंह से कहा—

परन्तु यदि रुपया लेकर रहमतुल्ला ने धोखा दिया तो ?

इसकी मैं गारण्टी करता हूँ, वह धोखा दे तो मेरी गर्दन काट देना।

हीरासिंह उन आदमियों में से था, जो न अपनी जान की कीमत लगाते हैं, न दूसरे की। अपनी हठ पर सब कुछ कुर्बान कर देते हैं। उसने चन्दनसिंह को लाल-लाल आँखें दिखाकर कहा—

तू हीरासिंह को जानता है। उससे धोखा करना आसान नहीं है, अगर मुझे धोखा दिया तो याद रखना, सिर काटकर रख दूँगा ! दुनिया के किसी कोने में भी जिन्दा न छोड़ूँगा।

चन्दनसिंह का दिल उन आँखों और उन शब्दों से काँप गया, परन्तु वह ऐसा कच्चा घड़ा नहीं था, पुराना पापी था। दिल को मजबूत करके बोला—

भला हीरासिंह को कौन नहीं जानता ? जो उसे धोखा देना चाहे समझ लो कि वह आग और शेर से खेलना चाहता है। रहमतुल्ला चाहे कितना बेईमान हो, पर वह तुम्हें धोखा नहीं दे सकेगा।

हीरासिंह कुछ देर के लिए चुप हो गया। एक बार तो उसके दिल में

आई कि जेल से भागने के विचार को छोड़ दे। जब हैडवार्डर को मालूम हो ही गया है तो वह भागने कहाँ देगा ? और अगर रुपया लेकर भी धोखा दे गया तो पकड़े जाएँगे ? परन्तु फिर ख्याल आया कि अगर न भाग सके तो भी यह खबर आई० जी० तक पहुँचे बिना न रहेगी। जब वह फिर कभी जेल के निरीक्षण को आवेगा तो हमारी आँखें कैसे उठेंगी ? वह जब ताना देगा कि हीरासिंह देखा, हमने कैसा मजबूत जेल बनाया है कि तुम न भाग सके, तो मेरे पास सिवा जहर खाकर मर जाने के कोई चारा न होगा। यह भी विचार आया कि सारी तैयारियाँ हो चुकी हैं, सलाखें कट चुकी हैं, औजार हाथ में हैं। यदि रुपया देकर रहमतुल्ला का मुँह बन्द हो सके तो क्या हर्ज है ? ऐसे कामों में खतरा तो होता ही है और अगर उस दुष्ट ने धोखा दे ही दिया और भागने के समय अलार्म कर दिया तो फिर देखा जायगा, मरना एक दिन है ही। वे न होंगे या हम न होंगे। अधिक से अधिक यही तो होगा कि पकड़े जाएँगे और साल-दो साल की सजा बढ़ जायगी। उससे कौन डरता है ? जहाँ पचास साल की सजा है, वहाँ बावन साल की सही।

ये ही सब विचार थे, जो हीरासिंह के मन में क्षण भर में घूम गये। उसने चन्दनसिंह से कहा—

बहुत अच्छा, मैं तुझ पर विश्वास करता हूँ। जा तू रहमतुल्ला से एक बार और पूछ आ। मैं उसे मुँह माँगी रक़म दूँगा। पर उसे कुरान की कसम खाकर कहना पड़ेगा कि वह हमारे भागने में किसी तरह की रुकावट न डालेगा। तू फौरन उसके पास जाकर जवाब ले आ।

चन्दनसिंह चला गया और हीरासिंह अपनी कार्रवाई में लगा।

(६)

हीरासिंह ने कोठरी के दरवाजे के पास आकर जोर से पुकारा— नम्बरदार-नम्बरदार।

उस बारग में दो नम्बरदार रहते थे। एक सारी बारग पर नम्बरदार था और दूसरा सिर्फ इन पाँच आदमियों पर। इन पाँच

आदमियों पर खास तौर से कालेखाँ को लगाया गया था। हीरासिंह की आवाज़ सुनकर कालेखाँ अपनी कोठरी से निकलकर आया।

पास आकर कालेखाँ ने पूछा—क्यों, क्या है ?

हीरासिंह ने कहा—हाजत हुई है। पतरा रखवाओ।

कोठरी-बन्द कैदियों के लिए मेहतर कोठरी में ही पतरा रख देता है। पतरा रखने का झरोखा कोठरी के पीछे की ओर से बना रहता है। उसी में से पतरा रख दिया जाता है और उसी में से उठा लिया जाता है।

कालेखाँ कोठरी में आराम कर रहा था। उसे वहाँ से उठकर आना पड़ा। यही उसे खिजाने के लिए काफी था। उस पर हीरासिंह ने टट्टी जाने की बात कह दी। उसका पारा चढ़ गया। बोला—रात-दिन टट्टी—रात-दिन टट्टी—नाक में दम कर छोड़ा है !

दूसरा समय होता तो हीरासिंह कोई करारी बात कहता, परन्तु इस समय वह कालेखाँ को बिगाड़ना नहीं चाहता था। बोला—

अजी नम्बरदार साहब, नाराज़ होने की कोई बात नहीं। बीमार तो हरएक आदमी हो जाता है। दो-तीन दिन से ज़रा तबीयत खराब थी। अब कुछ अच्छी है; पर बिलकुल ठीक नहीं हुई और कोई काम हो तो उसे रोक भी ले, पर हाजत तो नहीं रोकी जाती।

कालेखाँ हीरासिंह की नर्म बात से कुछ ठंडा हो गया और मेहतर को आवाज़ देने चला गया। हीरासिंह ने मौका पाकर उस ओर की दीवार में, जिधर जवाहरसिंह की कोठरी थी, तीन बार थपकी दी। जवाहरसिंह सचेत हो गया और उसने रनसिंह की कोठरी की ओर की दीवार में तीन बार थपकी दी। वह भी सावधान हो गया। इसी प्रकार दीवार की तारबर्क़ी से पाँचों आदमी सावधान होकर बैठ गये।

इतने में मेहतर पतरा लेकर आ गया। मेहतर का नाम हुसैना था। वह भी कैदी था। हुसैना हीरासिंह का खास आदमी था। उसे हीरासिंह ने एक बार बड़ी आफत से छुड़ाया था। वह एक जेल की

चोरी के मामले में फांस लिया गया था। बेचारा बुरी तरह मारा जाता अगर हीरासिंह पकड़ने वाले सिपाही को अपने पास से दस रुपए देकर न बचा लेता। हुसैना हीरासिंह का बड़ा उपकार मानता था, उसका हरएक काम करने को तैयार रहता था।

हुसैना ने पिछली ओर वाली खिड़की से पतरा रख दिया। हीरासिंह ने खिड़की के पास मुंह ले जाकर धीरे से कहा—सब से कह दे बारह बजे नहीं, दस बजे। हुसैना 'अच्छा' कहकर साथ की कोठरी के पीछे जाकर और पतरे वाली खिड़की के पास बोला—सरदार बारह बजे नहीं, दस बजे। फिर तीसरी, फिर चौथी, इस प्रकार दो मिनट में पांचों साथियों के पास यह खबर पहुंच गई कि भागने की कोशिश बारह बजे नहीं, दस बजे—दो घन्टे पूर्व की जायगी।

हीरासिंह ने समय में परिवर्तन क्यों किया, यह पाठक आसानी से समझ जायेंगे।

चारों कोठरियों में खबर पहुंचाकर हुसैना कुछ दूर जा खड़ा हुआ। यह उसने अच्छा किया, क्योंकि उसी समय कालेखां यह देखने के लिए उधर आया कि मेहतर पतरा रखने या उठाने के सिवा कोई दूसरा काम तो नहीं कर रहा। हुसैना अलग खड़ा है, यह देखकर कालेखां आगे निकल गया। हीरासिंह ने थोड़ी देर में कहा—हुसैना!

हां, सरदार जी, यह कहते हुए उसने हाथ में पतरा पकड़ लिया।

हीरासिंह ने आहिस्ता से पूछा—सब से कह दिया।

हां, कह दिया।

कीलें कब आयेंगी।

रोटी के समय। दाल के तसले में।

कालेखां ने देखा कि मेहतर अभी तक बारग से बाहर नहीं निकला, वह दरवाजे के पास से चिल्लाया—

अरे ओ भंगी, अभी तक यहीं खड़ा है।

हुसैना ने पतरा उठाया, उसमें मिट्टी के कुछ ढेले पहले से ही डाल लाया था। उन पर कुछ पानी पड़ गया था। उसे संभाले हुए बाहर चला गया। इसी प्रकार सुबह-शाम और कभी-कभी दोपहर के समय बन्द रहते हुए भी पाँचों दोस्त आपस में सलाह करते थे। हुसैना उनका दूत था।

कुछ देर पीछे चन्दनसिंह, रहमतुल्ला से मिलकर आ गया। कालेखाँ बारा में घूम रहा था, उसे टालने के लिए चन्दन ने उसे कहा—

खान, हैडवार्डर ने तुझे बुलाया है।

कहाँ ?

घर पर।

यहाँ कौन रहेगा ?

मैं रहूँगा।

बहुत अच्छा।

कहकर कालेखाँ बारा से बाहर चला गया और चन्दनसिंह हीरासिंह के पास आ गया।

हीरासिंह ने पूछा—कहो क्या हुआ ? उसने कुरान की कसम खाई या नहीं।

चन्दन ने हँसकर कहा—अरे कुरान की कसम में क्या रखा है। वह तो वह दिन भर खाया करता है। मैंने तो उसे उसकी जवान बीबी की कसम दे ली है। उसने वायदा किया है कि वह तब तक इस मामले को दबाये रखेगा, जब तक कि तुम लोग जेल की हद से बाहर न हो जाओगे। जेल की हद से बाहर हो जाने पर तो उसके बस की बात न रहेगी।

मुझे तो उसके किसी वायदे का भी भरोसा नहीं, पर खैर और किया भी क्या जा सकता। वक्त पड़े पर बिल्ली को भी दूध का पहरेदार बनाना पड़ता है।

चन्दनसिंह ने कहा—

तो निकालो रुपया ।

हीरासिंह ने पहले से ही गिन्नियाँ कपड़े के एक छोर में बाँध रखी थीं । निकालकर चन्दन के हाथ में दे दीं । चन्दन ने देखा काफी भारी हैं । वहाँ गिनने का सुभीता नहीं था, पर उसे विश्वास था कि हीरासिंह झूठ नहीं कहेगा ? उसने पूछा—

कितनी हैं ?

सत्तर ।

ठीक है ।

कहते हुए चन्दन ने उन्हें अपनी पगड़ी के नीचे बालों में रख लिया और चलने लगा । हीरासिंह ने अत्यन्त गम्भीर मुद्रा धारण करते हुए रोका ।

ठहरो, एक आखिरी बात सुनते जाओ । हीरासिंह बात का धनी है । जो कहता है, करके रहता है । यह रक़म भी अपनी बात को निभाने के लिए दे रहा हूँ । मैंने अपनी बात को निभाया है । तुम्हें भी निभाना पड़ेगा । अगर तूने या उस रहमानू ने धोखा दिया तो याद रखना उसकी और तेरी सारी नस्ल को तबाह कर दूँगा । इस जमीन के किसी कोने में जाकर भी तुम लोग हीरासिंह के पंजे से नहीं बच सकोगे ।

चन्दनसिंह उस धमकी से काँप गया । उसके मुँह से पूरी बात भी न निकली थी । हीरासिंह ने कहा—

अरे, जवाब क्यों नहीं देता । क्या पेट में कोई पाप है ?

चन्दन ने देखा, जवाब देना ही पड़ेगा, बोला—

नहीं सरदार, पेट में कोई पाप नहीं है । तुझे धोखा नहीं देंगे । जब तक तुम लोग जेल से बाहर न हो जाओ, तब तक हम लोगों की ओर से कोई बात न उठाई जायगी । बल्कि यह कोशिश होगी कि तुम्हारी बारग का पहरा कमज़ोर रहे । हाँ, एक बात पूछना मैं भूल गया । तुम लोग कितने बजे भागोगे ? यह जानना जरूरी है,

ताकि उसके आध घण्टा बाद तक इस बारग पर पहरा न लगाया जाय ।

हीरासिंह इस सवाल के लिए तैयार था। उसने उत्तर दिया—आज रात के बारह बजे ।

(१०)

आज रहमतुल्ला बहुत खुश था। उसे अनायास ही सत्तर गिन्नियाँ प्राप्त हो गई थीं । चन्दनसिंह अपना हिस्सा माँग रहा था, पर अभी तो उसे टाल ही दिया था । रहमतुल्ला ने सोच लिया था कि सुबह होने से पहले ही हीरासिंह आदि के साथ-साथ उनका साथी होने के अपराध में चन्दन को भी गिरफ्तार करवा दूँगा । तब उस गधे को पता चलेगा कि कैसे उस्ताद से वास्ता पड़ा है ।

उसने भी अपना कार्यक्रम बना लिया था। उसने निश्चयकर लिया था कि लगभग साढ़े ग्यारह बजे वह दरोगा के पास जायेगा औन उसे भागने के षड्यन्त्र की सूचना देगा । जब तक हीरासिंह की पार्टी सलाखें तोड़कर कोठरियों से बाहर निकलेगी, तब तक वह दरोगा तथा सिपाहियों को लेकर मौके पर पहुँच जायगा । इस तरह अपराधियों को ठीक मौके पर पकड़ लेने से उसकी कारगुज़ारी बढ़ जायगी । एक ओर से तो इनाम पा ही लिया हैं, दूसरी ओर से भी मिल जायगा । इस चौतर्फा कामयाबी की आशा से उसका दिल बल्लियों उछल रहा था ।

उसका दिन बड़ी खुशी से कटा। शाम को जब वह घर गया तो बीबी ने रक़म के बारे में पूछताछ आरम्भ की। थोड़ी देर तक रहमतुल्ला टालमटोल करता रहा, पर जब बीबी ने बहुत आग्रह किया और भविष्य में होने वाले बच्चे के सिर की सौगन्ध दी, तब भेद खोलना पड़ा और उसने बीबी को बतला ही दिया कि एक कैदी से पचास गिन्नियाँ प्राप्त हुई हैं । बीस गिन्नयों का फेर इसलिए रख लिया था कि कुछ अपने जेबखर्च के लिए रखना भी उचित समझा । रहमतुल्ला के बाल पक गये तो क्या हुआ, वैसे वह अभी तक शौकीन आदमियों में गिना जाता था और बाजारू औरतों की दहलीज पर मत्था टेकने वाले लोगों

को प्रायः उसकी खिजाब लगी हुई दाढ़ी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त होता था। ऐसे शौकीन आदमी की जेब में कुछ सोना तो अवश्य होना चाहिये।

शाम के कोई सात बजे वह जेल बन्द करके निवृत्त हो गया। घर आया तो बीवी बाजार के लिए तैयार बैठी थी। उसने कहा—आज ही चलकर गहना ले दो। इतने दिनों से बहाना कर रहे थे कि जेब में पैसा नहीं है। आज पैसा है तो बाजार क्यों नहीं चलते। रहमतुल्ला पहले तो कुछ टालमटोल की बातें करने लगा, परन्तु जब बीवी की आँखों में पानी के निशान देखे तब यह कहता हुआ तैयार हो गया कि अच्छा बाबा, चलो। मुझे दस बजे यहाँ ड्यूटी पर वापिस आ जाना है। तब तक तुम्हारी ही ड्यूटी बजा लाऊँगा।

एक इक्का मंगाया गया, जिसके चारों ओर चादर का तम्बू तानकर रहमतुल्ला और उसकी बीवी दाखिल हो गये। तम्बू बाजार की ओर रवाना हुआ और बहुत-सी दूकानों के सामने चलता-फिरता नजर आया। रहमतुल्ला साहब कई दूकानों पर उतरे। कई तरह के गहने ले जाकर तम्बू में पेश किये, परन्तु कोई भी पसन्द न किया गया। इतने में पौने दस बजे का समय हो गया। रहमतुल्ला ने बीवी को घड़ी दिखाई तो बीवी बहुत झल्लाई और बुड़बुड़ाने लगी, परन्तु देर हो रही थी, इस कारण लाचारी थी। वह तम्बू फिर जेल की ओर रवाना हुआ।

जेल से शहर कोई एक मील दूर था। पन्द्रह मिनट में जेल पहुँचना कुछ कठिन नहीं था, परन्तु इक्के का टट्टू बिलकुल मरियल था। अगर उसे आजाद छोड़ दिया जाता, तो वह कदम की चाल चलता था, पर यदि उसे संटी दिखाई जाती तो वह सत्याग्रह करने की धमकी देता था और आगे बढ़ने से कतई इन्कार कर देता था। ऐसी दशा में सिवाय धैर्य के कोई चारा नहीं था।

परन्तु रहमतुल्ला को सन्तोष था कि भागने की घड़ी में तो अभी

तीन घण्टे हैं। कुछ देर भी हो गई, तो समय से पहले सब कार्रवाई पूरी कर लूँगा।

इक्का छमछम करता और झूमता-झामता जेल के दरवाजे के पास ही पहुँचा होगा कि जेल का अलार्म भयानक चीत्कार के साथ चिल्ला उठा। रात का समय, अन्धकार का राज्य और चारों ओर सन्नाटा,—उस गम्भीर वातावरण को चीरता हुआ वह घण्टे का शब्द रहमतुल्ला के सीने पर वज्र की तरह पड़ा। उसका सारा मन्सूबा चूर-चूर हो गया। जब वह तम्बू में से निकलकर जेल के द्वार की ओर भागा, तब उसके पाँव भय और आशंका से काँप रहे थे।

(११)

इधर घड़ियाल पर दस की टकोर लगी और उधर पाँचों आदमियों ने अपनी-अपनी कोठरी के दरवाजों पर कन्धा लगाया। जिस सींखचे को काट रखा था, उसे मोड़कर बाहर निकलने का रास्ता बनाना था। यह बड़े बल का काम था। जो नम्बरदार पहरे पर था वह ऊपर की मंजिल में चला गया। उस बारग में नीचे और ऊपर दोनों मंजिलों में कोठरियाँ थीं। नौ बजे से कोई दस मिनट पहले ऊपर की कोठरी के एक कैदी ने नम्बरदार को आवाज़ देकर बुला लिया था। वह ऊपर गया तो दोनों में बातें होने लगीं। नम्बरदार वहीं बैठ गया।

पाँचों कैदी दोनों हाथों और छाती का जोर लगाकर सींखचे को मोड़ने का यत्न करने लगे। जवाहरसिंह सब से मजबूत था। उसे लगभग दस मिनट की कोशिश से रास्ता बनाने में सफलता मिल गई। वह दरवाज़े से बाहर हो गया।

उसने हीरासिंह की सहायता की। फिर दोनों ने मिलकर औरों की मदद की। लगभग बीस मिनट में पाँचों आदमी कोठरियों से बाहर खड़े हो गये। यह सब काम इतना चुपचाप हुआ कि आस-पास की कोठरियों में सोये हुए कैदियों तक की आँख न खुलीं।

कोठरियों से बाहर तो हो गये, पर अभी जेल से निकलना बहुत दूर

था। सब से बड़ी दिक्कत तो यह थी कि सभी के हाथ-पाव बेड़ी-हयकड़ी से जकड़े हुए थे। बेड़ी हयकड़ी पहने हुए जेल की बड़ी कोट दीवार को फांदना असम्भव था। जहाँ पर वह खड़े थे, उस जगह से बड़ी दीवार के बीच में अभी दो दीवारें और थीं। उन्हें लाँघकर तब कोट के मौके पर पहुँच सकते थे। पूरा चक्रव्यूह था, जिससे निकलकर ही बाहर की हवा में पहुँचा जा सकता था।

परन्तु हीरासिंह का दल तो आज असम्भव से लड़ने की ठान चुका था। सलाह हुई कि पहले छोटी दीवारें लाँघकर कारखाने में पहुँचा जाय। कारखाने से वह औजार निकाले जायें, जिनसे हयकड़ी-बेड़ी काटी जा सकें और फिर खुले हाथ-पाँव से कोट की दीवार को लाँघा जाय।

काम आसान नहीं था। पहले उस बारग की दीवार लाँघनी थी। फिर लगभग दो सौ गज का खुला रास्ता तय करना था। उसके पीछे कारखाने की दीवार थी; उस दीवार के अन्दर जाकर कारखाने के बन्द दरवाजे थे, जिन पर ताले जड़े हुए थे। इन तालों का उपाय तो भागने वालों ने कर रखा था। कारखाने में काम करने वाले कैदी जेल के प्रायः सभी तालों की कई-कई तालियाँ बना छोड़ते हैं। ऐसी चाबियाँ भागने वाली पार्टी ने भी इकट्ठी कर ली थीं, परन्तु वे चाबियाँ तो तभी काम दे सकती थीं, जब कारखाने में दाखिल हो जाएँ, परन्तु दाखिल होना ही तो मुश्किल था। सब जगह पहरा था। बारग में पहरा था; बारग के बाहर मैदान में पहरा था, कारखाने के अन्दर पहरा था। फिर भी साहसियों की उस पार्टी ने कारखाने में पहुँचकर और औजार लेकर भाग निकलने का जो संकल्प बनाया था, उसकी पूर्ति के लिये वह अग्रसर हुई।

पाँचों कैदी दबे पाँव बारग की उस दीवार के पास पहुँचे, जो जेल के केन्द्र की ओर खुले मैदान से मिली हुई थी। सब से कठिन काम यह था कि जंजीरों को बजने से रोका जाय। कैदी लोग प्रायः उसके लिये पैर की जंजीरों को हाथों से ऊपर को उठा लेते हैं और आहिस्ता-आहिस्ता

चलते हैं। भागने वालों ने भी ऐसा ही किया और दीवार के नीचे पहुँच गये। बारग का नम्बरदार अभी तक ऊपर की मंजिल में बैठा हुआ कैदी से गप्पें हाँक रहा था। कैदी नम्बरदार को गाँव की एक बहुत लम्बी और बहुत दिलचस्प कहानी सुना रहा था। नम्बरदार दीन-दुनिया को भुलाये उसमें लीन हो रहा था। केवल इतना ध्यान रखता था कि जब बुर्ज पर से उसके बारग का नम्बर पुकारा जाय तो उसके उत्तर में चिल्ला दे—बहुत अच्छा।

जवाहरसिंह दीवार के साथ लगकर और झुककर खड़ा हो गया। रत्नसिंह उसकी पीठ पर चढ़कर दीवार की ऊँचाई के बराबर हो गया और दीवार पर से दूसरी ओर लटककर नीचे कूद गया। कूदने के समय बेड़ियों का शब्द होना आवश्यक था, परन्तु उस समय भाग्य ने भगोड़ों का साथ दिया। पहरेदार बुर्ज की दूसरी ओर की बारगों के सामने घूम रहा था। इसी तरह चारों आदमी जवाहरसिंह की पीठ पर होकर उस पार हो गये, तो उन्होंने पगड़ी का एक किनारा स्वयं पकड़ कर दूसरा किनारा दीवार पर से अन्दर की ओर डाल दिया। जवाहर-सिंह उसके सहारे से ऊपर चढ़ा और दूसरी ओर कूद गया।

अब पाँचों आदमी खुले मैदान में आ गये। अँधेरी रात थी, केवल चार कोनों पर चार लैम्प जल रहे थे। उनका धुँधला-सा प्रकाश उस जगह भी पहुँच रहा था, जहाँ वह लोग दीवार पर से कूदे थे। अब उन्हें दो सौ गज का मैदान पार करना था। काम कठिन था, परन्तु साहस के सिवा अब कोई उपाय ही नहीं था। जेल में जिसे सब से बड़ा जुर्म समझा जा सकता है, वह उन्होंने कर दिया था। खतरे की खाई आगे थी, खतरे की खाई पीछे। आग में कूदने के सिवा कोई चारा नहीं था। फिर उस समय एक-एक क्षण हजारों मोहरों से अधिक मूल्य रखता था। न जाने किस क्षण पर अलार्म हो जाय और सारा जेल उन पर टूट पड़े। उन लोगों ने बेड़ियों को पकड़कर कुछ ऊँचा उठा लिया और पत्ता तोड़ भागे।

अब वे कारखाने की दीवार के पास पहुँच गये थे। वहाँ भी उसी विधि को काम में लाया गया। जवाहरसिंह की पीठ पर चढ़कर चारों आदमी अन्दर चले गये और अन्त में अन्दर से फेंके हुए कपड़े को पकड़-कर जवाहरसिंह दीवार पर चढ़ने लगा।

जिस किस्मत ने अब तक उनका साथ दिया था, उसने अब धोखा देने की ठानी। ऊपर चढ़ते हुए जवाहरसिंह का पाँव दीवार के उस हिस्से पर पड़ गया, जो बिलकुल बोदा हो चुका था। दीवार का प्लास्तर उखड़ गया और उसके साथ ही जवाहरसिंह का पैर भी। जवाहरसिंह नीचे आ पड़ा। भारी शरीर था, ज़ोर की आवाज़ हुई। वह आवाज़ बुर्जी पर पहिरा देने वाले पहरेदार तक भी पहुँची। उसके पास बड़ी जोरदार टार्च थी। उसने टार्च की रोशनी जवाहरसिंह पर फेंकी और सब कुछ देख लिया। उस समय जवाहरसिंह सम्भलकर फिर से दीवार पर चढ़ रहा था। पहरेदार ने टार्च बन्द कर दी और अलार्म की रस्सी को जोर से हिलाना शुरू किया। टन्-टन्-टन् की उस गम्भीर ध्वनि ने अँधेरी रात की नींद को भी तोड़ दिया। रात मानो जाग उठी और जेल के अहाते में अँगड़ाइयाँ लेने लगी। वही टन्-टन् की आवाज़ थी, जो मरियल घोड़े वाले उस चलते-फिरते तम्बू में बैठे हुए रहमतुल्लाखाँ ने सुनी थी और जो उसकी छाती पर हथौड़े की तरह पड़ी थी।

जेल के अलार्म का अभिप्राय केवल वे ही लोग समझ सकते हैं, जिन्होंने कभी जेल में रहकर उसका अनुभव किया हो। जेल वालों के लिये तो वह खासा भूकम्प होता है। अलार्म के शुरू होते ही जेल की ईंट-ईंट हिलने लगती है। जेल के सब ताले बन्द कर दिये जाते हैं और ड्योढ़ी का दरवाजा खोल दिया जाता है, ताकि जेल के सब कर्मचारी, वे ड्यूटी पर हों या आराम पर, जिस हालत में हों, उसी में जेल के अन्दर दाखिल हो जाएँ। वहाँ उन्हें आवश्यकतानुसार लाठियाँ या बन्दूकें बाँट दी जाती हैं और घटनास्थल पर पहुँचने का हुक्म हो जाता है।

भगोड़ों के लिये अब बड़े संकट का सामना था। वे कारखाने की चारदीवारी में पहुँच गये थे। इधर पाँच ही मिनट में सारा जेल उनके चारों ओर घेरा डाल लेगा। उन्हें समय से भी लड़ना था और जेल के सारे अमले से भी। परन्तु हीरासिंह इस खतरे के लिये पहले से तैयार था। अब क्षण भर का भी विलम्ब न होना चाहिए। पाँचों आदमी बहुत शीघ्र कारखाने के दरवाजे पर पहुँच गये और केसों में से चाबी निकाल कर रत्नसिंह ने ताला खोला। चाबी उसी के सुपुर्द थी। चार आदमी कारखाने के अन्दर घुस गये और जवाहरसिंह दरवाज़े पर पहरा देने के लिए खड़ा रहा। उन लोगों को पहले से मालूम था कि कहाँ से क्या चीज़ लेनी है। हथकड़ी और बेड़ी खोलने के लिये लुहार के सामान की आवश्यकता थी। वह उन्हें शीघ्र ही मिल गया। कारखाने में काम करने वाले सिक्ख कैदी शाम को जाते हुए उन आवश्यक चीज़ों को ऐसी जगह रख गये थे, जहाँ से शीघ्र ही हाथ आ सकें। उधर अलार्म बज रहा था और इधर ये लोग बड़ी शीघ्रता, परन्तु बड़े धैर्य से अपनी बेड़ी हथकड़ियों को काट रहे थे।

इस समय कारखाने की बारग के दरवाजे पर लगभग ५० लट्ठबन्द आदमी इकट्ठे हो गये थे। सीटियाँ बज रही थीं और टार्चें घूम रही थीं। यह मालूम हो गया था कि हीरासिंह और उसके साथी कोठरी का जंगला तोड़कर भाग निकले हैं और कारखाने में गये हैं।

दरोगा साहब खाना खाकर चारपाई पर लेट गये थे और हुक्के का दम लगाते-लगाते सो गये थे। अलार्म की घण्टी ने उन्हें जगा दिया। घबराये हुए उठे, कोट पहिना, जेब में रिवाल्वर रखा और हाथ में लाठी लेकर जेल के द्वार की ओर भागे। भारी आदमी थे, दम फूलने लगा, पर क्या करते, भागना ही पड़ा। दरवाजे पर पहुँचते ही पहरेदार से पहला सवाल यह किया कि क्या रहमतुल्ला अन्दर चला गया? पहरेदार ने कहा—हुजूर, अभी तो अन्दर नहीं गये। दरोगा ने हैडवार्डर को दो-चार करारी गालियाँ दीं और अन्दर दाखिल हो गये।

दरोगा के पहुंचने से पहले ही कारखाने के बारग के दरवाजे पर सिपाही इकट्ठे हो गये थे। केवल किसी अधिकारी के आने का इन्तजार था। दरोगा ने वहाँ पहुंचकर फिर पूछा कि रहमतुल्ला यहां नहीं आया? उत्तर मिला कि अभी नहीं। दरोगा ने फिर हैडवार्डर को पांच-चार गालियाँ सुनाई और कारखाने के दरवाजे को खोलने का हुक्म दिया।

इस तैयारी में लगभग दस मिनट लग गये। इतने समय में भगौड़े हथकड़ी-बेड़ी खोलकर बिल्कुल तैयार हो चुके थे। उन्होंने हाथों में लोहे के लम्बे-लम्बे छड़ उठा लिये और तैयार होकर कारखाने से बाहर निकले। उधर बारग का दरवाजा खुला। बारग के दरवाजे और कारखाने के दरवाजे में लगभग ५० गज का अन्तर था। भगोड़ों को इन ५० कदमों का ही फ़ायदा मिला। वह बारग के दरवाजे की ओर न जाकर पीछे की दीवार की ओर भागे और दीवार के पास पहुंचकर लोहे के लम्बे छड़ों को जमीन पर टेककर जो छलांग लगाई तो कारखान की दीवार के पार हो गये।

दरोगा और सिपाहियों ने टार्च की रोशनी की सहायता से यह तो देखा कि कैदी दीवार की ओर को भागे, परन्तु वे इतनी फुर्ती से उछल गये कि वे कैसे और कहाँ गायब हो गये, यह उन्हें मालूम न हो सका।

अब वे लोग कारखाने के बारग से निकलकर जेल की बड़ी कोट-दीवार के पास पहुँच गये थे। वह दीवार बहुत ऊँची थी। लोहे की छड़ों की सहायता से उसे फाँदना असम्भव था। भाग्यवश अभी वहाँ सिपाही नहीं पहुँचे थे। उस दीवार को पार करने का उपाय भी उन लोगों के पास तैयार था। उस दिन शाम को खाने के समय सिक्ख परोसने वाले ने रनसिंह के कटोरे में दाल के साथ कुछ बड़ी-बड़ी मज-बूत कीलें भी डाल दी थीं। वे लोग कारखाने से हथौड़ा उठाते लाये थे। ठीक मौके के पास पहुँचते ही उन्होंने काम शुरू कर दिया। पहले

कमर की ऊँचाई पर एक कील ठोकी, फिर उस पर पाँव रखकर दूसरी और इसी तरह तीन कीलें गाड़ देने पर ऊपर तक जाने की सीढ़ी-सी बन गई।

परन्तु इस काम में समय लगा। जब तक इन लोगों की कीलें गड़ीं, तब तक दरोगा और सिपाहियों की टोली उनके सिर पर आ पहुँची।

अब तो समय की और भगोड़ों की दौड़ शुरू हुई। प्रश्न यह था कि कौन तेज भागे। जेल के रक्षक सिर पर थे। दीवार पर से फांदने का रास्ता बन चुका था। मिनटों और शायद क्षणों की गुंजाइश थी।

भगोड़ों ने बिजली की तेजी से चढ़ना आरम्भ किया। हीरासिंह साफ निकल गया। कीलों पर पैर रखकर दीवार पर चढ़ा और दूसरी ओर कूद गया। उसके पीछे रतनसिंह, फिर जवाहरसिंह और उसके पीछे नानकसिंह साफ कूद गये। भागने वालों में सबके पीछे उम्मेदसिंह था। कोई साथी पीछे रह जाय और वह निकल जाय, यह उम्मेद को सह्य नहीं था। जब चारों साथी निकल गये तब उम्मेद ने चढ़ना आरम्भ किया और इसके पहले कि कोई पकड़ने वाला हाथ उस तक पहुँचे, वह दीवार पर चढ़ गया। ऊपर चढ़ता हुआ वह नीचे की कीलों को उखाड़ता गया था।

उस समय तक दरोगा और सिपाही वहाँ पहुँच चुके थे। उनकी लाठियाँ उम्मेद के पैर को छू रही थीं। यद्यपि उस जगह गहरा अन्धेरा था तो भी टार्च की रोशनी से कई चेहरे साफ दिखाई दे रहे थे। दरोगा साहब हाथ में टार्च लिये भागे चले आ रहे थे।

दीवार पर चढ़कर दूसरी ओर कूद जाने से पहले उम्मेद ने एक बार अन्दर की ओर देखा। सिपाहियों के दल में सबसे आगे-आगे उसे कालेखाँ दिखाई दिया। यह देखकर कि जिन पर वह तैनात था, वे चिड़ियाँ उड़ी जा रही हैं, वह बहुत घबराया और अपनी कारगुजारी दिखाने के लये पकड़ने वालों की पार्टी में सबसे आगे दौड़ चला।

उम्मेद पर कालेखाँ की शक्ल का अद्भुत असर हुआ। उसे देखते ही उम्मेद के तन में मानों बिजली दौड़ गई। वह सारे अपमान और अत्याचार, जो उसने इस कारण सहे थे कि वह जेल में था, स्वतन्त्र वातावरण में खड़े होकर उसके मन में घोर रूप से प्रज्वलित हो उठे। वह सब कुछ भूल गया, अपने-आपको भूल गया, अपने साथियों को भूल गया और उस खतरे को भी भूल गया, जो दीवार के नीचे उमड़ रहा था। कालेखाँ की मूर्ति जीवन भर के अत्याचारों का रूप धारण करके उसके सामने आ गई। वह अपने आप में न रहा। दीवार में से उखाड़ी हुई बड़ी कील उसके हाथ में थी। जैसे अपनी इच्छा के बिना ही किसी मशीन का हथौड़ा उठता है और नीचे पड़ी वस्तु पर ज़ोर से पड़ता है, उसी प्रकार उम्मेद ने हाथ ऊपर को उठाया; कालेखाँ के सिर का निशाना लगाकर कील को ताना और गोली-की-सी तेजी से दाग़ दिया। कालेखाँ का सिर उस समय नंगा था, कील लम्बी और तेज़ थी, ऊपर से पूरे जोर के साथ फेंकी गई थी। वह कालेखाँ के सिर में चार अंगुल से अधिक घुस गई। उस भयानक चोट को कालेखाँ बर्दाश्त न कर सका। उसके सिर में खून की एक धार बह निकली और वह लम्बी चीख मारकर बेहोश हो गया।

इसी बीच में मौका पाकर एक वार्डर ने लाठी का भरपूर हाथ जो घुमाकर चलाया तो उम्मेद के घुटने पर बैठा। उम्मेद सम्भल न सका और लड़खड़ाकर दीवार के अन्दर आ गिरा।

फिर जो कुछ हुआ, उसकी कल्पना करना कठिन है। चार शिकार भाग गये थे। केवल एक हाथ आया और वह भी एक हत्या करके।

लगभग चार दर्जन आदमियों का सारा जोश एक उसी पर निकलने लगा। उम्मेद के शरीर पर कितनी लाठियाँ और कितनी लातें पड़ीं। इसका उसे पता नहीं लगा क्योंकि वह गिरते ही बेहोश हो गया था। जब पांच दिन पीछे उसे होश आया, वह अस्पताल में एक लोहे की नंगी खाट पर सिर से पैर तक आहत पड़ा हुआ

था। उसके शरीर का कोई भी अंग ऐसा न था, जो घायल न हो। वह अलग कोठरी में बन्द था, जिस पर ताला लगा हुआ था और दरवाजे के बाहर दो सिपाही पहरा दे रहे थे।

(१२)

हीरासिंह और उसके तीनों साथी कोट की दीवार के उस पार कूद गये। बाकी तो सब ठीक ही कूद गये, पर जवाहरसिंह भारी होने के कारण जमीन पर गिरने के समय सम्भल न सका। गिरते हुए पाँव मुड़ गया और मोच आ गई, परन्तु वह समय देर लगाने का न था। सिर पर बादल गरज रहा था, समय खोने का अभिप्राय था—मृत्यु। एक क्षण भर चारों ने उम्मेद की प्रतीक्षा की, परन्तु जब उसे अन्दर गिरते देख लिया तो चारों आदमी पत्ता तोड़ भागे।

आधी रात का गहरा अन्धकार था। दो हाथ की चीज भी दिखाई नहीं देती थी। चारों ओर खेत और वृक्षों के कारण अन्धकार और भी गहरा प्रतीत होता था। भगोड़े रास्तों को छोड़कर खेतों में से होते हुए भागे जा रहे थे। जेल का अलार्म अभी तक गरज रहा था और इस बात की सूचना दे रहा था कि जेल के कर्मचारियों को चकमा देकर कैदी भाग निकले और अभी तक हाथ नहीं आये।

जेल के कर्मचारियों का तो बहुत-सा जोश उम्मेद को पकड़कर ठण्डा पड़ गया, परन्तु फिर भी सिपाहियों के कई दल भिन्न-भिन्न दिशाओं में फैल गये। जहाँ जेल से भागना जेल का सबसे बड़ा अपराध माना जाता है, वहाँ जिस अफसर के समय में कैदी भाग जाय उसकी खैर नहीं। महकमा उसे कभी माफ नहीं करता। उस अफ़सर को अपमान, तनज्जुली और बरखास्तगी सभी के लिये तैयार रहना चाहिये। इस कारण जब कभी कैदी जेल से भाग निकले तो जेल के अफसर उसके तलाश करने में सारी शक्ति लगा देते हैं। उनकी सहायता के लिये पुलिस भी फौरन आ पहुँचती है। हीरासिंह की पार्टी का भी बड़ी मुस्तैदी से पीछा किया गया।

जब तक अन्धेरा रहा, वे लोग चलते गये; गाँव को छोड़कर खेतों और जंगलों के रास्ते आगे बढ़ते गये। जब पौ फटने का समय आया और रास्तों पर उजियाली की झलक पड़ने लगी, तो चारों साथी एक ऐसी जगह पहुँचकर रुक गये, जो घनी झाड़ियों के कारण लोगों की नजरों से ओझल थी। वहाँ बैठकर चारों सलाह करने लगे। हीरासिंह ने कहा—भाइयो, अगर आप सबकी राय हो तो यहाँ कुछ देर तक बैठकर सुस्ता लें। यह जगह लोगों की नजरों से बची हुई है। दिन में इधर-उधर घूमने से पकड़े जाने का अन्देशा है। आप लोगों की क्या राय है?

जवाहरसिंह ने हीरासिंह के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए पूछा—पर यह तो बतलाओ कि यहाँ से गाँव कितनी दूर है? आखिर खाने-पीने की भी तो कुछ चिन्ता करनी होगी। यहाँ तो कई घण्टों से पेट में चूहे कूद रहे हैं। सालों बीत गये, कभी मनचाहा खाना नहीं खाया। आज मौका मिला है। ऐसी जगह ठहरना चाहिये, जहाँ पेट भरने का प्रबन्ध आसानी से हो सके।

रनसिंह ने जवाहरसिंह का समर्थन किया। नानकसिंह चारों में सबसे छोटा था। वह चुप बैठा रहा। हीरासिंह ने उससे भी पूछा। उसने कुछ चिन्तित भाव से कहा—

जवाहरसिंह ने जो बात पेश की है, उसमें मुझे तो डर मालूम होता है। अगर हम किसी गाँव के पास ठहरेंगे तो पकड़े जाने का अधिक अन्देशा है। इस वक्त हमारी सबसे पहली कोशिश तो यह होनी चाहिये कि हम अपने-आपको सुरक्षित जगह पर ले जायें। दो-एक समय भूखों रह जाना बेहतर है, पर मिली हुई आजादी को खोना अच्छा नहीं।

हीरासिंह सोच में पड़ गया। जवाहरसिंह ने जोर से हँसते हुए उत्तर दिया—

नानक तो बिल्कुल दूध पीता बच्चा बना जा रहा है। कहता है आजादी को खोना अच्छा नहीं। अरे पागल, जब पेट भर अच्छा खाने

को न मिला और जी भरकर शराब न पी तो इस आजादी को लेकर क्या चाटेंगे ? भाई, हमें तो यह बात पसन्द नहीं कि जंगलों में भूखे-प्यासे मारे-मारे फिरें। ऐसी आजादी से तो हमें जेल ही अच्छा है।

रनसिंह ने जवाहरसिंह की हाँ में हाँ मिलाई। हीरासिंह चुपचाप सोचता रहा। बेचारा नानक अकेला पड़कर झेंप-सा गया, परन्तु फिर भी अपने पक्ष का समर्थन करते हुए बोला—

भाई, हमें तो आजादी बुरी नहीं लगती। अपने बूढ़े माँ-बाप का मैं इकलौता बेटा हूँ। अगर मैं चोरी से जाकर उन्हें मिल लूंगा तो भी उनके दिल को बहुत तसल्ली होगी। फिर सिर्फ खाने-पीने के पीछे जेल से छूटने की सारी मेहनत को बरबाद करना क्या ठीक है ? और यह भी तो सोचो............हीरासिंह ने बात काटते हुए कहा—

अच्छा, इस फिजूल की बहस को अब बन्द किया जाय। हर हालत में इस समय तो हमें यहीं आराम करना है। उचित होगा कि हम में से कोई एक आदमी इधर-उधर घूमकर पता लगाये कि यहाँ से बस्ती कितनी दूर है ? और यह भी मालूम करना चाहिये कि आस-पास इस कुंज से भी अच्छी छिपने की कोई जगह है या नहीं ?

इस प्रस्ताव को सभी ने पसन्द किया। कुछ देर तक विचार करने पर निश्चय हुआ कि यह काम नानक के सुपुर्द ही किया जाय, क्योंकि वह आयु में छोटा था और उसके मुँह पर अभी तक दाढ़ी-मूँछ के निशान नहीं आये थे। बाकी सबके चेहरे और सिर पर केस थे, जिनसे उनकी पहचान बहुत आसान थी।

नानक को भेष बदलने में देर न लगी। उसने लकड़हारे का भेष बना लिया। जेल के कपड़ों को छिपाना मुश्किल था, इसलिए सलवार का घुटने से नीचे का हिस्सा फाड़कर फैंक दिया। कुर्ते की आधी बाहें अलग कर दीं और नीचे का पल्ला भी फाड़ दिया। साफे को मुँह के

चारों ओर ऐसे ढंग से लपेट लिया कि मुँह का बहुत-सा हिस्सा ढक जाय। ऐसा भेष बनाकर और हाथ-पाँव और मुँह पर मिट्टी की एक तह जमाकर नानक इस योग्य हो गया कि गाँव में जा सके। उसे उस समय अगर जेल का दरोगा भी देखता तो एकदम न पहचान सकता। भेष बदलकर नानक ने इधर-उधर से कुछ लकड़ियाँ बटोरकर उनकी गठरी सिर पर रखी और एक जंगली पगडंडी के सहारे से गाँव की ओर चल दिया।

(१३)

आई० जी० साहब गहरी नींद में सोये पड़े थे। शाम को शहर के एक मशहूर रईस खान बहादुर वाकरअली के यहाँ डिनर में गये थे। वहाँ से आकर कोई बारह बजे सोये। अभी एक ही घण्टा हुआ था कि टेलीफोन की घण्टी ने टनटनाना शुरू किया। कुछ देर तक तो पड़े-पड़े टनटन की आवाज़ को सुनते रहे और सोचते रहे कि बला टल जाय तो अच्छा है। पर बला न टलने पर तुली हुई थी, घण्टी बजती ही गई। आखिर उठना पड़ा।

टेलीफोन को कान से लगाकर साहब ने पूछा—हलो, कौन बोलता है?

जेल का दफ्तर।

इस वक्त क्यों जगाया?

हुजूर, बहुत संगीन खबर है। सुलतानपुर जेल से पांच कैदी भाग निकले थे। एक पकड़ा गया, चार आदमी हाथ नहीं आये।

सुलतानपुर जेल से······पाँच आदमी······! क्या वही हीरासिंह की पार्टी?

जी हुजूर वही।

कब भागे?

अभी वहाँ से टेलीफोन द्वारा खबर मिली है। आज ही रात की घटना है।

सुलतानपुर जेल से······! पाँच आदमी······भाग निकले······हीरासिंह की पार्टी···!

बड़बड़ाते हुए साहब ने टेलीफोन का रिसीवर रख दिया और कुर्सी पर बैठ गया। उसकी छाती पर मानो किसी ने घूँसा मारा हो। इस जेल को उसने कितने शौक से बनवाया था। समझा था कि यह अभेद्य दुर्ग तैयार हो रहा है। हीरासिंह की चुनौती के जवाब में उसने कितने विश्वास से कहा था कि सुलतानपुर जेल से भागना गैरमुमकिन है। यह सुलतानपुर जेल ही नहीं टूटी, उसे अनुभव हुआ कि हीरासिंह की पार्टी मानो उसकी छाती को चीरकर निकल गई हो।

पाँच मिनट तक तो साहब की यही दशा रही। क्रोध और दुःख से वह आपे से बाहर रहा। फिर उसने टेलीफोन का रिसीवर उठाया और सुलतानपुर जेल का नम्बर मिलाया। जेल के टेलीफोन पर खुद सुपरिन्टेन्डेन्ट बोल रहा था। दोनों में निम्नलिखित बातचीत हुई—

मेजर, कैदी जेल से कैसे भाग गये ? आई० जी० की आवाज़ में क्रोध की झुंझलाहट थी।

हज़ूर, अभी ठीक-ठीक तो मालूम नहीं हो सका, लेकिन देखने पर पता चला है कि उन लोगों ने कोठरियों के दरवाज़ों की सलाखों को किसी चीज़ से काट डाला है।

क्या उनपर काफी पहरा नहीं लगाया गया था ?

काफी पहरा तो लगाया गया था।

तो फिर वह लोग कैसे भाग गये ? क्या जेल के सब अफसर मर गये थे ? देखिए मेजर, यह मामला बहुत संगीन है। जेल में जाकर इस मामले की पूरी तहकीकात कीजिए और जिन लोगों की गफलत से यह घटना हुई है, उन्हें सख्त सजा दी जायगी। मालूम हुआ है कि एक आदमी पकड़ा गया है। उसका क्या हाल है ?

हुज़ूर, उसके बहुत सख्त चोट आई है। वह अभी बेहोशी की हालत में है।

तो उसे होश की हालत में लाना चाहिये और दिलासा देकर और पुचकार कर सारे मामले की तहकीकात करनी चाहिये। उसे जल्द से जल्द अपने कब्जे में ले लो, ताकि कोई आदमी उसे बहका न सके। यह काम जेल के आदमियों की साजिश के बगैर नहीं हो सकता। मैं दो-एक दिन में डिप्टी इन्स्पेक्टर जनरल को सुल्तानपुर भेज रहा हूँ। हाँ, तो उन चारों फरारों के पीछे कितनी पुलिस गई है ?

कोई पचास आदमी दस-दस की पाँच पार्टियाँ बनाकर भेजे गये हैं। उम्मीद है शीघ्र ही पकड़े जाएँगे।

फरार कैदियों को पकड़ने की पूरी कोशिश करनी चाहिये। इस मामले से जेल का महकमा बहुत बदनाम हो जायगा। तहकीकात भी पूरी होनी चाहिये। कोई कसूरवार बचने न पाये।

सुबह होते ही उम्मेद को हस्पताल के अलग कमरे में बन्द कर दिया गया और उस पर मेजर साहब ने अपने खास आदमी का पहरा लगा दिया।

चार दिन तक तो उम्मेद की हालत बहुत नाजुक रही। या तो बिल्कुल बेहोश रहता और या बहकी-बहकी बातें करता। सारा शरीर चोटों से छलनी हो गया था और जोर का बुखार चढ़ आया था। पाँचवें दिन हालत कुछ सुधरने लगी। बुखार कम हुआ और चोटें भी हल्की पड़ गईं।

उम्मेद को जब कुछ होश आया तब उसे उस रात की सारी घटनाएँ स्मरण हो आईं। कोठरी की सलाख को तोड़कर भागना, कारखाने में बेड़ी-हथकड़ी काटना और फिर कोट-दीवार पर चढ़ना, यह सब कुछ उसके चित्त पर पुतलियों की भांति घूम गया। फिर उसे यह भी याद आया कि जेल के सिपाहियों के दल में उसने कालेखाँ को देखा था, उसे देखकर वह सब कुछ भूल गया था, अपने आपे से बाहर हो गया था और पूरे जोर से सिर पर कील का निशाना लगाया था। उसने होश आने पर सुना कि कालेखाँ मर गया है। तब उम्मेद को निश्चय हो

गया कि उसे फ़ाँसी की सज़ा दी जायगी ।

इस विचार ने उसे डराया नहीं । फाँसी या मृत्यु की आशंका ने उसके दिल में कोई घबराहट पैदा नहीं की, क्योंकि अपने छोटे से जीवन में उसने जो कुछ देखा और अनुभव किया था, वह फाँसी की भूमिका ही तो थी । संसार के अत्याचारों ने उसे छलनी कर दिया था । दूसरे के दोष पर वह सदा धैर्य से सज़ा पाता रहा था, तब इस बार अपने दोष पर सज़ा पाने में वह कैसे कतराता ।

परन्तु उसके साथ जो सलूक हो रहा था, वह आश्चर्य में डालने वाला था । जिसे फाँसी होने वाली हो, उसे अच्छा बिस्तर नहीं मिलता, न दूध और फल खाने को मिलते हैं । उम्मेद ने सेवा करने वालों से पूछा कि मुझ पर यह कृपा क्यों की जा रही है, तो उत्तर मिला कि मेजर साहब का ऐसा ही हुक्म है । मेजर साहब ऐसे दयालु क्यों हैं, इस प्रश्न का उत्तर उम्मेद का सीधा-सा दिमाग नहीं दे सका ।

आखिर मेजर साहब एक दिन तशरीफ लाये । उनके साथ और कोई नहीं था । उम्मेद हथकड़ी-बेड़ी में बँधा हुआ चारपाई पर पड़ा था । एक कुर्सी उसकी चारपाई के पास डाल दी गई, जिस पर मेजर साहब बैठ गये । दोनों में निम्नलिखित बातचीत होने लगी ।

मेजर—अरे उम्मेद, अब तेरा क्या हाल है ?

उम्मेद—साहब, अब तो अच्छा है, पर अभी तो कमज़ोरी बहुत है। कमर में दर्द भी बहुत है ।

तुझे मालूम होगा कि तुझ पर कत्ल का जुर्म लगाया गया है । तूने कालेखाँ का क़त्ल किया था ।

हाँ साहब, मुझे यह मालूम है ।

क्या तू जानता है, क़त्ल की क्या सजा है ?

हाँ क़त्ल की सज़ा फाँसी है ।

क्या तुझे उससे डर नहीं लगता ?

डर—यह तो मैंने कभी सोचा नहीं । मझे फाँसी तो होगी ही,

फिर डर की बात क्यों सोचूँ ?

क्या तू जीना नहीं चाहता ?

जीना……हाँ, मैं मरना तो नहीं चाहता, पर फाँसी तो होगी ?

नहीं, यह तेरी समझ की भूल है। तू मरने से बच सकता है।

उम्मेद लेटा हुआ था। आधा उठ बैठा। बोला—क्या कहा ! मैं मरने से बच सकता हूँ ?

हाँ, तुझे मरने से बचाया जा सकता है।

वह कैसे ?

अगर तू सारी बातें खोलकर कह दे। तुम लोगों ने भागने का मनसूबा कब बाँधा, इस काम में तुम्हारी मदद किस-किस ने की और तुम लोग किस तरह भागे, यह सब बातें यदि तू ठीक-ठीक बतला देगा तो मैं तुझे फाँसी से बचा लूँगा।

उम्मेद सोच में पड़ गया। क्या उसे सारा भेद खोल देना चाहिए ? इसमें कोई बुराई तो नहीं है ? वह विचारने लगा, पर जल्दी किसी निर्णय पर न पहुँच सका। चोट और बुखार ने उसके मस्तक को भी बहुत कमजोर कर दिया था। उसे चुप देखकर मेजर ने दो-तीन बार अपने सवाल को दुहराया। उम्मेद फिर भी कोई जवाब न दे सका। तब उसने टालने के लिये कहा—

साहब, अभी मैं बहुत कमजोर हूँ। मेरा सिर घूम रहा है। आप मुझे सोचने का मौका दीजिये। मैं कल आपको कोई जवाब दे सकूँगा।

साहब ने जरा जोर की आवाज से कहा—खैर, कल सही। पर याद रखो, तुम्हारी जिन्दगी मेरे हाथ में है। मेरा कहा मानोगे तो ठीक है, नहीं तो तुम्हें फाँसी पर चढ़ने से कोई भी बचा नहीं सकता। तुम्हें सब कुछ सचसच कह ही देना चाहिए। और देखना आज की बातचीत को अपने तक ही रखना, निकलने न पाए।

मेजर के अन्तिम शब्द कुछ ऊँचे स्वर से कहे गए थे, उस वह नम्बर-

दार ने भी सुन लिये जो दरवाजे के बाहर पहरा दे रहा था।

(१४)

आधी रात जा चुकी थी। जेल का घण्टा बारह बजाने के पश्चात् आध घन्टे की यात्रा तय कर चुका था, जब उस कोठरी का दरवाज़ा बहुत आहिस्ता से खुला जिसमें उम्मेद बन्द था और जेल के हैडवार्डर रहमतुल्ला ने अन्दर प्रवेश किया। उम्मेद गहरी नींद में सोया पड़ा था। रहमतुल्ला ने उसे आहिस्ता-आहिस्ता हिलाकर जगाने की चेष्टा की और चारपाई की बाही पर बैठकर कान के पास मुँह लेजाकर उसका नाम पुकारा। उम्मेद की नींद खुल गई।

उम्मेद आधी रात के समय रहमतुल्ला की मूर्ति देखकर घबरा गया। सम्भव था कि वह चिल्ला उठता, अगर रहमतुल्ला चारपाई पर बैठकर उसे पुचकारने न लगता—अरे घबरा नहीं। मैं तुझे डराने नहीं आया। तेरी भलाई की बात कहने आया हूँ। इस प्रकार की विश्वासजनक बातें सुनकर उम्मेद को कुछ ढारस हुआ और चुपचाप रहमतुल्ला की ओर देखने लगा।

बहुत धीमे स्वर से, उम्मेद के कानों के साथ मुँह लगाकर रहमतुल्ला कहने लगा—

सुन उम्मेद, मैं तेरी भलाई की बात कहने आया हूँ। आज मेजर साहब तेरे पास आये थे, उन्होंने तुझ से भागने की बाबत बहुत-सी बातें पूछी थीं। तू ने क्या जवाब दिया ?

मैंने तो अभी कोई भी जवाब नहीं दिया।

आखिर तूने क्या जवाब देने का विचार किया है ?

मैंने तो अभी कोई भी जवाब देने का निश्चय नहीं किया।

तो सुन ! अगर तू अपनी खैर चाहता है तो कह देना कि मुझे कुछ मालूम नहीं। अगर तूने किसी जेल के आदमी का नाम लिया तो भला न होगा।

उम्मेद के दिल में आया कि मेजर ने जो अभयदान दिया था,

उसकी बात बतला दे, परन्तु फिर याद आया कि वह सब बातों को गुप्त रखने की प्रतिज्ञा कर चुका है। उम्मेद बचपन से ही बात का धनी था। बोला—

अगर मैंने सचसच बात कह दी तो उसका क्या नतीजा होगा ?

तू जानता है कि जेल का असली अफसर मैं हूँ। मेजर और दरोगा तो कागजी अफसर हैं। वे हुक्म दे सकते हैं, तामील मेरे हाथ में है। वह काटने की ताकत नहीं रखते और मेरे काटे की दवा नहीं। मुझे नाराज़ करके कोई कैदी जेल में आराम से नहीं रह सकता। तूने भी बहुत दिनों तक मेरी नाराज़गी का मजा चखा है। क्या तुझे मालूम नहीं कि जेल में असली ताकत मैं हूँ।

हैडवार्डर की बातों ने उम्मेद की वे सब स्मृतियाँ हरी कर दीं, जो बीमारी के कारण मुर्झा-सी गई थीं। वे सब अत्याचार ताज़ा प्रतीत होने लगे, जो समय ने पुराने कर दिये थे। इन्हीं अत्याचारों की स्मृति ने उम्मेद की मनुष्यता के स्रोत को सुखाकर उसे राक्षस बना दिया था। उसे वे दिन याद आये जो उसने टिकटिकी पर बँधकर गुज़ारे थे; उसे वे रातें याद आईं, जिनमें वह एक मिनट के लिए भी नहीं सो सका था, क्योंकि कालेखाँ हर पाँच मिनट के पीछे उसे आवाज़ देकर जगा देता था। सुलतानपुर जेल प्रवास की वे सब कड़वी स्मृतियाँ उसके मस्तक में क्रमशः घूम गईं और उन स्मृतियों के पीछे रहमतुल्ला खाँ और कालेखाँ की काली और भयंकर मूर्तियाँ दिखाई देने लगीं। ये सब वेदनाएँ जो उसके हृदय में घुटी पड़ी थीं, बाहर निकल आईं। उसके मन में दबी हुई बदले की अग्नि रहमतुल्ला की बातों से भड़क उठी।

उसने क्रोध से भर्राते हुए स्वर से कहा—

बदमाश ! पाजी ! चला जा मेरे सामने से। छुरी से घायल करके अब घाव की याद दिलाता है। तू और कालेखाँ मेरे दो सब से बड़े दुश्मन थे। तुम दोनों ने अपने ज़ुल्मों से मुझ में से इन्सानियत

निचोड़कर निकाल दी और मुझे राक्षस बना दिया। कालेखाँ अपने कर्मों का फल पा चुका, तुझे फल देना बाकी है। मैं सच्ची बात कहने से कभी नहीं रुक सकता। मेरा कोई अन्त हो, मैं तेरे गले में फाँसी लगवाये बिना नहीं रह सकता। मैं मेजर साहब से सब सच-सच कह दूँगा। तूने हम लोगों को भगाया था और उसके लिए......

उम्मेद इससे आगे कुछ कहने न पाया। रहमतुल्ला ने उसकी नाक पर इस ज़ोर का घूँसा जमाया कि नाक से लहू की धार बह निकली और उम्मेद जो गुस्से की उत्तेजना में चारपाई पर लेटे से बैठा हो गया था, बेहोश होकर बिस्तर पर गिर पड़ा।

(१५)

नानकसिंह जब सिर पर लकड़ियों का गट्ठर लादे गाँव में पहुचा तो दिन चढ़ चुका था। प्रातःकाल की हल्की-हल्की धूप कच्चे मकानों की दीवारों और दरवाजों को दिन की गर्मी का सामना करने के लिए सचेत कर रही थी। भादों बीत चुका था, रातें ठण्डी हो रही थीं, पर दिन की गर्मी बाकी थी। गाँव के किसान बैलों का रस्सा थामे खेतों की ओर जा रहे थे, औरतें सिरों पर कलसे जमाए कूएँ पर इकट्ठी हो रही थीं। एक फटे हाल मैले-कुचले नये नौजवान लकड़हारे को गाँव में देखकर उनमें से दो-चार रास्ते म ठिठक गईं और लकड़ियों के गट्ठर का सौदा करने लगीं।

नानक को गाँव तक पहुँचने के लिए कोई दो मील चलना पड़ा होगा। वह रास्तों को बचाकर जंगल और खेतों में से होता हुआ गाँव में पहुँचा था। गाँव छोटा-सा था। कोई दो सौ घरों की बस्ती होगी। गाँव का नाम था—जगरूवाला।

नानक ने थोड़ी-सी कहा-सुनी के बाद लकड़ी का सौदा पटा लिया। एक औरत ने चार पैसे में एक गट्ठर खरीद लिया। हल्का होकर नानक बनिये की दूकान की तलाश में चला। गाँव के मध्य में एक टूटी-सी झोंपड़ी के नीचे बनिया अपना भानुमती का पिटारा खोल

रहा था। नानक ने उससे चार आदमियों लायक आटा, आलू, नमक, प्याज आदि चीजें खरीदीं और जिस कपड़े के टुकड़े से लकड़ियों की गठरी बाँधी थी, उसी में सब चीजों को बाँधकर रवाना हो गया। जब वह चलने लगा तो बनिये ने पूछा—

क्यों भाई, तू कहाँ का रहने वाला है? इस गाँव का तो है नहीं।

नानक इस सवाल के लिए पहले से तैयार था। बोला—तुम्हारा ख्याल ठीक है लाला, मैं यहाँ से बहुत दूर रहता हूँ। मेरा घर यहाँ से कोई दस कोस पर है। यहाँ से आगे एक रिश्तेदारी में गया था। बाल-बच्चे साथ हैं। उन्हें खेतों के कुएँ पर बिठा आया हूँ। यह रसद लेकर जाऊँगा तो टिक्कड़ बना खायेंगे।

बनिया बोला—ठीक है भाई, खाए बगैर तो किसी को भी गुजर नहीं। तो क्या आज ही अपने गाँव को चले जाओगे?

आज सुबह ही बोहनी हो गई, इसलिए बनिया खुश था। गाहक को पटा रहा था।

नानक ने उत्तर दिया—शायद आज न जा सकूँ। बाहर खेतों में ही काम तलाश कर रहा हूँ, अगर कोई काम मिल गया तो कुछ दिन गुजार दूँगा।

बनिये ने जाल फैलाते हुए कहा—ठीक है। रोजगार लग जाय तो यहीं रहो। यहाँ का पानी बड़ा हाजिम है और भाई, जब तक रहो, सौदा मेरी दूकान से ही लिया करना। ये साले दूकानदार तोलने में डण्डी मार देते हैं। मैं तो सदा धरम का सौदा तौलता हूँ।

नानक ने कहा—अच्छा लाला जी, जब तक रहूँगा, सौदा तुम्हारी दूकान से ही लिया करूँगा और अपना रास्ता लिया।

नानक रोज एक बार गाँव में जाता और सौदा खरीदकर डेरे पर ले जाता। पहले वह सुबह के समय गाँव में पहुँचता था, कुछ दिन पीछे शाम को जाने लगा। शाम को बनिये की दूकान के सामने पीपल

के पेड़ के नीचे बहुत से लोग गप्पबाजी के लिए इकट्ठे हो जाते थे। नानक उनमें बैठकर दुनिया की खबरें सुना करता और डेरे पर जाकर सबको सुनाया करता। शेष आदमी आबादी में नहीं जाते थे।

इस तरह सात दिन बीत गए। ये सात दिन उन लोगों को सात साल से भी अधिक प्रतीत हुए। इससे तो जेल ही अच्छा था। यहाँ न कोई मिलने वाला था और न जीवन का कोई मज़ा। फिलासफर तो थे नहीं कि रात-दिन प्रकृति से बातें किया करते। सब से बड़ा कष्ट यह था कि बहुत रूखा-सूखा खाना पड़ता था। रोटी, दाल, आलू, प्याज भला इन चीज़ों से सिक्ख का गुज़ारा कैसे हो सकता है? उसे अफीम चाहिए या शराब? जेल में सब बन्धनों के होते हुए भी अफीम का तार कभी नहीं टूटा था कभी-कभी शराब की बोतल भी पहुँच जाती थी। यहाँ दोनों का अभाव था। उनके लिए तो पूरी तपस्या हो रही थी। सातवें दिन सायंकाल के समय सब लोग सलाह करने के लिए बैठे।

जवाहरसिंह ने श्रीगणेश किया। उसने कहा—भाइयो, अब हम इस सड़ियल जिन्दगी को बर्दाश्त नहीं कर सकते। यह आज़ादी तो जेल से भी बुरी है। हमें चोरों की तरह रहना पड़ता है और सच्ची बात यह है कि हमारे बाप दादों ने भी कभी चोरी नहीं की थी। हमने डाके ही डाले हैं। क्या बहादुर डाकू कभी इस तरह चिमगादड़ की तरह अन्धेरे में लटका रह सकता है? न गोश्त है, न अफीम है और न शराब। जीना उसी का है, जिसे खाने को तर माल और भोगने को सुन्दर नार मिले। जेल में दूसरी नहीं तो पहली चीज़ तो थी। यहाँ तो दोनों नहीं। ई, हम इस आज़ादी से बाज आए।

रनसिंह ने उसकी हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा—सुनो भाई हीरासिंह, तुम हमारे सरदार हो और हम हमेशा तुम्हारा कहना मानते रहे हैं, पर अब तकलीफ बर्दाश्त से बाहर हो गई है। अब हम चोरों की तरह लुक-छिपकर फकीर बने नहीं रह सकते। या तो सब तरह के आराम

का इन्तज़ाम होना चाहिए या जेल में वापिस चले चलो ।

हीरासिंह नानक से प्यार करता था । उसने उसकी ओर देखा । नानकसिंह ने समझ लिया कि उसकी राय मांगी जा रही है । वह बोला—

मेरी तो यह राय है कि हमें जल्दी घबराना नहीं चाहिये । अभी कुछ दिनों तक पुलिस हमारी तलाश में रहेगी । यदि हम एक-दो महीनों तक उसके हाथ न आये तो वह तलाश की भाग-दौड़ करना छोड़ देगी । तब हम लोग यहाँ से निकलने का ढंग सोचेंगे और सम्भव है कोई ऐसा रास्ता निकल आए कि जिससे आज़ादी से दिन गुज़ार सकें ।

जवाहरसिंह ने तेज़ होकर कहा—

तेरा यह कहना तो ठीक ही है, क्योंकि तू रोज़ गाँव में घूम आता है । हम लोग तो यहाँ चौबीस घण्टे जेल में पड़े रहते हैं । हम अब इसके आगे छिपकर बिल्कुल नहीं रह सकते । हाँ, अगर नानक का दिल चाहता हो तो वह अपने घर जाकर माँ-बाप से मिले और आज़ाद रहे । उसे नहीं रोकना चाहिए । हमें अब ऐसी मुसीबत भरी आज़ादी नहीं चाहिए ।

नानक को जवाहरसिंह के इस व्यंगभरे वाक्य में अपने लिए अपमान की झलक दिखाई दी । क्या वह केवल अपने लिए सुख चाहता है ? क्या वह घर जाने के लिए साथियों को छोड़ देगा ? क्या वह डरपोक है ? उसने बड़े दुःख से कहा—

देख लो हीरासिंह, जवाहरसिंह मुझे कैसी कड़ी बात कह रहा है । क्या मैं कलंकी हूँ, जो तुम सबको छोड़कर चला जाऊँगा । मैंने तो अपनी राय दी है, सब भाइयों को मंजूर हो तो ठीक है और न मंजूर हो तो क्या मैं सबको छोड़ दूँगा ? सिक्ख का बेटा हूँ—जान दे दूँगा, पर साथ न छोड़ूँगा । जवाहरसिंह मुझे हमेशा ऐसी ही सख्त बातें कहा करता है । तुम भी इसे नहीं रोकते ?

हीरासिंह नानक के दुःख से दुःखी हुआ । उसने जवाहरसिंह को सम-

झाते हुए कहा—

देखो जवाहरसिंह, नानक को तुम ऐसी कड़ी बात मत कहा करो। वह हम में सबसे छोटा है, पर उसने आज तक हमारे मुश्किल से मुश्किल काम में भी कदम पीछे नहीं रखा। हमेशा हमारे साथ रहा है और बड़ी बहादुरी से काम किया है। उसने अपनी राय दी है, तुम अपनी राय दे सकते हो, पर साथी का दिल दुखाना ठीक नहीं।

जवाहरसिंह पर इस झाड़ का अच्छा असर हुआ। वह ठण्डा होकर बोला—

मैं यह तो नहीं कहता कि नानक डरपोक है। मेरा तो इतना ही कहना है कि अगर वह माँ-बाप के पास जाना चाहता है तो उसे जाने दिया जाय, पर हम लोग तो अपना घरबार फूँक चुके हैं। हमारा अब रहा ही कौन है ? और पुलिस हमें चैन से बैठने भी न देगी। इसलिए मेरी तो बिल्कुल पक्की सम्मति है कि हमें अब इस उजाड़ जेल से निकल जाना चाहिए, इससे तो आबाद जेल अच्छी है।

नानक अभी जवान था, संसार की माया से बिल्कुल मुक्त नहीं हुआ था, परन्तु वह डरपोक नहीं था। उसे जवाहरसिंह की बातों से अपने लिए कुछ छोटेपन की और कमजोरी की बू आई। वह उसे सह नहीं सका। उसने दृढ़चित्त हो कहा—

भाइयो, यह न समझो कि मैं ऐशपसन्द हूँ या डरता हूँ। मैं भी सिक्ख का बेटा हूँ, जिनका हाथ पकड़ा उन्हें छोड़ नहीं सकता (हीरासिंह की ओर देखकर) और तुम्हें तो मैं अपने बाप के बराबर समझता हूँ। तुम्हारे कहने से आग में कूद सकता हूँ और अपनी खाल खिंचवा सकता हूँ। चाहे कुछ हो जाय, तुम लोगों के साथ जिऊँगा और तुम्हीं लोगों के साथ मरूँगा।

हीरासिंह की आँखों में आँसू आ गये। उसने जवाहरसिंह को सम्बोधित करते हुए कहा—

देखा जवाहरसिंह, मैं कहता था कि नानक कायर नहीं है,

वह कभी हमें धोखा नहीं दे सका। खैर, इस बात को जाने दो। अब सोचने की बात तो यह है कि हमें क्या करना चाहिये। यह मैं भी समझता हूँ कि इस हालत में देर तक रहना हम लोगों के लिये नामुमकिन है। अब हमें इस गुफा से निकलना चाहिए। दूसरा सवाल यह है कि यहाँ से निकलकर क्या करना चाहिए? मेरी राय है कि हम लोगों को यहाँ से निकलकर डाका डालना चाहिए। पकड़े गए तो जेल में चले जाएँगे, नहीं पकड़े गये तो आजादी से अपना काम करते जाएँगे।

इस सलाह को सुनते ही शेष तीनों आदमी उछल पड़े। सबने इस राय को बहुत पसन्द किया। उनके मुरझाये हुए हृदय खिल उठे जवाहर सिंह ने कहा—

ठीक है, हम सब इस सलाह को पसन्द करते हैं। यहाँ से आज ही कूच करना चाहिए और किसी बड़ी जगह डाका डालने का इन्तजाम करना चाहिए।

तैयारी शुरू हो गई, बहुत-सी बात तय हो गईं। यह भी निश्चय हुआ कि रात के अन्धेरे में यहाँ से रवाना होकर किसी ऐसी जगह डेरा डाला जाय, जहाँ डाका डालने और छिपने की सहूलियत हो। जब काम बाँटने लगे, तब पार्टी को यह अनुभव होने लगा कि पार्टी के सदस्यों की संख्या कम है। उस समय हीरासिंह को उम्मेद की याद आयी। वह बोला—

बेचारा बड़ा अच्छा लड़का था। बहादुर भी था और सच्चा भी। अगर वह हमारे साथ जेल से भागकर आ सकता, तो बड़े काम का सिद्ध होता। न जाने उसका क्या हुआ?

रत्नसिंह ने कहा—मैं तो समझता हूँ, मारा गया होगा। शोर से मालूम होता था कि जेल के सब लोग नीचे आ पहुँचे थे। उनके काबू आ गया होगा तो जिन्दा नहीं बचा होगा। बेचारे को जरूर मार डाला होगा।

जवाहरसिंह ने एक बात उठाई। उसने कहा—यह बात तो तय हो

गई कि हमें आज ही रात को यहाँ से रवाना हो जाना है और अगर हो सके तो दो-एक दिन में डाका भी डाल देना है। पर हमारे देह की हालत तो बिल्कुल ऐसी हो रही है जैसे निचड़े हुए नींबू की। इस देह के साथ बहादुरी का काम कैसे हो सकेगा। पहले इसे ताजा करना होगा। उसके लिए आज चलने से पहले किसी समय शराब मिलनी चाहिए। इन्सान कहीं शराब के बिना इतने दिन गुजार सकता है। फिर जिसे मर्दों वाला काम करना पड़े, उसके लिये तो शराब बहुत जरूरी है। शराब पिये बिना तो काम न चलेगा।

नानक को फिर जवाहरसिंह की बात काटनी पड़ी। उसने कहा—

इस गाँव में तो शराब है नहीं। आस-पास के गाँव से यहाँ लाई जायगी तो सन्देह पैदा हो जायगा। यदि वहाँ जाकर पिया जायगा तो पकड़े जाने का अन्देशा है। इस वक्त हम लोग बेहथियार हैं। अगर पुलिस का एक आदमी भी आ गया तो गिरफ्तार कर लेगा। मेरी तो राय है कि आज शराब मुलतवी की जाय। कल नए ठिकाने पर जाकर देखेंगे कि कोई इन्तजाम हो सकता है या नहीं ?

जवाहरसिंह भड़क उठा—

हर बात में अड़ङ्गा हमें अच्छा नहीं लगता। शराब के बगैर हम एक क़दम भी आगे नहीं चल सकते। शराब का ठिकाना तो ढूँढ़ना ही चाहिए। जेल तक में हमने शराब नहीं छोड़ी थी तो अब उसके बगैर कैसे गुजारेंगे ?

रत्नसिंह ने भी जवाहरसिंह की हाँ में हाँ मिलाई। हीरासिंह का झुकाव भी उधर ही था। दुर्भाग्यवश पंजाब के देहाती समाज में शराब का प्रचार बहुत अधिक है। जो जमींदारी पेशा करते हैं, उनके लिए तो शराब पीना दिनचर्य्या में शामिल हो गया है। पंजाब की जेलों तक में जिस बहुतायत से शराब चलती है, उसे देखकर आश्चर्य होता है। इस पर सभी के सहमत होने में देर न लगी कि अगला कदम उठाने से पहले शराब का इन्तजाम किया जाय।

यह काम भी नानकसिंह के सुपुर्द हुआ। उसके जिम्मे यह काम लगाया गया कि वह शाम को गाँव से यह पता लगाता आये कि शराब की दूकान किस गाँव में है।

(१६)

जिस रात रहमतुल्ला ने उम्मेद की नाक पर घूंसा मारा था, उससे अगले दिन प्रातःकाल हस्पताल से बड़े साहब के पास रिपोर्ट भेज दी गई कि रात को नींद में कैदी चारपाई से गिर गया था, इस कारण उसके सिर और नाक में चोट लग गई है और वह बेहोशी की हालत में है। रिपोर्ट पर छोटे डाक्टर के हस्ताक्षर थे, इसलिए वह सत्य ही समझी गई और मेजर साहब उस दिन उम्मेद से पूछताछ करने न आये।

उधर जेल के कर्मचारियों में खलबली मच गई थी। चन्दन और रहमतुल्ला डर से काँप रहे थे कि अगर अधिकारियों को किसी तरह भी यह पता चल गया कि हीरासिंह की पार्टी के भागने में उन लोगों का हाथ है तो जान बचानी मुश्किल हो जायगी। आई० जी० आग-बबूला हो रहा था। मेजर की इज्जत खतरे में थी। दरोगा तो कैदियों की रक्षा का उत्तरदाता है ही। असली जिम्मेवारी तो उसी की थी। उसकी तो नौकरी के जाने का डर था। ऐसी दशा में यह मालूम हो जाना कि कैदी हैडवार्डर की सहायता से भागे हैं, हैडवार्डर के लिए घातक था। सब अधिकारी उसे नोच-नोचकर खा जाते। रहमतुल्ला को अपने सामने दोजख दिखाई दे रहा था। उसका सभी कुछ बाजी पर चढ़ गया था, तब उसने पूरे जुआरी के हाथ दिखाने का निश्चय किया।

वह पहले छोटे डाक्टर के पास पहुँचा। उसके सामने यह प्रस्ताव रखा कि उम्मेद के चारपाई से गिरने और दिमाग में चोट लगने की रिपोर्ट कर दी जाय। डाक्टर का पालन-पोषण भी जेल के वातावरण में हुआ था। वह जानता था कि जेल में हरएक चीज के दाम हैं। उसने ऐसी रिपोर्ट करने के दाम मांगे। रहमतुल्ला जानता था कि

रिपोर्ट गिन्नियों से ख़रीदी जा सकेगी। वह तैयार था। उसने ५०) पेश किये। डाक्टर ने उसकी ओर देखा भी नहीं। कहा—जनाबे-आली, क्या मुझे बिलकुल घसियारा समझ लिया है कि ५०) में खरीदना चाहते हो। यद्यपि डाक्टर को यह मालूम नहीं था कि रहमतुल्ला क्यों घबरा रहा है, परन्तु उसकी भावभंगी से उसने यह अनुमान लगा लिया था कि मामला संगीन है और बाजी बहुत भारी है। थोड़ी देर तक सौदा होता रहा, अन्त में २५०) रु० पर बात तय हो गई। डाक्टर ने ढाई सौ की रक़म लेकर झूठी रिपोर्ट कर देने का वायदा कर लिया।

रहमतुल्ला के पास केवल वही रुपया बाकी था, जो उसे हीरासिंह से मिला था। उसमें से ढाई सौ रुपया उसने डाक्टर को दे दिया और चन्दनसिंह की तलाश में चला। चन्दनसिंह से वह बहुत घबरा रहा था। अभी तक उसने चन्दनसिंह को एक कौड़ी भी नहीं दी थी। चन्दन कई बार तकाजा भी कर चुका था। जब से उसे मालम हुआ कि मामले की तहकीकात होगी, तब से उसके दिल में सरकारी गवाह बन जाने की बात आ रही थी। वह सोच रहा था कि आज रहमतुल्ला काफी रक़म न दे तो मेजर साहब के पास जाकर सारी कहानी ऐसे ढंग से कह दे कि रस्सी रहमतुल्ला के गले में बंध जाय।

रहमतुल्ला उसे एकान्त में ले गया। वह चन्दन को अपने रास्ते पर लाना चाहता था। उसने उसके कन्धे पर हाथ रखकर कहा—

लो यार, अब दोनों मरे, पर तू पहले मरेगा और मैं पीछे।

चन्दन ने आश्चर्य में आकर कहा—

क्यों ? मैं पहले क्यों मरूँगा ?

रहमतुल्ला ने मनगढन्त बात बनाते हुए कहा—

क्या तुझे मालूम नहीं कि जिस तार से सरिये काटे गए थे, वह मिल गया है और मेजर के सामने यह भी बयान हो गया है कि तार

लाने का काम चन्दन ने किया ।

चन्दन काँप गया । काँपते हुए स्वर से बोला—

जमादार साहेब अब क्या होगा ?

रहमतुल्ला ने उत्तर दिया—

और क्या होगा, तेरी शामत आयेगी । वह उम्मेद सरकारी गवाह बनने जा रहा है । उसी ने तार वाली बात भी खोली है । उसने कैदियों से कह दी है और कैदियों ने बड़े साहब तक पहुँचा दी है ।

चन्दनसिंह का डर बढ़ता गया—

तो बड़े साहब ने क्या उस बात को सच ही मान लिया है ?

अभी तक तो नहीं, आज मैंने उन्हें सन्देह में डाल दिया है, पर आश्चर्य नहीं कि सच मान लें, क्योंकि वह एक-दो दिन में स्वयं उम्मेद के पास जाकर सारे मामले की तहकीकात करने वाले हैं । वह सारा भेद खोल देगा तो तू नहीं बच सकेगा ।

चन्दन बोला—

पर जमादार साहब, तब तो तुम भी नहीं बच सकोगे, क्योंकि वह तुम्हारी बात भी खोल देगा ?

रहमतुल्ला अपने डर को छिपाता हुआ कहने लगा—

खैर, मैं अपनी-आप भुगत लूंगा । मेरा रसूख बहुत बढ़ा हुआ है । मैं तो कर्नल साहब के पास जाकर भी अपनी सफ़ाई कर लूँगा, पर तेरा बचना मुश्किल है ।

तो फिर क्या मेरे बचने का कोई उपाय नहीं ?

हाँ, उपाय तो है, पर उसके करने के लिए हिम्मत चाहिए ।

हिम्मत की तो मुझ में कमी नहीं । बताओ क्या करना होगा ?

सुनो बतलाता हूँ । इस सारे झगड़े की जड़ वह बदमाश उम्मेद है । अगर वह भी भाग जाता या मर जाता तो कोई मुंह हमारे रहस्य को

खोलने को न रहता। पर वह तो बच गया और जब तक वह जिन्दा है, तब तक हम लोगों के लिए खतरा है।

हाँ, यह तो ठीक है। वह तो बच गया। पर अब किया जाय?

अब क्या किया जाय? बस अब बचने का एक ही रास्ता है कि उसे मार दिया जाय!

मार दिया जाय! जेल में उम्मेद को मार दिया जाय!! यह कैसे हो सकता है?

हो क्यों नहीं सकता! कोशिश की जाय तो सब कुछ हो सकता है। जरा अक्ल चाहिए और थोड़ी-सी हिम्मत चाहिए, इन्सान सब कुछ कर सकता है। तेरी और मेरी रक्षा का एक ही उपाय है कि वह काफिर उम्मेद जिन्दा न रहे।

(१७)

पुलिस ने बहुत तलाश किया, पर भागे हुए कैदियों को न पा सकी। उन्होंने शहर और गांव छान मारे, सड़कों की नाकाबन्दी कर दी, पर भगोड़ों का पता न लगा। तब उनकी तस्वीरें सब रेल-स्टेशनों पर और पुलिस की चौकियों पर टाँग दी गयीं और प्रत्येक की गिरफ्तारी पर १०००) का इनाम घोषित कर दिया गया।

खोज का काम करने के लिए सी० आई० डी० का एक खास अंग्रेज अफसर नियुक्त किया गया। उस अफसर ने सब ऐसे स्थानों की देखभाल का प्रबन्ध कर दिया, जहाँ कैदियों के पहुँचने की आशा थी। पचास मील के अन्दर-अन्दर जो रेलवे स्टेशन, होटल और शराब-खाने थे, उन पर खुफिया पुलिस के सिपाही तैनात कर दिए गये। अफसर जानते हैं कि सिक्ख कैदी सब-कुछ सहन कर सकते हैं, पर बहुत दिन तक खाने-पीने का कष्ट सहन नहीं कर सकते। उन्हें गोश्त और शराब तो चाहिए ही। इसलिए उस इलाके के होटलों और शराब की दूकानों के

मैनेजरों को खास हिदायतें दी गई थीं। कैदियों के फोटो के साथ उन्हें आदेश दिया गया था कि जब कोई संदिग्ध व्यक्ति शराब लेने आये तो तत्काल पुलिस को खबर भेजी जाय।

हीरासिंह के मुँह में जो गिन्नियों का स्टोर था वह अब समाप्ति पर था। उसका बहुत बड़ा हिस्सा तो रहमतुल्ला को अर्पण हो चुका था, जो गिन्नियाँ शेष रह गई थीं, उनमें से एक अब तक भोजनादि के खर्च में उठ चुकी थी। केवल दो गिन्नियाँ शेष थीं। उनका बजट इस प्रकार बनाया गया कि एक गिन्नी में तो कुछ कपड़े खरीदे जाएँ, ताकि जेल के कपड़े बदले या ढके जा सकें। शेष एक गिन्नी को शराब और खाने के लिए रखा गया। इसके आगे—यह सोचना डाकू की प्रकृति के विरुद्ध है। फिर तो यही आशा थी कि डाके में हजारों का माल मिलेगा और ऐश उड़ाई जायगी।

नानक गाँव के बनिये की दूकान से कुछ मोटे कपड़े ले आया, जिनमें से सब आदमियों ने गंवारू ढंग का एक-एक तैमत, एक-एक साफा और एक-एक ओढ़ने की चादर बनाई। जेल के कपड़ों को उतारकर एक गठरी में बाँध लिया, ताकि मुसाफिरों की-सी सूरत बन जाय। सब लोगों ने दाढ़ी के बालों को जुल्फों की तरह दो हिस्सों में बाँटकर साफे का एक लड़ उस पर से लपेट लिया, जिससे चेहरे का एक बड़ा हिस्सा छिप जाय। इस प्रकार, सीधे-सादे ग्रामीण सिख बनकर वे लोग अपनी सात दिन की आराम-गाह से निकले और उस गाँव की ओर चले, जिसमें शराब की दूकान थी।

गाँव में पहुँचकर उन लोगों ने सराय में डेरा जमाया। सायंकाल का अन्धेरा आकाश पर छा चुका था। घरों में दिये टिमटिमा रहे थे। रास्तों में अन्धकार था, जो हिन्दुस्तानी गाँव की चाल है। गाँव का नाम पीराबाद था। वह उस हल्के का सब से बड़ा गाँव था। उसमें बहुत से पक्के मकान थे, सराय थी, छोटा डाकखाना था, पुलिस की चौकी थी

और छोटा-सा बाजार भी था, जिसमें एक शराब की दूकान थी। शराब की दूकान का मालिक पं० मंगूराम जाति का ब्राह्मण था, बड़ा धर्मी-कर्मी आदमी था। वह शराब की कमाई से शिवजी का एक मन्दिर तालाब पर बनवा चुका था और पुलिस का खास कृपापात्र था, क्योंकि उसकी कृपा से दोनों को लाभ था। मंगूराम को तो यह लाभ था कि वह लाइसेन्स के नियमों के विरुद्ध हर समय और हर तरह की निषिद्धि-अनिषिद्ध मादक चीजें बेच सकता था और पुलिस को यह फायदा था कि वह इर्द-गिर्द के सब बदमाशों का पता आसानी से चला सकती थी, और अपना शराब का शौक बटुवे पर जोर डाले बिना ही पूरा कर सकती थी।

रात के लगभग दस बज चुके थे, जब चारों आदमी सराय से निकले और बाजार में पहुँचे। सावधानी के तौर पर हीरासिंह और जवाहरसिंह तो हलवाई की दूकान पर ठहरकर खाने की चीजों का सौदा करने लगे और रत्नसिंह और नानकसिंह शराब की दूकान पर चले गए। हीरा और जवाहर पंजाब के नामी डाकू होने के कारण आसानी से पहचाने जा सकते थे। रत्नसिंह और नानक ने शराब की दूकान पर जाकर चार बोतलों का आर्डर दिया। गाँव में चार बोतलों का आर्डर असाधारण ही समझा जाता है। पं० मंगूराम स्वयं दूकान पर बैठा हुआ था। वह जरा चौंका, परन्तु खरीदने वालों की आकृति में कोई खास बात न देखकर शान्त हो गया। चार बोतलें लाकर दे दीं और दाम मांगे। रत्नसिंह ने अपनी अन्टी से निकाल कर एक गिन्नी उसके हाथ पर रख दी। गिन्नी को देखकर तो पं० मंगूराम का माथा जोर से ठनका, परन्तु वह पुराना घाघ था। सन्देह को जाहिर न किया और गिन्नी लेकर शेष पैसा देने के बहाने से अन्दर चला गया। वहाँ सन्दूक में पुलिस के भेजे हुए चारों भागने वाले क़ैदियों के चित्र रखे हुए थे। उन्हें लालटेन जलाकर देखा तो थोड़ी बहुत समानता पाई। दूकान के नौकर घीसा को अन्दर बुलाकर कुछ समझाकर बाहर भेज दिया और स्वयं जाकर गद्दी पर बैठ गया। रत्नसिंह ने

कहा—लाला, बाकी पैसे ? मंगूराम ने कहा—भाई जी, गिन्नी का भाव दूकान पर नहीं था, महाजन की दूकान से मंगाया है। अभी एक मिनट में आ जाता है।

वह एक मिनट कोई दस मिनट में समाप्त हुआ। इस बीच में रनसिंह और नानकसिंह ने गिन्नी और नाँवा लाने वाले को दबी जबान से बहुत-सी गालियाँ दे डालीं, पर वे गालियाँ दूकान और पुलिस की चौकी के बीच में जो अन्तर था, उसे कम न कर सकीं। आखिर घीसा वापिस आया और उसके कोई बीस कदम पीछे काली कम्बली ओढ़े एक मुसलमान फकीर आता हुआ मंगूराम को दिखाई दिया। मंगूराम ने शेष दाम रनसिंह के हाथ पर गिन दिए। रनसिंह और नानकसिंह देर के लिए दूकानदार को कोसते हुए वहाँ से रवाना हो गए।

कुछ खाने का सामान लेकर चारों आदमी सोचने लगे कि कहाँ बैठकर पेट-पूजा की जाय। सराय में शराब पीने से शोर मचने का खतरा था, इसलिए उन्होंने गाँव के बाहर तालाब पर जाकर डेरा जमाने का निश्चय किया। सराय में गए, अपनी गठरी उठाई और तालाब की ओर चल दिए। काली कम्बली वाला फकीर उनके पीछे-ही-पीछे चला जा रहा था, परन्तु अन्धेरे के कारण काली कम्बली दिखाई नहीं देती थी और सरदारों के सफेद कपड़े चमक रहे थे। जब वे लोग तालाब के किनारे जाकर बैठ गए और खाने का दौर जारी हुआ तो वह काली-कम्बली वहाँ से सरक गई और थोड़ी देर पीछे चार सिपाहियों के साथ एक सुसज्जित थानेदार मन्दिर की दीवार के पीछे आकर खड़ा हो गया। एक साइकिल सवार दूसरी चौकी की ओर, जो वहाँ से कोई तीन मील की दूरी पर थी, इससे पहले ही रवाना हो चुका था।

(१८)

दूसरे दिन उम्मेद की हालत बहुत खराब रही। नाक से बहुत खून बह जाने के कारण उसकी निर्बलता बढ़ गई और वह आधी बेहोशी में पड़ा रहा।

जिस रात रहमतुल्ला ने उम्मेद को नाक पर घूंसा मारकर बेहोश कर दिया था, उससे अगले दिन लाहौर से आई० जी० का फोन आया। जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट से दर्याफ्त किया गया था कि कैदियों के भागने के सम्बन्ध में जो तहकीकात हो रही है, उसका क्या नतीजा हुआ ? आई० जी० ने यह भी पूछा था कि जो कैदी पकड़ा गया था, उसने कोई बयान दिया या नहीं ? मेजर ने उत्तर दिया कि तहकीकात बन्द कर देनी पड़ी, क्योंकि कैदी चारपाई से गिरकर बेहोश हो गया है और शायद दो-एक दिन तक इस योग्य न हो कि उससे कोई पूछ-ताछ की जा सके, क्योंकि रिपोर्ट से मालूम होता है कि उसका दिमाग़ भी खराब हो गया है। वह बहुत दिनों तक कोई सम्बद्ध उत्तर शायद ही दे सके।

इस उत्तर से आई० जी० को सन्तोष नहीं हुआ। उसके दिल में यह सन्देह पैदा हुआ कि शायद जेल वाले मामले को दबा देना चाहते हैं, क्योंकि कैदियों के भागने से उनके सिर पर बहुत बड़ी जिम्मेवारी आती है। उसने मेजर से तो कुछ नहीं कहा, परन्तु उसी समय डी० आई० जी० मेजर सोमेन्द्रनाथ सूद को सुल्तानपुर जाकर तहकीकात करने का हुक्म दे दिया। इस बात को इतना गुप्त रखा गया कि सुल्तानपुर के अधिकारियों को सूद साहिब के शहर में पहुँचने का तब पता चला, जब वह जेल के फाटक पर पहुँच कर मोटर का हार्न बजाने लगे। उस समय दरबान ने भागकर दरोगा को और दरोगा ने सुपरिन्टेण्डेन्ट को सूचना दी कि लाहौर से डी० आई० जी० साहब आ गये हैं।

परन्तु उस समय तक मामले की सूरत ही बदल चुकी थी। सुबह होने के साथ ही एक पहरेदार ने जेलर को सूचना दी कि हस्पताल में एक बीमार मर गया है। दरोग़ा ने छोटे डाक्टर को साथ लिया और भागा हुआ अस्पताल में पहुँचा। वहाँ जाकर देखा तो चारपाई पर उम्मेद की लाश पड़ी है। मुँह से झाग निकलने के निशान हैं, आँखें माथे से मानो बाहर निकल आई हैं, ओठों से जहर की-सी बदबू आ रही है और शरीर कम्बल से ढका हुआ है। डाक्टर ने नब्ज को देखा, माथे पर

हाथ रखा और थरमामीटर लगाया। जब कहीं जीवन का चिह्न दिखाई न दिया तो जेलर की ओर देखकर कहा कि यह तो मर गया। आई० जी० ने इस कैदी को बहुत सम्भालकर रखने की बात कही थी और यह मर गया, इस बात का ध्यान आते ही जेलर का जी बहुत घबरा गया और वह भागकर सुपरिन्टेण्डेन्ट साहब के पास गया। सुपरिन्टेण्डेन्ट न जब यह बात सुनी तो उसे पाँव तले से पृथ्वी निकलती दिखाई देने लगी। अब उसके मन में यह भावना पैदा होने लगी कि कहीं दाल में काला है और इस मामले की तह में कोई न कोई रहस्य है। अस्तु, झटपट कपड़े पहने और अस्पताल में जाकर स्वयं लाश को देखा। लाश वैसी ही पड़ी थी जैसी दरोगा ने देखी थी। मेजर ने कम्बल उघाड़कर लाश की परीक्षा की तो मुँह से ज़हर की बू आ रही थी। फिर उसने शेष शरीर की भी परीक्षा की तो चेहरे पर आश्चर्य के चिह्न दिखलाई दिए। इतने में दफ्तर से भागा हुआ एक आदमी आया और उसने खबर दी कि डी० आई० जी० साहिब ड्योढ़ी में आ गये हैं और मेजर साहब को याद कर रहे हैं। मेजर ने लाश पर कम्बल डाल दिया, अपने खास दो आदमियों को पहरेदार नियुक्त कर दिया और दरोगा को प्रारम्भिक तहकीकात का काम सौंपकर दफ्तर में पहुँचकर सूद साहब से भेंट की। मेजर के आने से पहले ही एक असिसस्टेन्ट जेलर से, जो दफ़्तर में काम कर रहा था, सूद साहब को पता चल गया कि अस्पताल में कोई मौत हो गई है। कुर्सी पर बैठे हुए सूद साहब ने मेजर से पूछा—

मैंने सुना है, हस्पताल में कोई कैदी मर गया है। क्या बीमारी थी?

मेजर के माथे पर चिन्ता की रेखायें और गम्भीर हो गईं। उसने उत्तर दिया—

किस बीमारी से मरा, यह कैसे कहूँ? मामला बहुत ही बेढब है। यह वही कैदी था, जो भागते हुए पकड़ा गया था।

ज़ो भागते हुए पकड़ा गया था? यह शब्द कहते हुए डी० आई० जी० कुर्सी से खड़ा हो गया। उसका दिल पहले ही इस मामले में

सन्देह से भरा हुआ था। आई० जी० ने उसे मामले की तह तक पहुँचने के लिये भेजा था। मामले की तह तक पहुँचने का एक ही उपाय था कि भागते हुए पकड़ा गया कैदी सचाई को प्रकट कर दे। जेल-विभाग का विश्वास था कि जेल के कर्मचारियों की साजिश के बिना सुल्तानपुर जेल से कैदी नहीं भाग सकते। ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता था, त्यों-त्यों उनका यह विश्वास पक्का होता जाता था। उम्मेद की मृत्यु के समाचार ने इस विश्वास को और भी पक्का कर दिया और डी० आई० जी० बिल्कुल झुँझलाकर खड़ा हो गया।

उसी समय जेलर और उसके पीछे-पीछे चीफ हैडवार्डर रहमतुल्ला खाँ ने कमरे में प्रवेश किया। रहमतुल्ला के हाथ में जहर की एक शीशी थी। जेलर ने डी० आई० जी० को सलाम किया और उस शीशी को हैडवार्डर के हाथ से लेकर मेज पर रखते हुए कहा—

मेजर साहब, आपके आने के बाद हैडवार्डर की सलाह से मैंने जेल के कई हिस्सों की तलाशी ली। चन्दनसिंह पहरेदार की कोठरी से यह शीशी बरामद हुई है। बू लेने से यह वही जहर प्रतीत होता है, जिसकी बू उम्मेद के ओठों से आ रही है। मैंने चन्दनसिंह को गिरफ़्तार करके तनहाई की कोठरी में बन्द कर दिया है।

सूद साहब ने शीशी को उठाकर सूँघा और सम्भालकर रखने का आदेश करके मेजर को दे दिया। मेजर ने उसे सेफ में बन्द करके चाबी अपनी जेब में डाल ली।

सूद साहब ने पहला काम तो यह किया कि सुल्तानपुर जेल के सिविल हस्पताल में मुर्दों की परीक्षा करने वाले विभाग को मौत की सूचना देते हुए शीघ्र से शीघ्र लाश को जेल से ले जाकर पोस्ट मार्टम करने की आज्ञा दी। उसके पश्चात् स्वयं लाश को देखने की इच्छा प्रगट की। सब लोग अन्दर चले गये और सूद साहब ने, जो एक ऊँचे दर्जे के डाक्टर थे, लाश की परीक्षा की। लाश की परीक्षा से सूद साहब को भी वैसा ही आश्चर्य हुआ, जैसा मेजर साहब को हुआ था।

मुँह में जहर की बू थी, परन्तु शरीर पर जहर के प्रभाव का कोई असर नहीं था। प्रतीत होता था कि केवल जहर के छूने से ही प्राण जाते रहे हों।

पोस्ट मार्टम वाले शीघ्र ही लाश को ले गये। डी० आई० जी० ने दफ़्तर में जाकर पहले आई० जी० को फोन द्वारा कैदी की मृत्यु की सूचना दी और कर्मचारियों के बयान लेने आरम्भ कर दिये। सुपरिन्टेन्डेन्ट और जेलर ने सारे मामले से अपने को अनजान बतलाया और कहा कि अभी तक इसका कोई सबूत नहीं मिला कि जेल का कोई कर्मचारी कैदियों के भगाने में शामिल था। हाँ, चन्दनसिंह के पास वही जहर मिला है, जो उम्मेद के मुँह पर लगा हुआ था। इससे प्रतीत होता है कि चन्दन ने ही उम्मेद को मारा।

रहमतुल्ला खाँ के भी बयान लिये गये। उसन दरोगा के बयान का समर्थन करते हुए इतना और कहा कि कई दिनों से चन्दनसिंह के खिलाफ तरह-तरह की रिपोर्ट हो रही थी, जिनमें से हीरासिंह की पार्टी से उसके मेलजोल की रिपोर्ट मुख्य थी। उसका भागने वाले कैदियों से गहरा सम्बन्ध था। सिक्ख होने से वह उसका मददगार बना रहता था। जब से उम्मेद पकड़ा गया, तब से वह बरावर उसके पास आता जाता था, जिससे प्रतीत होता है कि वह अपने अपराध को छिपाने के लिए उम्मेद का मुँह बन्द करना चाहता था। मेरा ख्याल है कि चन्दनसिंह ने ही जहर देकर उम्मेद को मारा।

रहमतुल्ला ने अपने बयान की पुष्टि में कई और भी बयान कराये। बयान देने वाले कई जमादार और नम्बरदार थे। उन्होंने हैडवार्डर के कथन का समर्थन करते हुए चन्दनसिंह को पूरी तरह दोषी ठहराया।

उधर चन्दनसिंह की हालत बहुत खराब हो गई थी। अपनी कोठरी से जहर की बोतल निकली देखकर वह बिल्कुल पागल हो गया था पूछते कुछ थे और वह उत्तर कुछ देता था। सूद साहब ने जब उसे बयान के लिये बुलाया तो उसने पहले तो जेल अधिकारियों को खूब

गालियाँ दीं और फिर अपने बाल नोंचने लगा। उसका दिमाग बिल्कुल बिगड़ गया था।

सूद साहब ने अपनी तहकीकात की प्रारम्भिक रिपोर्ट उसी दिन तैयार कर ली, परन्तु उनका दिल सन्तुष्ट नहीं हुआ, पग-पग पर उन्हें सन्देह घेर रहा था। चन्दनसिंह की बदहवासी ने मामले को और भी पेचीदा बना दिया था। उस पर जब पोस्टमार्टम की रिपोर्ट आई, तब तो वह बहुत ही अचम्भे में आ गये। डाक्टर ने रिपोर्ट की थी कि उम्मेद की मृत्यु जहर से नहीं हुई। जहर तो केवल मुँह तक ही पहुँचा है, पेट तक नहीं गया। मौत तो गला घोंटने से हुई है और उसके लिये कम से कम दो आदमियों का होना आवश्यक है, क्योंकि पेट और गला, दोनों पर ही पूरा दबाव डाला गया है।

ऐसी दशा में चन्दनसिंह को अपने पीछे छोड़ना डी० आई० जी० को उचित प्रतीत नहीं हुआ। वह तहकीकात की रिपोर्ट के साथ ही बदहवास चन्दनसिंह को साथ लेकर लाहौर चले गये और अपनी रिपोर्ट आई० जी० के सामने पेश कर दी। चन्दनसिंह को पागलखाने भिजवा दिया गया।

(१९)

जैसे बहुत दिनों का भूखा बाज शिकार पर झपटता है, वैसे ही वे चारों आदमी पहले खाने पर और फिर शराब की बोतलों पर टूटे। सबने खूब भर-पेट खाया। पीने में बाज़ी लगाई कि कौन जल्दी बोतल खतम करता है। मंगूराम ने शराब बहुत तेज दी थी। आधी-आधी बोतल में ही चारों के होश भागने लगे थे। जब तक दिमाग ठिकाने में था, आपस में धीरे-धीरे बातें करते रहे, ताकि गाँव वालों तक आवाज न पहुँचे। आधी बोतल अन्दर चले जाने पर सावधानता ने कूँच बोल दिया और बोतल खाली होने पर तो रही-सही बुद्धि भी जाती रही। चारों आदमी ज़ोर-ज़ोर से बोलने और जिस गाँव पर डाका मारने का विचार था, उसके निवासियों को, जेल और पुलिस

वालों को और शराब के दूकानदार को गर्मागर्म गालियाँ देने लगे। जब गालियाँ देकर थक गये, तो यह प्रस्ताव हुआ कि घड़ी-दो-घड़ी आराम किया जाय और फिर मुहिम पर रवाना हुआ जाय, क्योंकि चोरी और डाके का समय प्रायः आधी रात के पीछे ही होता है।

हीरासिंह अपनी पार्टी में सबसे अधिक समझदार और चौकन्ना था। शराब से पागल होकर भी वह पूरी तरह बेहोश नहीं हुआ था। उसने प्रस्ताव पेश किया कि सब लोग इकट्ठे आराम न करें, बारी-बारी से हरएक आधे-आधे घन्टे का पहरा दे। प्रस्ताव स्वीकार किया गया। सबसे पहले पहरा देने का काम जवाहरसिंह ने अपने जिम्मे लिया। उसे छोड़कर शेष सब मन्दिर के चबूतरे पर लेट गये और नींद की गहराई में चले गये।

जवाहरसिंह ने सबसे अधिक खाया था और शराब भी कुछ अधिक ही पी थी। उसने दूसरों की बोतलों में से छीनकर थोड़े बहुत घूँट पी लिये थे। सबके सो जाने पर वह उठा और चारों ओर नज़र दौड़ाई। कहीं किसी आदमी की आहट न सुनाई दी। तब वह अपने साथियों के पास लौट आया और यह सोचकर कि इस अन्धेरी रात में और बीयाबान जगह पर कौन आता है, वह अपने साथियों के पास ही लेट गया और खर्राटे भरने लगा।

अब तक पास के गाँव से पाँच सिपाहियों को लेकर एक थानेदार मदद के लिये आ पहुँचा था। वे लोग दबे पाँव मन्दिर के पीछे आकर प्रतीक्षा कर रहे थे। हीरासिंह की पार्टी का पंजाब की पुलिस पर ऐसा आतंक छाया हुआ था कि ये चार थे और वे लगभग एक दर्जन, तो भी आसानी से सिपाहियों को आगे बढ़ने की हिम्मत नहीं होती थी। जब पुलिस वालों ने देखा कि सब लोग सो गये, तब वे धीरे-धीरे आगे बढ़े और चारों ओर से घेरा डाल दिया। घेरा ऐसे ढंग से डाला कि प्रत्येक आदमी के पास तीन-तीन सिपाही रहें। इस प्रकार व्यूह-रचना करके सब इन्सपेक्टर ने जेब से टार्च निकाला और उसको

रोशनी एक-एक करके सबके मुँह पर डाली। देखने से उसे निश्चय हो गया कि चारों आदमी वे ही हैं, जिनके बारे में इश्तिहार निकल चुका है।

जिन जवानों को जेल की दीवारें न रोक सकीं, वे शराब के वश में आकर एक दर्जन भर सिपाहियों के खिलौने बन गये। सिपाहियों को सोते हुए शेरों के हाथों में हथकड़ियाँ डालते देर न लगी। जब वे लोग सावधान हुए, तब हाथ हथकड़ियों में बँध चुके थे और हरएक को तीन-तीन आदमियों ने दबोच रखा था। एक बार तो चारों आदमी झुंझलाये और छूटने की चेष्टा की, परन्तु पुलिस के आदमी बिल्कुल तैयार थे, उन्होंने अच्छी तरह कस रखा था। कुछ न कर सके। दरोगा ने सावधानी से दोनों हाथों में भरे हुए रिवाल्वर थामे हुए थे। उसने उन्हें खटपट करते हुए देखकर ललकारकर कहा—

खबरदार ! मेरे दोनों हाथों में रिवाल्वर है। तुम में से जो आदमी छूटने या भागने की चेष्टा करेगा, वह गोली का शिकार बनेगा। हाथ ऊपर उठा लो और सीधी तरह आगे-आगे चलने लगो।

चारों कैदी हाथ ऊपर को उठाये और मुँह नीचे को लटकाये सिपाहियों के आगे-आगे चलने लगे। उन शराब की बोतलों ने निर्भीक शेरों को भेड़ बना दिया।

भगोड़े कैदियों के पकड़े जाने और लाहौर सेण्ट्रल जेल में पहुँचने का समाचार पाकर आई० जी० और जेल के अन्य अधिकारियों को जो हर्ष हुआ, उसका वर्णन करना कठिन है। जब से कैदी भागे, आई० जी० की तो नींद हराम हो रही थी। उसे कैदियों का भागना अपनी पीठ पर कोड़े के समान लग रहा था। उसे यह भी आशा हुई कि अब कैदियों के भागने की गुत्थी भी आसानी से सुलझ सकेगी।

सप्ताह भर के इलाज से चन्दनसिंह की दशा सुधरने लगी। वह होश की बातें करने लगा। पागलखाने के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने जेलविभाग को सूचना भेज दी कि चन्दनसिंह नीरोग हो गया है, उसे हस्पताल से बुला

लिया जाय।

चन्दनसिंह को आई० जी० के सामने पेश किया गया। आई० जी० ने उसे प्रारम्भ में ही अभयदान देते हुए कहा कि अगर तुम सब कुछ सच-सच बतला दोगे तो न केवल इतना ही कि तुम्हें सजा से बचाया जायगा, बल्कि इनाम भी मिलेगा।

चन्दनसिंह शायद स्वभाव से सरकारी गवाह न बनता; परन्तु रहमतुल्लाखाँ की बेईमानी ने उसे विक्षुब्ध कर दिया था। उसे उस धूर्त पर बहुत क्रोध आ रहा था। उसने सब सच कह देने का वायदा कर लिया।

चन्दनसिंह के बयान पर रहमतुल्ला गिरफ्तार कर लिया गया। उस पर कैदियों के भगाने और उम्मेद को मारने का अभियोग चलाया गया। इधर हीरासिंह की पार्टी पर जेल से भागने का मुकदमा चलाया गया। उन चारों ने सब कुछ कबूल कर लिया। हीरासिंह ने आई० जी० से अपनी झड़प का किस्सा सुनाते हुए कहा—हम लोगों के भागने का और कोई उद्देश्य नहीं था। हमें तो कर्नल साहब की बात का जवाब देना था, सो दे दिया। अब हमें कोई परवाह नहीं। जहाँ पचास साल जेल में काटने थे, वहाँ बावन साल काट लेंगे। इस जन्म में न सही अगले जन्म में सही।

अपने बयान में उन्होंने रहमतुल्ला का सारा कच्चा चिट्ठा भी खोल दिया। कैदियों के भगाने के सम्बन्ध में चन्दनसिंह ने जो कुछ कहा था, हीरासिंह के बयान से उसकी पुष्टि हो गई।

चन्दनसिंह ने अपने बयान के उत्तरार्द्ध में उम्मेद की हत्या का वर्णन किया। हम उसी के शब्दों में उसे सुनाना चाहते हैं। उसने कहा—

जिस रात को उम्मेद की हत्या की गई, उससे पहले दिन प्रातःकाल रहमतुल्ला मेरे पास आया। उसने मुझे यह कहकर उठाया कि बड़े साहब तक तेरी यह शिकायत पहुँच गई है कि तूने कैदियों को भागने में सहायता दी। मैं इससे डर गया। मेरे यह पूछने पर कि ऐसी हालत में

मुझे क्या करना चाहिए, रहमतुला ने कहा कि उम्मेद को जान से मार डालना चाहिए, क्योंकि वही एक ऐसा आदमी है, जो तेरे विरुद्ध गवाही दे सकता है। उसने यह भी कहा कि उम्मेद मेरा भी दुश्मन है, इसलिए मैं भी उसकी हत्या में तुम्हारी मदद करूँगा। मैं अपनी चिन्ता में था। उसकी मन्त्रणा में शामिल हो गया।

जब सायंकाल के समय जेल बन्द हो गया और सब अफसर अपने-अपने घरों को चले गये, तब रहमतुल्ला फिर मेरे पास आया और मुझ से कहा कि मैंने आज रात को ही उम्मेद से आखिरी फैसला करने का इरादा कर लिया है। तुझे भी मेरे साथ चलना होगा।

मैंने पूछा—तुम क्या करना चाहते हो ?

उसने कहा—एक बार और आखिरी बार उससे पूछूँगा कि वह कैदियों के भागने के भेद को छिपाने को तैय्यार है या नहीं ? अगर मान गया तो ठीक है और अगर न माना तो उसी समय उसकी सफाई कर देनी होगी।

मैंने पूछा—सफाई कैसे की जायगी ?

उसने उत्तर दिया गला घोंटकर। वह बीमार है और बहुत कमजोर है। विरोध न कर सकेगा। थोड़ा-सा गला दबाने से ही उसके प्राण निकल जायेंगे। इससे यह लाभ होगा कि कोई मारने वाली चीज भी न पकड़ी जा सकेगी और कहा जा सकेगा कि वह कमजोरी की वजह से मर गया।

रात को बारह बजे के लगभग रहमतुल्ला और मैं जेल के अन्दर पहुँचे, दरवाजे की ड्यूटी पर जो जमादार था, उसने रहमतुल्ला से पूछा कि हजूर, इस वक्त किधर ? उसने उत्तर दिया कि आज गश्त के लिए जा रहा हूँ। जब से जेल से कैदी भागे हैं, तब से रात को गश्त करने का भी हुक्म आ गया है और हम दोनों अन्दर चले गए।

कई बारगों में घूमते हुए हम अस्पताल में पहुँचे। वहाँ पहुँचकर जो पहरेदार था, उसे रहमतुल्ला ने यह कहकर बाहर भेज दिया कि मुझ

बारक नम्बर चार में कुछ खटपट-सी मालूम हो रही है। तू चुपके से वहाँ जाकर उसके दरवाजे के बाहर बैठ जाना और आधे घण्टे तक ताड़ते रहना कि कोई खास बात तो नहीं है। वहाँ के आज के पहरेदार पर मुझे कुछ शक है। आधे घण्टे के बाद आकर मुझे यहीं खबर देना। तब तक मैं यहीं रहूँगा।

पहरेदार चला गया तब रहमतुल्ला ने जेब में से चाबियों का गुच्छा निकाला और उस कोठरी को खोला, जिसमें उम्मेद लोहे की खाट पर पड़ा हुआ था। हमारे अन्दर जाने से जो आहट हुई, उससे मालूम होता है कि उम्मेद की नींद उचट गई, क्योंकि वह हिला और जब हम उसके पास पहुँचे तो सेहन की हल्की-सी रोशनी में उसकी खुली हुई आँखें दिखाई दे रही थीं। जब उसने रहमतुल्ला की शक्ल देखी तो उसकी आँखों पर और चेहरे पर क्रोध के चिन्ह दिखाई दिए और उसने उठने का यत्न किया, परन्तु रहमतुल्ला ने उसे हाथ से दबाकर रोक दिया और कान के पास मुँह ले जाकर कहा कि घबराने की कोई बात नहीं, मैं तुझे कोई नुकसान पहुँचाने नहीं आया, सिर्फ बात करने आया हूँ। तू मेरी बात तो सुन ले। उम्मेद कमजोर तो था ही उठने का यत्न करने से और रहमतुल्ला के हाथ के दबाव से थककर फिर बिस्तर पर लेट गया और सूनी और बेबस आँखों से हमारी ओर देखने लगा।

रहमतुल्ला ने उसके कान के पास मुँह ले जाकर कहना शुरू किया—अरे, क्या तू मरना चाहता है। क्या तुझे अपनी जान प्यारी नहीं। अगर तू मुझ से वायदा करे कि कैदियों के भागने के रहस्य को नहीं खोलेगा तो मैं तुझे साफ बचा दूँगा। तू भागने के जुर्म से भी बरी हो जायगा। जिन्दा रहेगा तो किसी दिन जेल से छूटकर आजाद हो जायगा, अन्यथा समझ लेना कि तेरी खैर नहीं, क्योंकि रहमतुल्ला के डसे का कोई इलाज नहीं। बोल, क्या कहता है।

उम्मेद ने बोलने की कोशिश की, पर कमजोरी इतनी अधिक थी कि स्पष्ट शब्दों में कुछ न कह सका, परन्तु उसने सिर की चेष्टा और

आँखों से यह स्पष्ट कह दिया कि उसे रहमतुल्ला का प्रस्ताव मंजूर नहीं। उसके होंठ हिले तो मानो उसने कहा कि चाहे मरूँ, पर कहूँगा जरूर। उस शरीर की बेहद कमजोरी की हालत में भी उसका दिमाग़ ठिकाने था। मुझे उसकी हालत देखकर रहम आने लगा था। वह तो स्वयं ही मरा पड़ा था, अब उसे क्या मारा जायगा।

रहमतुल्ला ने उसका अभिप्राय समझ लिया और मेरी ओर देखकर दबी जुबान से कहा—देखा, क्या कह रहा है। इसके घुटनों को ज़ोर से दबा, मैं इसका गला दबाता हूँ। मैं घुटनों की ओर बढ़ा और रहमतुल्ला ने गले पर हाथ रखे। था तो उम्मेद बीमार और कमजोर भी बहुत हो गया था, परन्तु उस समय न जाने उसमें कहाँ से बल आ गया कि उसने हाथ और पाँव घुमाकर हम दोनों को कई सैकिंडों तक रोके रखा। निर्बलता के कारण वह उठ नहीं सकता था, परन्तु लेटे-ही-लेटे उसने जीवन की रक्षा की पूरी कोशिश की, परन्तु कब तक? मुझे तो उस पर दया आने लगी थी, पर रहमतुल्ला ने मेरे कान के पास मुँह लेजाकर कहा—अरे क्या अपनी जान देगा ? अब इसे जिन्दा नहीं छोड़ सकते। जल्दी कर। मैंने पूरे ज़ोर से उसके घुटनों को दबाया और उस पर बैठ गया। रहमतुल्ला ने गरदन दबा रखी थी, वह छाती पर बैठ गया। दो आदमियों से दबा रहने पर भी बेचारे ने काफी हाथ-पैर मारे, छटपटाया, पर रहमतुल्ला ने पूरे ज़ोर से गले को दबाये रखा। दो मिनट तक प्राणरक्षा की चेष्टा करके उसका शरीर निढाल हो गया। एक बार गले से घरघराहट की आवाज़ सुनाई दी और बस उसके जीवन का टिमटिमाता-सा दिया बुझ गया। जब उसका शरीर लाश होकर पड़ गया तब मेरे दिल में एक तीर-सा चुभ गया। मुझे अनुभव हुआ कि मैंने बुरा किया और मैं चुपचाप रहमतुल्ला के पीछे-पीछे हस्पताल से निकला और अकेला ही सदर दरवाजे से निकलकर बाहर आ गया। मैं प्रायः हैडवार्डर के साथ रहता था, इस कारण मेरे आने-जाने पर रुकावट नहीं थी। बाहर आकर मैं कोठरी में गया और

लेटकर सोने की चेष्टा की, परन्तु उम्मेद के गले की वह अन्तिम घर-घराहट की आवाज़ मेरे कानों में आती ही रही। मैंने आँखें बन्द कीं, तो वह आवाज़ और भी ज़ोर से आने लगी! मैंने कान बन्द किए तो अन्दर से एक इस ज़ोर की आवाज़ उठी कि मैं सह न सका और कोठरी से बाहर निकलकर एक दरख्त के नीचे बैठ गया। उस समय मेरा दिल ज़ोर से धक-धक कर रहा था और दिमाग घूम रहा था। मैं पागल-सा हो रहा था। वही घरघराती हुई आवाज़ मेरे कानों में गूँज रही थी। फिर क्या हुआ, यह मुझे मालूम नहीं। मुझे जब होश आया तो मैंने अपने-आपको पागलखाने के एक कमरे में पाया।

यद्यपि अब मेरा होश ठिकाने है और मैं सब कुछ देख और समझ सकता हूँ, पर वह घरघराहट की आवाज़ अब भी मेरे कानों में गूँजती रहती है। जब मैं उसे सुनता हूँ तो मेरा दिल धड़कने और सिर घूमने लगता है।

(२०)

हीरासिंह की पार्टी को उनके मद्यप्रेम की सजा मिल गई। उन सब को दो-दो साल की अधिक सजा का बोझ लादकर सुल्तानपुर जेल में वापिस भेज दिया गया। चन्दनसिंह और हीरासिंह की गवाही के बल पर रहमतुल्ला जेल से कैदियों को भगाने और उम्मेद की हत्या का अपराधी करार दिया गया और जूरी तथा जज ने एक मत होकर उसे फाँसी का हुक्म दिया। चन्दनसिंह को पुलिस ने काफी ख़ातिर से रखा, परन्तु निरपराध के गले की अन्तिम घरघराहट ने उसका पीछा न छोड़ा और दो साल तक अर्धविक्षिप्त-सी दशा में जीवित रहकर वह मर गया।

पाठकगण! अब हम इस कथा को समाप्त करते हुए आपके सामने एक प्रश्न रखना चाहते हैं—

असली अपराधी कौन था? उम्मेद, या वह सामाजिक या राजनीतिक संगठन, जिसने उसे अपराधी बनाया?